वैज्ञानिक जल-चिकित्सा

पृथ्वीके श्रेष्ठ जल-चिकित्सकोंकी पद्धतिके आधारपर
जल, मिट्टी, गर्मी, हवा, धूप, पथ्य और
उपवास आदिकी सहायतासे बिना
किसी खर्चके घर बैठे सभी
रोगोंकी चिकित्साकी पुस्तक

हिन्दी संस्करण

बंगला 'दैनन्दिन रोगेर जल-चिकित्सा' और 'पुरातन रोगेर जल-चिकित्सा'
के रचयिता एवं 'वैज्ञानिक जल-चिकित्सालय' के प्रतिष्ठाता

श्री कुलरंजन मुखोपाध्याय द्वारा लिखित

तथा

प्रो० रामइकबाल सिंह बी० ए०, बी० एल०, द्वारा अनुवादित

मूल्य

प्रकाशक—
श्री विनयभूषण मित्र,
वैज्ञानिक जल-चिकित्सालय,
११४।२ बी, हाजरा रोड, कालीघाट,
कलकत्ता ।

पुस्तक मिलनेका पता—

१। **लेखकके पास,**
वैज्ञानिक जल-चिकित्सालय, ११४।२ बी, हाजरा रोड,
कालीघाट, कलकत्ता ।

२। **हिन्दी पुस्तक एजेन्सी,**
२०३, हरिसन रोड, कलकत्ता ।

और कलकत्तेके सब प्रसिद्ध हिन्दी पुस्तक-बिक्रेता।

मुद्रक—
श्री० जगन्नाथ तिवा
जगन्नाथ प्रेस
१, मछुआबाजार स्ट्र
कलकत्ता ।

श्रीकुलरञ्जन मुखोपाध्याय प्रणीत

वैज्ञानिक जल-चिकित्सा

[विभिन्न संवाद पत्रोंकी सम्मतियां]

इस पुस्तकके बारेमें 'Amrita Bazar Patrika ने लिखा है, 'We high!y recommand this book to the people of our country, as this art of healing is inexpensive and at the same time scientific.'

Advance का कहना है, 'The anothor has explained every thing in such a way, that they may be followed even by the man in the street.'

'आनन्दबाजार पत्रिका' ने लिखा है—बहुत अध्ययन और सुदीर्घ कालकी अभिज्ञतासे ग्रन्थकारने इस पुस्तकको लिखा है। सारे देशके लोग इस पुस्तकसे लाभान्वित होंगे।

'युगान्तर' ने कहा है—अत्यन्त साधारण लोगोंको भी इस पुस्तकको सहायतासे अपने विभिन्न रोगोंकी स्वयं चिकित्सा करना सम्भव होगा।

'देश' ने लिखा है—हमारी यह धारणा है कि, इस पुस्तक को घरमें रखनेसे बहुत अवस्थामें डाक्टर बुलानेकी कोई जरूरत ही नहीं पड़ेगी।

'प्रवर्त्तक' ने कहा है—हम लोगोंको इससे बहुत फायदा हुआ है।

'नवशक्ति' ने लिखा है—यह पुस्तक गरीब देशके लिये बहुत ही फायदेमन्द होगी।

रामकृष्ण मिशनके मुख्य पत्र 'उद्बोधन' ने कहा है—हम लोग इस पुस्तकका बहुत प्रचार चाहते हैं।

पुस्तक मिलनेका पता—

वैज्ञानिक जल-चिकित्सालय,

११४-२, बी हाजरा रोड, कालीघाट,

कलकत्ता।

निवेदन

हमारे स्वर्गीय पिता कौशिकीरंजन मुखोपाध्यायने करीब २५ वर्ष पहले अमेरिकासे एक जल-चिकित्साकी पुस्तक मंगवायी थी। प्राकृतिक चिकित्सा साहित्यमें उसका आज भी अत्यन्त ऊंचा स्थान है। इसी पुस्तकके आधारपर हमारे पिताजी घरमें हम सबोंका इलाज करते। इस कारण अत्यन्त छोटी अवस्थामें ही जल-चिकित्सासे प्रत्यक्ष रूपसे परिचित होनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसके बाद अवस्था प्राप्त होनेपर संसारके प्रायः सभी प्रसिद्ध चिकित्सकोंकी पुस्तकें मैंने पढ़ीं तथा उनके प्रधान आदेशोंका विशाल पैमानेमें प्रयोग कर आश्चर्यजनक लाभ देखा। किन्तु केवल पुस्तक पढ़कर ही मैं सन्तुष्ट नहीं हुआ, बल्कि मुझे जल-चिकित्सा सीखनेकी प्राथमिक अवस्थामें अनेक अभिज्ञ और सुविख्यात जल-चिकित्सकोंकी चिकित्सा-पद्धति भी प्रत्यक्ष देखनेका अवसर मिला है।

प्राकृतिक प्रणालियोंमें पूर्ण परीक्षित और निश्चित फल देनेवाली विधियोंका ही इस पुस्तकमें समावेश कराया गया है। हर एक पद्धतिको लिखते समय क्रमानुसार जिस प्रकार प्रयोग करना चाहिये, उसे मद्द नजर रखकर शिक्षार्थियोंकी सुविधाका ध्यान रखते हुए काफी सरल भाषामें पुस्तक लिखनेका प्रयत्न किया है।

इस पुस्तकका नाम जल-चिकित्सा रखा गया है। किन्तु इसका नाम प्राकृतिक चिकित्सा रखना ही उचित था। क्योंकि जल, मिट्टी, उत्ताप, वायु, प्रकाश, पथ्य और उपवास वगैरह सभी प्रकारके प्राकृतिक उपायों द्वारा रोगोंको आरोग्य करनेका उपाय ही इस पुस्तकमें वर्णन

किया गया है। इस देशके लोग प्राकृतिक चिकित्साको जल-चिकित्सा कहनेसे समझते हैं। इसी लिये वाध्य होकर पुस्तकका यही नाम देना पड़ा है।

बंगलामें इस पुस्तकके प्रकाशित होनेके बाद बहुतसे दुःसाध्य रोगी चिकित्सा करानेके लिये हमारे पास आये। इनके अलावे बाहरके रोगियोंके बुलानेपर बंगालके विभिन्न जिलों तथा बंगालके बाहरके विभिन्न स्थानोंमें जाकर मैंने बहुतसे रोगियोंका इलाज कर उन्हें आरोग्य किया है। प्रयोग विधिकी सफलताको समझानेके लिये इन रोगियोंकी चिकित्सा और आरोग्यलाभका विवरण कुछ अंशोंमें इस पुस्तकमें दिया गया है।

इस चिकित्सा-विधिको सीखने तथा इस पुस्तकको उपयोगी बनानेमें मैंने अथक परिश्रम किया है। इस पुस्तक द्वारा सारे देशमें प्राकृतिक चिकित्सा प्रणालीके प्रसारमें यदि अणुमात्र भी सहायता मिलेगी, तो मैं अपना परिश्रम सार्थक समझूंगा।

अन्तमें प्रो० रामइकबाल सिह बी० ए०, बी० एल०, महाशयके प्रति मैं आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करता हूं। आपने बहुत परिश्रम कर इस पुस्तकका हिन्दी अनुवाद किया है। आपके इस अथक चेष्टाके बिना यह अनुवाद कभी भी ऐसा सरल और सुन्दर नहीं हो सकता था। पुस्तक संशोधनमें पर्याप्त सहायता पहुंचानेके लिये श्री पद्मादत्त त्रिपाठी एम० ए०, बी० एल०, के प्रति भी मैं समभावसे कृतज्ञ हूं।

वैज्ञानिक जल-चिकित्सालय,
११४।२ बी, हाजरा रोड,
कालीघाट, कलकत्ता।

श्रीकुलरंजन मुखोपाध्याय

विषय-सूची
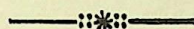
विषय			पृष्ठ संख्या
औषधिकी विष-क्रिया	...	...	१
रोग और उसका प्रतिकार	...	...	१२
कोष्ट-शुद्धिके उपाय	...	...	२४
शरीरको रोगमुक्त करनेके उपाय		...	४०
पानी पिला कर बीमारी दूर करना		...	६७
स्नान द्वारा रोग दूर करना	...	...	७४
रोग किस प्रकार दूर होते हैं	...	...	९०
कमजोर रोगीका इलाज	...	...	९६
रोग-चिकित्सामें पानीके दूसरे उपयोग		...	१२०
रोगोंमें मिट्टीका प्रयोग	...	...	१४४
बीमारीमें सावधानीकी आवश्यकता		...	१६०
खाद्य-चिकित्सा	...	...	१७३
रोग-चिकित्सामें हवा	...	...	१८८
धूप-चिकित्सा			१९७
गरम और शीतल जलकी समस			२०७
उपवाससे आरोग्य			२११
व्यायाम और मर्दन			२१५
स्वास्थ्य किस ओर ?	...	...	२२०

मातृ चरणेषु

वैज्ञानिक जल-चिकित्सा

प्रथम अध्याय

औषधिकी विष-क्रिया

[१]

एक बार महात्मा गान्धीने दुःखके साथ कहा था कि, जितनी दूरकी चीजोंके विषयमें हम लोग जानकारी रखते हैं, उतनी नजदीककी चीजोंकी नहीं। इङ्गलैण्डके नद-नदी और पहाड़ोंके नाम तो हमें याद हैं, किन्तु अपने जिलेका कुछ भी ज्ञान नहीं है। चन्द्र-सूर्य-ग्रहोंकी तो हम लोग बहुत खबर रखते हैं, पर अपने पासके शरीरकी चीजोंका हमारा ज्ञान अधूरा है।

दुनियांमें इस शरीरसे बढ़कर अधिक मूल्यवान पदार्थ कुछ भी नहीं हैं। हम सबकी यही इच्छा रहती है कि, हम दीर्घजीवी बनें। पर यह किस प्रकार सम्भव है—हमें पता नहीं। जो आदमी जिस यन्त्रको चलाता है, उसके सम्बन्धमें बहुत कुछ जानकारी तो रखता है, किन्तु अपने शरीररूपी यन्त्रके सम्बन्धमें हमारा ज्ञान अधूरा है। हमें इसका पता नहीं कि, शरीर कैसे स्वस्थ रह सकता है। रोग दूर करनेके लिये प्रकृतिने क्या व्यवस्था कर रक्खी है, इसका भी तो हमें

पूरा ज्ञान नहीं। सच पूछा जाय तो शरीरके सम्बन्धमें हम लोग एक प्रकारसे असहाय हैं।

बीमारीकी हालतमें हम लोग अपनेको सबसे असहाय पाते हैं। उस समय हम अपनी सहायता करने लायक कुछ भी नहीं कर सकते। जिस प्रकार अपने भीतरके भगवानको भूल कर हम बाहर देवता ढूंढते फिरते हैं, उसी प्रकार हम अपनी भीतरी प्रकृतिपर निर्भर न रह कर रोगकी अवस्थामें उसका निदान बाहर खोजने लगते हैं।

किन्तु भगवानने इस शरीरकी रचना इस प्रकारकी है कि, आत्म-रक्षा और रोग-निवारणकी सारी व्यवस्था इसके भीतर ही मौजूद है। जिस प्रकार हमारी आंख, कान, नाक आदि इन्द्रियां हमेशा हम लोगोंका पहरा दिया करती हैं, उसी प्रकार हमारे रक्तके सफेद कीटाणु शिकारी कुत्तेकी तरह शिकारकी तलाशमें लगातार चक्कर लगाया करते हैं। किसी रोगके कीटाणुके शरीरमें प्रवेश करनेके साथ ही ये उसे धर दबोचते हैं। जो कूड़ा-कर्कट हमारे शरीरमें जमा होकर रोगोंकी सृष्टि करता है, उसे निकाल बाहर करनेके लिये प्रकृतिने बहुतसे रास्ते बना रखे हैं और उसका नाश करनेके लिये उसने बहुत सी व्यवस्थायें भी कर रखी हैं। प्रकृति जिन रास्तोंसे अपनेको भारमुक्त करती है, मल निकालनेवाले उन मार्गोंको साफ कर और उसके आत्म-रक्षा-मूलक यन्त्रोंको मजबूत बना कर ही हम लोग सब तरहके रोगोंसे छुटकारा पा सकते हैं।

किन्तु हम लोग लड़कपनसे ही सुनते आ रहे हैं कि, दवासे रोग छूटता है। अतः बीमार होते ही हम लोग औषधिका सेवन आरम्भ कर देते हैं। हम लोग औषधिके बारेमें कुछ भी नहीं जानते। हमें यह भी पता नहीं कि, दवा विष है या अमृत। व्यवहार की जानेवाली दवा रोगको दूर करती है या उसे दबा देती है—हमें यह भी मालूम नहीं। दुरूह लैटिन भाषामें दवाइयोंके नाम देख लेनेसे ही हम सन्तुष्ट हो जाते हैं।

जिसे हम नहीं समझते उसीके प्रति हमारा अधिक विश्वास होता है। सीधे-सादे विश्वासी लोग जिस प्रकार बिना समझे-बूझे गण्डे-ताबीज लिया करते हैं, ठीक उसी प्रकार केवल विश्वासके ही कारण हम लोग औषधियोंका व्यवहार करते हैं।

किन्तु इस जमानेमें औषधियोंका व्यवहार करना भी आसान नहीं है। केवल इच्छा करने ही से हम चिकित्सा आरम्भ नहीं कर सकते। किसी बड़े रोगकी चिकित्सा शुरू करनेमें जितने खर्चकी आवश्यकता होती है, वह साधारण आदमियोंके लिये एक प्रकारसे असम्भव है।

किसी बड़ी बीमारीके आरम्भ होते ही डाक्टर लोग दवा देना शुरू नहीं करते। पहले वे खूनकी परीक्षा करते हैं। हो सकता है कि, खूनमें कुछ रोगके कीटाणु न पाये जायं। तब टट्टी, पेशाबकी जांच शुरू होती है। कभी-कभी थूककी जांच करानेकी भी आवश्यकता पड़ती है। पर एक आदमीके रक्त आदिकी परीक्षा करनेपर भी भिन्न-भिन्न डाक्टर अपनी अलग-अलग राय देते हैं। इसके फलस्वरूप तीन-चार बार परीक्षा कराये बिना ठीक-ठीक रोगका पता हो नहीं लगता। कई बार तो इतनेसे भी काम नहीं चलता। कभी-कभी तो दो-तीन बार 'एक्स-रे' से फोटो लेनेकी आवश्यकता पड़ती है। इतने बड़े बखेड़ेके बाद यदि रोगीके पास धन और उसकी परमायु हो, तब जाकर कहीं दवा लाभ पहुंचाती है।

दवा पाकर रोगी समझता है कि, मैंने अमृत पा लिया और इससे मेरा स्थायी कल्याण होगा। पर क्या वह सचमुच अमृत लाभ करता है? क्या सचमुच इससे उसको स्थायी लाभ होता है? रोगसे छुटकारा पानेके लिये साधारणतया, पारा, कास्टिक, आइडिन, अहिफेन, कुनाइन, सलफ्यूरिक एसिड (तेजाब) आदि मारात्मक विषोंका व्यवहार किया जाता है। तो क्या ये अमृत हैं? इन विषोंके व्यवहारसे क्या सचमुच ही रोगीका कल्याण होता है? इस प्रश्नका उत्तर डाक्टरगण ही दें।

प्रोफेसर एलोंज़ो क्लार्क एम० डी० (Pro. Alonzo Clark, M.D.) ने कहा है कि, "हमारी सभी आरोग्यकारी औषधियां विष हैं और इसके फलस्वरूप औषधिकी हर एक मात्रा रोगीकी जीवनी शक्तिका ह्रास करती है" (F. E. Bilz—The Natural Method of Healing, P. 981)।

डा० ट्रेल, एम० डी० ने कहा है—"औषधियों द्वारा रोग निवारण की प्रत्येक चेष्टा मनुष्यके शरीरके विरुद्ध युद्धके सिवा और कुछ नहीं है" (K. L. Sarma—Judgement on Medicine, P. 13)।

दवा समझ कर रोगी विष पान करता है, किन्तु प्रकृति इसमें प्रबल बाधा उपस्थित करती है। शरीरके तोरण-द्वारपर भगवानने जीभको सदा जाग्रत प्रहरीके रूपमें बैठा रक्खा है। उसे धोखा देकर किसी चीजके भी भीतर घुसनेका उपाय नहीं है। किसी भी अवांछित चीजके मुखमें आते ही वह थुत्कार कर उसे बाहर फेंक देती है।

किन्तु विष-प्रयोग करनेवाले विष देनेवालेकी ही तरह आते हैं। भेंड़की खाल ओढ़े बाघकी तरह कड़ुए विषके ऊपर चीनीका आवरण देकर भगवानके जीभ-रूपी इस पहरेदारको वे धोखा देते हैं।

कभी-कभी तो डाकूकी भांति रोगीपर आक्रमण होता है। प्रकृति विष ग्रहण करना नहीं चाहती। सती नारीकी तरह वह प्राण-पणसे विद्रोह करती है, पर उसे सफलता नहीं मिलती। जबर्दस्तीसे प्रकृति देवीके साथ बलात्कार किया जाता है।

पुरानी पद्धतिके चिकित्सकगण कहते हैं कि, रक्तमें कीटाणु होते हैं। इसलिये रक्तमें विष डाल कर इन कीटाणुओंको मार डालो। यह हो सकता है कि उनकी औषधिसे रोगके कीटाणु मरें, पर विषको खूनमें मिला देनेपर रक्तमें फैले हुए वह केवल रोगके कीटाणुओंका ही नाश नहीं करती। औषधिका विष तो जिस परिमाणमें रोगके कीटाणुओंका

नाश करता है, उसी परिमाणमें वह रोगीकी जीवनी शक्तिका भी ह्रास करता है।

[२]

शरीरकी इतनी अधिक क्षति पहुंचा कर भी क्या औषधियां रोग दूर करती हैं? डाक्टरोंकी प्रिय दवाइयां आइडिन, बेलेडोना, आर्सनिक, पारा, गन्धक, अफीम आदि ये सचमुच रोगका निवारण करती है? हम लोग देखते हैं, रोग होते ही डाक्टर आकर इन दवाइयोंका प्रयोग करना शुरू कर देते हैं। तुरत पेट दर्द मिट जाता है, ज्वर रुक जाता है, फोड़ा बैठ जाता है, घाव सूख जाता है, किन्तु रोगका मूल कारण क्या इससे दूर हो जाता है? जब हमारे शरीरमें अधिक दूषित पदार्थ जमा हो जाता है, उस समय प्रकृति व्रण (फोड़ा), बुखार, सर्दी, पेट दर्द आदिकी सृष्टि कर उस विषको शरीरसे बाहर निकालनेकी चेष्टा करती है। प्रकृतिकी इस चेष्टाका ही नाम रोग है। शरीरको इस प्रकार हल्का करनेकी प्रकृतिकी चेष्टाको औषधि अपने जोरसे रोक देती है। इसीसे रोगका प्रकाश बन्द हो जाता है, पर उसका नाश नहीं होता। दवासे रोग भीतर ही भीतर केवल मात्र दबा दिया जाता है। कुछ दिन तक रोग सुप्त-सा रहता है, इसके बाद वह रोग जो आसानीसे नष्ट हो सकता था—भयानक रूपमें या सौगुना अधिक शक्तिशाली होकर किसी दूसरे रूपमें फिर उभड़ उठता है।

पारा, शीशा और जस्ता आदिसे तैयार जहरीली दवा चर्म रोगोंमें व्यवहार की जाती है, किन्तु रोग उससे दबते नहीं। पीछे वही असाध्य रोग बन पेटका रोग, सिर दर्द आदि रूपमें उपस्थित होता है।

अफीमके साथ अन्यान्य विषाक्त औषधियोंसे डाइरिया शान्त किया जाता है। इस दवासे अंतड़ियां (intestine) बेकाम हो जाती हैं और उनकी क्रमिगति (peristaltic action) नष्ट हो जाती है। इसी

गतिके कारण मलका वेग होता है। इस गतिके नष्ट हो जानेके कारण असाध्य कोष्ठवद्धता उत्पन्न हो जाती है। फिर उससे छुटकारा पाना मुश्किल हो जाता है।

बुखार आते ही दवा खिला कर उसे रोक दिया जाता है, किन्तु वही फिर चर्मरोग, हृदयकी दुर्बलता और मानसिक रोगोंके रूपमें लौट आता है।

बार-बार औषधि सेवनसे रोगको दबा देनेके फलस्वरूप अन्यान्य असाध्य बीमारियाँ उत्पन्न होने लगती हैं।

प्रमेह रोग (Gonorrhoea) रोक देनेसे अण्डकोषकी वृद्धि होती है। उपदंश (Syphilis) को दवासे दबा कर रोगी समझता है कि, मैं स्वस्थ हो गया, किन्तु पीछे वही वातरोग या पक्षाघातके रूपमें प्रकट हो जाता है।

बच्चोंकी निकसारी, डिप्थिरिया, मेनिन-जाइटीज (गर्दन तोड़) आदि रोगोंको दवा देनेसे कैंसर, यक्ष्मा और मूत्राशय सम्बन्धी पीड़ा आदिके रूपमें वे लौट आते हैं (Kilka—Natural Ways of Cure, P. 15-23)।

डा० हैनीमैनने कहा है कि, एलोपैथीके डाक्टर लोग अनिद्रा, पतले दस्त और दर्द आदिमें अफीमका व्यवहार करते हैं। आरम्भमें इससे साधारण लाभ होनेपर भी पीछे अनिद्रा और दर्द अधिक बढ़ जाते हैं (Organon, P. 59)।

बीमार होनेपर रोगी डाक्टरको बुलाता है। डाक्टर आकर दवा देता है और जादू मन्त्रकी तरह रोगके लक्षण गायब हो जाते हैं। मूर्ख रोगी समझता है कि, मैं चंगा हो गया। साक्षात् धन्वन्तरि ही डाक्टरके रूपमें आये थे। किन्तु डाक्टर उसका दाहिना हाथ फैला कर मन ही मन हंसता है—ऊपर भगवान भी हंसते हैं।

एलोपैथी चिकित्सकोंमें भी एक नयी चेतना आ रही है। उनमें से बहुतसे सन्दिग्ध हो उठे हैं और उन्होंने एलोपैथीके आधारभूत मूल सिद्धान्तोंकी यथार्थतापर भी सन्देह करना शुरु किया है। कुछने तो खुलेआम इसके खिलाफ बगावत भी कर दी है।

डा० नयेसने (Dr. Nayes) कहा है, "मेरी धारणा है कि, यह व्यवसाय—यह कला (art), जिसको भूलसे विज्ञान कहा जाता है, वह मौलिक भ्रान्त नीतिका अनुसरण करनेके सिवा और कुछ भी नहीं है (is none other than a practice of fundamental fallacious principles)। इससे किसीका कुछ भी उपकार नहीं होता। यह व्यवसाय नैतिक दृष्टिसे अपराध (morally wrong) है और देहके लिये हानिकर है" (Judgement on Medicine, P. 14)।

ब्रिटिश मेडिकल एसोसियेशनके उपसभापति सर जेम्स बारने कहा है, "The treatment of disease is not a science, nor even a refined art, but a thriving industry—रोगकी चिकित्सा-विधि विज्ञान नहीं है, कोई विशेष परिमार्जित कला भी नहीं है, बल्कि यह एक फायदेमन्द व्यवसाय है" (Ibid, P. 9)।

जार्ज बर्नाड शाने क्या कहा है—सुनेंगे? उन्होंने कहा है, "It is not a profession, but a conspiracy—यह व्यवसाय नहीं है—यह कुछ आदमियोंका एक षड्यन्त्र है।"

[३]

यदि यह ठीक-ठीक मालूम पड़ जाय कि, डाक्टरने रोगका जो निदान किया है, वह सत्य है, तो औषधिका व्यवहार करना भी ठीक होता है। अधिकांश लोग रोगकी पीड़ाके कारण उसके अन्तिम परिणामके सम्बन्ध-में सोच भी नहीं सकते। वे शीघ्रातिशीघ्र आराम होना चाहते हैं, पर

रोगका ठीकसे निदान हो तब न उसका प्रतिकार होगा! रोगका निदान कराना कितना मुश्किल है, यह तब मालूम होता है, जब कोई किसी साधारण जटिल रोगीको लेकर शहरके एक छोरसे दूसरी छोर तकके सभी डाक्टरोंके यहां घूम आये। तौभी प्रत्येक डाक्टर एक-एक नये रोगका नाम बताये तो आश्चर्य नहीं। अमेरिकाके सुविख्यात 'न्यूयार्क वर्ल्ड्' (New york world) पत्रिकाके सम्पादक एक बार एक पुरानी बीमारी वाली औरतको रोग-परीक्षाके लिये अलग-अलग कई डाक्टरोंके पास ले गये। एक डाक्टरने उसकी अच्छी तरहसे परीक्षा करके कहा कि, वह स्नायविक कमजोरीसे भुगत रही है। दूसरेने कहा कि, मलेरिया रोग है, तीसरा बोला—स्नायु शूल, चौथे डाक्टरने कहा कि डिस्पेपसिया, पांचवें ने कहा—खूनकी कमी, छठें ने कहा—कठिन आंख की बीमारी और सातवें डाक्टरने कहा कि, रोगिणी पाकस्थलीकी बीमारीसे पीड़ित है। इनमें छ डाक्टरोंने अलग-अलग प्रेसक्रिपशन लिख दिये थे और कहा था कि, तुरत रोग आराम हो जायगा। इस बातपर उस समय अमेरिकामें भारी आन्दोलन हुआ था (M. Platon—The New Curative Treatment of Disease, Vol. I., P. 359)।

बड़े-बड़े अस्पतालोंके चीर-फाड़की रिपोर्टोंसे इसका कुछ-कुछ पता चलता है कि, डाक्टरोंकी रोग-निर्णय-प्रणाली कितनी अनिश्चित है। अमेरिकाके एक प्रसिद्ध अस्पताल (The Massachussetts General Hospital) के चीड़-फाड़ विभागके प्रधान मि० क्यावटने कहा है, "एक हजार लाशोंकी परीक्षा करके यह देखा गया है कि, सैकड़े ५३ रोगियोंका तो ठीक-ठीक रोग-निदान हुआ था, बाकी ४७ सैकड़े रोगियों-का निदान गलत था" (Henry Lindlahr, M. D.—Practice of Natural Therapeutics, P. 34-38)।

इन ४७ प्रतिशत रोगियोंको भी तो दवा ही दी गयी थी, पर उसे औषधि न कहकर विष कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। क्योंकि गलत दवा और विष देनेमें बहुत कम अन्तर है। इससे मृत्यु होनी कोई असम्भव नहीं। अतएव ये अभागे जो अकाल कालसे कवलित हुए, उन्हें रोगने ही नहीं मारा, डाक्टरगण भी उनकी मृत्युके लिये समान भावसे दोषी हैं।

तब भी अभिज्ञ चिकित्सकोंके हाथोंसे ही यह मृत्यु हुई है। अनुभवहीन डाक्टरोंके हाथों हो सकता है कि, मृत्यु-संख्या और भी अधिक हो। पर धीरे-धीरे वे अनुभवी हो जाते हैं—'शतमारी भवेत वैद्यः, सहस्रमारी चिकित्सकः।' अतः डा० मेसन गुड जब कहते हैं, "पृथ्वी पर डाक्टरोंने जितने लोगोंको मारा है, युद्ध, दुर्भिक्ष तथा महामारी आदि समस्त द्वारा मिल कर भी उतने लोग नहीं मरे हैं, तब हम लोग उसका कोई प्रतिवाद भी नहीं कर सकते हैं" (Mahatma Gandhi—Guide to Health, P. 5)।

इन्हीं कारणोंसे डा० फ्रांसिस गुडस् वेल, एम० डी०, ने कहा है, "वर्तमान डाक्टरी व्यवसाय जिस पद्धतिपर चालू है, उससे संसारका जितना उपकार हुआ है, उससे कई गुना अधिक क्षति हुई है।"

डा० जेम्स जौनसन, एम० डी०, एफ० आर० एस० ने कहा है, "अपने दीर्घजीवनके अनुभवके आधारपर मैं अन्तःकरणसे यह कह सकता हूं कि, यदि पृथ्वी पर एक भी डाक्टर, अस्त्र-चिकित्सक, औषधि विक्रेता तथा एक बूंद भी दवा नहीं रहती, तो जिस प्रकार पृथ्वीपर आज रोग और मृत्युका प्रादुर्भाव है—वह अपेक्षाकृत बहुत कम होता।"

इसी कारण डा० ट्रेल दुखके साथ कहते हैं, "यदि पृथ्वीपर रोग-निवारणके लिये कोई भी व्यवस्था नहीं रहती, तौभी मैं किसीको भी

दवा नहीं देता, क्योंकि यदि मैं अच्छा नहीं कर सकता, तो कमसे कम बुरा करनेसे अलग रहता" (Judgement on Medicine, P. 13)।

[४]

इसी बहुधा निन्दित चिकित्सा-प्रणालीकी प्रतिक्रियाके फलस्वरूप युरोपमें होमियोपैथी चिकित्साका आविर्भाव हुआ। प्राकृतिक चिकित्साके साथ यह इसी कारण चल सकती है कि, यह रोगको दबाती नहीं है। इस प्रणालीमें काफी दिन बाद बहुत ही थोड़ी मात्रामें दवा दी जाती है। इसी कारण बिना दवा दिये रोग निवारणकी प्राकृतिक चिकित्सा प्रणालीका होमियोपैथी प्रथम सोपान कही जा सकती है।

किन्तु होमियोपैथी चिकित्सा-प्रणालीका मूल सूत्र ही यह है कि, जो दवा स्वस्थ शरीरपर जिन रोगोंका लक्षण प्रकट करती है, वही रोगके लक्षण यदि किसी रोगीमें हों तो उसी औषधिसे उस रोगका निराकरण होगा। विषके सिवा और कोई चीज रोगका लक्षण नहीं प्रकट करती। इसलिये उनकी सब औषधियाँ ही विष हैं। अनेकों बार रोगके लक्षण समझमें नहीं आते। अथवा एक औषधिको बीसों बीमारियोंके लक्षणोंमें प्रयोग करनेकी व्यवस्था है। जो लक्षण रोगीके शरीरमें नहीं है—तब यदि होमियोपैथी चिकित्सा-विज्ञान सत्य है, तो उस दवाके प्रयोगसे रोगीके शरीरमें वही रोगके लक्षण उत्पन्न होंगे। अतएव भूल चिकित्सा से रोगीका बड़ा अनिष्ट होगा। कुछ लोग समझते हैं कि, गलत दवासे कोई बुराई नहीं होती। किन्तु यह बात ठीक नहीं। होमियोपैथी दर्शनके लेखक डा० कैण्टने कहा है, "That what is prone to cure is prone to kill—जिससे रोग दूर हो सकता है, उससे मनुष्यकी मृत्यु भी हो सकती है।"

आजकल तो अत्यन्त साधारण लोग भी होमियोपैथिक चिकित्सा करते हैं, किन्तु इसके समान मुश्किल और कोई चिकित्सा प्रणाली नहीं है। यह एलोपैथीसे कहीं अधिक मुश्किल है। इसके द्वारा रोगके लक्षण

निश्चित करना जितना कठिन है औषधिकी मात्रा स्थिर करना और भी मुश्किल है। डा० हैनीमेनने भी कहा है कि, केवल अनुभवके द्वारा ही इसकी मात्रा स्थिर की जा सकती है (Organon, 278)। कई कई दिनों बाद अत्यन्त थोड़ी मात्रामें दवा देना ही इस प्रणालीका नियम है। पर, जो लोग जानकार नहीं हैं, वे एलोपैथीकी ही तरह बार-बार दवाइयोंका प्रयोग करते हैं। रोगीके लिये यह एलोपैथीकी भी अपेक्षा अधिक हानिकर सिद्ध होती है (Ibid, 276)। क्योंकि, होमियोपैथी दवाकी प्रत्येक बूंद विष है।

कुछ लोग होमियोपैथी दवाका एक बक्स घरमें रख लेते हैं। पैसेसे खरीदी हुई चीजको काममें लगानेकी उनकी स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। किन्तु प्रयोगकी विधिको वे लोग अच्छी तरह जानते नहीं। इसलिये रोगसे चंगा करनेकी अपेक्षा वे लोग प्रायः रोगोंकी सृष्टि करते हैं।

'नीम हकीम खतरे जान' के अनुसार इन अनजान लोगोंके हाथ यह बक्स धीरे-धीरे आत्महत्या और नरहत्याका एक यन्त्र बन जाता है। बन्द तालाबके पास रहनेवालेके शरीरमें जिस प्रकार मच्छड़ोंके डंकका विष शरीरमें धीरे-धीरे प्रवेश करता जाता है, साधारण लोगों द्वारा पैसा खर्च कर होमियोपैथी दवाइयोंका बक्स रखना ठीक वही काम करता है।

डाक्टर लोग औषधियों द्वारा जो लाभ पहुंचाना चाहते हैं, वही लाभ एक बूंद भी दवा खिलाये बिना तथा किसी प्रकार रक्तको विषाक्त किये बगैर केवल जल, मिट्टी, ताप, वायु, रोशनी और पथ्य द्वारा प्रकृतिको सहायता पहुंचा, आसानीसे प्राप्त किया जा सकता है।

गांवके लोग इस बातका अफसोस करते हैं कि, बीमारीके समय उन्हें दवा नहीं मिलती। शहरके गरीबोंकी भी यही शिकायत है। किन्तु यदि उन लोगोंको यह मालूम होता कि, उनके पास ही रोग अच्छे करनेके कितने साधन हैं, तो उन्हें डाक्टर बुलानेकी कभी आवश्यकता नहीं पड़ती।

द्वितीय अध्याय

रोग और उसका प्रतिकार

[१]

ग्रहण और परित्यागपर ही हमारा शरीर निर्भर है। अन्न-जल ग्रहण कर हम शरीरको पुष्ट करते हैं, और खाये पदार्थसे नींबूकी तरह रस निचोड़ बाकीको निकाल फेंकते हैं। खाद्य पदार्थ अपने अमृतरूपी रसको शरीरको दान कर पाकस्थली (stomach), क्षुद्रान्त (small intestine) और वृहद्यन्त्र (colon) की राह शरीरसे बाहर निकल जाता है।

इस ग्रहण और परित्यागकी सफल क्रियापर ही हमारा स्वास्थ्य निर्भर करता है।

हमारी अन्तड़ियोंकी दीवालें सदा खाद्यपदार्थसे रस खींचा करती हैं। अन्न ले जानेवाली नली (alimentary canal) के भीतरी भागके साफ रहनेपर वह विशुद्ध नये खाये हुए पदार्थसे अविकृत रस खींच कर देहको लावण्य, आनन्द, कान्ति और पुष्टिसे भर देती है। किन्तु जब आंतोंमें मल जमा होकर विकृत होने लगता है, तब प्रकृति जमा हुए मलसे अमृतके स्थानपर विप ही खींचने लगती है।

बन्द हुए वृहद्यन्त्र (colon) द्वारा शरीरमें सबसे अधिक विष खींचा जाता है। मल केवल खाये हुए अन्नकी सीठी ही नहीं है, बल्कि सच पूछा जाय तो, अधिकांश मल यन्त्र में ही उत्पन्न होता है (F. R. Winton, M. D.—Human Physiology, P. 225)।

वृहद्‌यन्त्रकी दीवालसे सदा दूषित पदार्थ निकलता रहता है। इसी प्रकार छोटी अन्तड़ियोंसे भी ऐसा पदार्थ निकला करता है। यही मलका एक विशेष भाग है (Ernest H. Starling, M. D.—
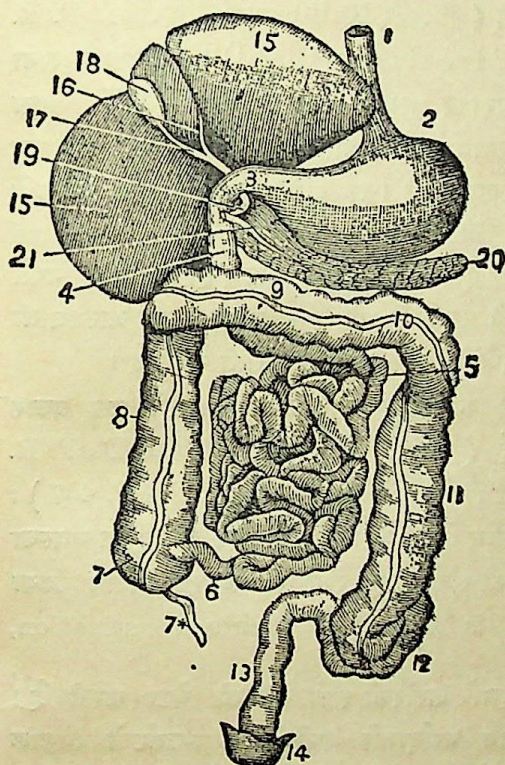
पाकाशय (The Digestive Organs)

[चित्र-परिचय— (1) गले की नली, (2) पाकस्थलीका ऊपरी मुख, (3) पाकस्थलीका नीचेका मुख, (4) क्षुद्रान्तोंका ऊपरी भाग (Duodenum) (5, 6) क्षुद्रान्तों की कुण्डली का आवर्त्त (convolutions of small intestines) (7) अन्धान्त्र (cœcum), (7*) अन्त्र-पुच्छ, (8) उर्द्ध्वगामी वृहदन्त्र, (9, 10) अनुप्रस्थ वृहदन्त्र, (11) निम्नगामी वृहदन्त्र, (12) द्विवक्रभांज, (13) सरलांत्र अन्त्रका निचला भाग, (14) मलद्वार, (15, 15) यकृतका ऊपरी भाग ऊंचा करके दिखाया गया है, (16) यकृत-प्रणाली—इसी राहसे पित्त यकृतसे होकर छोटी आंतोंके ऊपरी भागको जा पहुंचता है, (17) पित्तकोष-प्रणाली, (18) पित्तकोष, (19) पित्तबहा नली, (20) क्लोम (pancreas), (21) क्लोम नली ।]

F. R. C. P.—Principles of Human Physiology, P. 630)। इसके अलावा मलमें असंख्य कीटाणु होते हैं। बड़ी आंतमें इतने कीटाणु होते हैं कि, शुष्क मलके ¼ भागसे लेकर ⅓ भाग केवल इन्हीं कीटाणुओंसे गठित होता है (W. D. Halliburton, M. D., F. R. C. P.—Handbook of Physiology, P. 481)। मलके पुराना पड़ते ही ये कीटाणु उसे सड़ाकर अत्यन्त विषैला बना देते हैं। इस कारण यदि यह मल यथासमय शरीरसे बाहर न निकले, तो शरीरका परित्यक्त तथा आंतोंसे उत्पन्न विष फिर शरीर ग्रहण करने लगता है (Gottwald Schwary, M. D.—Disease of the Colon and Rectum, P. 33) और इसके फलस्वरूप अपने ही शरीरके विषसे अपना ही रक्त विषाक्त होने लगता है और इस प्रकार यह आत्मघाती (self-poisoning) विषैली क्रिया लगातार चलती रहती है।

किसी-किसीने कहा है कि, हमारे अधिकांश रोग ही इस प्रकार कोष्टवद्धतासे शुरू होते हैं (W. D. Halliburton, M. D., F. R. C. P.—Handbook of Physiology, 33rd edition P. 407)। और कोई कोई कहते हैं, अन्न ले जानेवाली नलीकी इस दोषयुक्त अवस्था के साथ ही हम लोगोंके फी सैकड़ा ९० रोगोंका सम्बन्ध निर्णय किया जा सकता है (J. Ellis Barker—Chronic constipation, P. 49)।

पर प्रकृति सदा ही हमारे शरीरकी रक्षा करनेकी चेष्टा करती है। जब प्रकृति शरीरके प्रधान नर्मदानसे शरीरके कूड़ा-कर्कटको निकाल फेंकनेमें असमर्थ हो जाती है, तब पसीना, पेशाब और निश्वासके द्वारा उसी विषको बाहर निकाल देना चाहती हैं तथा लिवर आदि यन्त्रोंकी सहायतासे उसे भस्म कर डालनेकी चेष्टा करती है (Gottwald Schwary, M. D.—Diseases of the Colon and Rectum P. 33)। प्रकृति इसमें अधिकांश सफल होती है अन्यथा इस पापके भारको लेकर हम लोग अधिक दिन जीवित नहीं रह सकते।

किन्तु शरीरके प्रधान नालेकी राह जो कूड़ा-कर्कट निकलता, उसे दूसरे मार्गसे निकाल बाहर करना या दूसरी तरहसे उसे जला डालना शरीरके दूसरे यन्त्रोंके लिये अत्यन्त कठिन हो जाता है। क्योंकि हर एक यन्त्रके शक्तिकी एक सीमा है। इस प्रकार अतिरिक्त काम करनेके फलस्वरूप वे क्रमशः दुर्बल होते जाते हैं और उनकी सफाई करनेकी शक्ति (eliminative function) धीरे-धीरे क्षीण होती जाती है। तब दूषित पदार्थ शरीरमें ही स्थान कर लेता है और इस प्रकार शरीरके भीतर विजातीय द्रव्य (foreign matter) दूषित परिस्थिति उत्पन्न करने लगता है।

किन्तु शरीरका समस्त दूषित पदार्थ या विष केवल आंतोंसे ही नहीं आता। हमारे शरीरके नष्ट अणुकोष (cells) भी यदि यथा समय शरीरसे बाहर न निकल सकें, तो ये भी देहमें जमा होने लगते हैं। अनेकों बार खाया हुआ भोजन पाकस्थली या छोटी आंतोंमें बहुत समय तक पड़े रहनेके कारण कुपित (fermented) हो उठता है। इससे शरीर में विष प्रवेश करने लगता है। फुसफुस, मूत्रयन्त्र (kidney) तथा रोमकूपोंकी सहायतासे प्रति दिन यह विष रोज बाहर होता रहता है, यदि वह किसी कारणसे बाहर न निकल सके, तो शरीरमें विभिन्न जाति के विष इकट्ठे होने लगते हैं। इस शरीर रूपी मशीनके चलनेसे भी हमेशा तरह तरहके विष उत्पन्न होते हैं। शरीरमें और भी कितने ही प्रकारसे विषका संचार होता है। यदि यथा समय ये सब बाहर न होते रहें, तो शरीरमें ही अपना अड्डा बना लेते हैं।

अनेकों बार काफी समय तक शरीरमें इस प्रकारके विष इकट्ठे होते रहते हैं। लोग उस समय यह नहीं समझते कि, उनके शरीररूपी महलके भीतर गुप्त रूपसे बारूद इकट्ठी हो रही है। बहुत दिनोंतक तो यह सुप्त रहती है। लोग उस समय सोचते हैं कि, वे खूब स्वस्थ हैं।

किन्तु शरीरका यह विष एक दिन अचानक बारूदकी तरह भभक उठता है।

शरीरमें इस विषके सहन करनेकी एक सीमा होती है। जिस दिन इस सीमाका अतिक्रमण होता है—उसी समय विभिन्न रोग उत्पन्न होने लगते हैं।

सच पूछा जाय तो every illness is the passing of the toleration point for internal intoxication—प्रत्येक रोग शरीरके विष सहनेकी सीमाके अतिक्रमणका दूसरा नाम है (William Howard Hay, M. D. – Health via Food, P. 32)।

[२]

हमारे शरीरमें जो खूनका दौरा होता रहता है, उसीके द्वारा हरेक अंगकी पुष्टि (nutrition) होती रहती है। आंख, दांत, हृत्पिण्ड, फुसफुस, लिवर यहांतक कि शरीरके ये सभी तन्तु इसी खूनके दौरेसे ही अपने गठनकी सामग्री ग्रहण करते हैं। किन्तु जब खून विषाक्त हो उठता है, तब ये केवल पुष्टि ही ग्रहण नहीं करते बल्कि साथ ही साथ विष भी लेते जाते हैं।

साधारणतया दुर्बल अंगोंमें ही रोग पैदा होते हैं। अगर किसी जंजीरको दोनों ओरसे खींचा जाय, तो वह कमजोर जगहसे ही टूटेगी। इसी प्रकार खूनके दौरानमें जो विष चक्कर लगाता है, साधारणतया वह कमजोर अंग पर ही वार करता है। इसी प्रकार शरीरमें आंखोंकी बीमारी, दांत-दर्द, चर्म-रोग, हृद्-रोग, स्त्री-रोग, न्यूमोनिया, ब्रांकाइटिश इत्यादि पैदा होते हैं।

केवल शरीरकी दोषयुक्त अवस्थासे ही रोग नहीं पैदा होते। प्रायः हमेशा इसके पीछे प्रकृतिके घरकी सफाई और आत्मरक्षाके लिये एक व्यवस्था छिपी रहती है। जब शरीरमें इतना कूड़ा-कर्कट भर जाता है

कि जिन्दगी खतरेमें पड़ जाती है। उस समय प्रकृति विभिन्न तरीकोंसे शरीरको रोग-मुक्त करनेकी चेष्टा करती है। इस हालतमें कभी कभी प्रकृति शरीरमें बहुत ज्यादा गरमी पैदा करती है और हम लोग इसीको बुखार कहते हैं। It is the result of a curative effort on the part of the body—प्रकृतिके शरीरको निरोग करनेकी चेष्टाको ही ज्वर कहते हैं (J.H. Kellogg, M. D.—Rational Hydrotherapy, P. 90)। ज्वर पैदाकर प्रकृति शरीरके दूषित पदार्थोंको जला डालती है; या जलाकर उन्हें शरीरके विभिन्न भागोंसे बाहर निकाल फेंकती है। बुखारकी हालतमें रोगीकी साँससे बदबू निकलती है; क्योंकि प्रकृति अधिकांश विष निश्वास द्वारा बाहर कर देती है। इसी कारण रोगीकी पेशाब गदली, पीली तथा दुर्गन्धि युक्त होती है। रोगीके शरीरसे एक प्रकारकी बदबू निकलती है। इन सभी बातोंसे यही सिद्ध होता है कि प्रकृति घरकी सफाई कर रही है। आखिरमें जब काफी पसीना निकलता है, तो हम समझते हैं कि प्रकृति अपने काममें सफल हुई है। इस प्रकार जब प्रकृति शरीरमें जमा हुए विषको बाहर निकालनेमें सफल होती है, तो बुखार अपने आप उतर जाता है।

कभी कभी प्रकृति बिलकुल दूसरे प्रकारसे शरीरकी गन्दगीको बाहर निकाल देना चाहती है। जब पेड़ूमें दूषित मल भर जाता है और जिसके फलस्वरूप रक्त दूषित होने लगता है, तो प्रकृति बहुधा नीचेकी मोरीसे दूषित पदार्थको बाहर कर देती है। इसीको हम लोग डाइरिया, आँव आदि कहते हैं।

कभी कभी प्रकृति शरीर-स्थित विषको कफ आदिके रूपमें बाहर निकालना चाहती है। उस समय सर्दी आदि रोग पैदा होते हैं।

कभी कभी प्रकृति शरीरके विषको चमड़ेकी राह निकालना चाहती है। उस समय प्रकृतिके भारमुक्त होनेकी प्रणालीको ही घाव, फोड़ा, फुन्सी, चेचक इत्यादि कहते हैं।

इसी भाँति शरीरमें जमा हुए दूषित पदार्थोंकी सफाईकी प्राकृतिक व्यवस्थासे सभी तरुण (acute) बीमारियाँ होती हैं। सब प्रकारकी पुरानी (chronic) बीमारियोंका यही कारण है। बार बार दवाइयोंके प्रयोगसे रोगोंको दबा देने तथा अन्य किसी कारणसे प्रकृति जब इतनी कमजोर हो जाती है कि वह किसी तीव्र रोगको उत्पन्न कर देहकी सफाई नहीं कर पाती, तभी रोग जीर्ण हो जाता है। इसी कारण बदहजमी, वात-रोग, पागलपन और कैन्सर आदि रोग पैदा होते हैं।

इस प्रकार हम लोगोंको जो कोई भी रोग क्यों न हो, हम उन्हें बुखार, फोड़ा, बदहजमी, वात रोग आदि क्यों न कहें, किन्तु रोगकी प्रकाश विधि विभिन्न होने पर भी असलमें रोग एक ही है, जो केवल मात्र शरीरमें संचित दूषित पदार्थोंसे उत्पन्न होता है।

इसी कारण लूई कूने ने कहा है—There is only one cause of disease—there is also one disease which shows itself under different forms—सभी रोगोँका मूल कारण एक है, अतः रोग भी एक है, जो कि विभिन्न रूपोंमें प्रकट होता है (The New Science of Healing, P. 32)।

वर्तमान युगके एक प्रख्यात चिकित्सक (सर विलियम आरबुथनटलेन) ने कहा है—After all there is but one disease - deficient drainage—जो कुछ भी कहें रोग एक ही है—यानी शरीरकी सफाईकी कमी (William Howard Hay, M. D.—Health via Food, P. 57)।

इसी कारण बुखार, चेचक, न्यूमोनिया, पागलपन आदिको अलग अलग रोग बताना भूल है। शरीरका दोषयुक्त होना ही प्रधान बीमारी है, और सभी उसके चिन्हमात्र हैं।

[३]

कुछ लोगोंका मत है कि प्रायः सभी रोग विभिन्न रोगके कीटाणुओंसे उत्पन्न होते हैं—हम लोगोंको जितनी बीमारियाँ होती हैं उन सबोंके अलग अलग कीड़े होते हैं; किन्तु आश्चर्यका विषय यह है कि पृथ्वी पर जितने रोगके जीवाणु दिखाई पड़ते हैं, वे सभी स्वस्थ शरीरमें पाये जाते हैं। पर वे शरीरका कुछ भी अनिष्ट नहीं करते।

एक प्रसिद्ध फरांसीसी जीवाणु-विद्या-विशारदका कहना है कि दो महीनेके एक बच्चेके मुखमें डाक्टरीमें बतलाये प्रायः सभी रोगोंके जीवाणु उन्होंने पाये पर फिर भी वह बच्चा स्वस्थ था।

फ्रांसके एक दूसरे डाक्टरने इन्टरनेशनल ट्यूबरकुलोसिस कांग्रेसके (International Tuberculosis Congress) रोमके अधिवेशनमें कहा था कि उन्होंने सैकड़े ९५ छात्रोंके शरीरमें यक्ष्माके कीटाणु पाये हैं।

सच पूछा जाय तो एक भी ऐसा आदमी नहीं है जिसके शरीरमें विभिन्न रोगके जीवाणु न हों। किन्तु फिर भी उनसे किसीका कुछ अनिष्ट नहीं होता।

बाहरसे भी यदि जीवाणु शरीरमें प्रवेश करें, तौ भी शरीरका कुछ अनिष्ट सम्भव नहीं। वियेनाके प्रसिद्ध डाक्टर और प्रोफेसर पेखेन कोफार एक समय अपने छात्रोंके सामने एक ग्लाससे अंगनृत्य (chorea) रोगके लाखों कीटाणुओंको निगल गये। किन्तु इससे उनको कुछ भी नहीं हुआ (G. S. Kikla—Natural Ways of Cure, P. 14-15)।

इसके बाद कई स्थानोंमें इसी प्रकार जीवाणुओं द्वारा परीक्षा की गई है।

जर्मनीके एक प्रोफेसरने (Dr. Pentenkoffer of Munich) एक दिन हैजा रोगके कई लाख कमा जीवाणु पीकर लोगोंको चकित कर दिया। कीटाणुओंके पेटके भीतर जानेसे कुछ भी नहीं होता। इसके कुछ

दिन बाद और एक दूसरे डाक्टर (Prof. Emmrich) ने हैजाके लाखों कीटाणुओंसे पूर्ण जल (culture) पान कर दिया। इससे उनका कुछ भी अनिष्ट नहीं हुआ।

अंतमें डा० टौमस पावेलने (Dr. Thomas Powell) डाक्टरोंको अपने शरीरमें विभिन्न रोगोंके कीटाणुओंको इन्जेक्ट करनेके लिये आह्वान करके यह साबित कर दिखाया कि जिवाणुओंके सिद्धान्त कितने अतिरंजित आधार पर स्थिर हैं। डाक्टरोंने उनके शरीरमें बार-बार डिपथिरिया, टायफायेड, कैंसर और यक्ष्माके कीटाणुओंके इन्जैक्शन दिये किन्तु उनसे उनका कुछ भी अनिष्ट नहीं हुआ (James Raymond Devereux—Eating to Banish Disease, P. 90—91)।

उससे यह मान लेना कि किसी रोगके कीटाणुओंके आक्रमण करनेही पर हमलोग बीमार पड़ते हैं—यह बात नहीं। जबतक शरीर विशुद्ध रहता है, एवं उसके फलस्वरूप रोगके प्रतिरोध करनेकी शक्ति (vital resistance) रहती है, तबतक किसी भी रोगके कीटाणु शरीरमें कुछ भी अनिष्ट नहीं पहुंचाते। पर जब काफी मात्रामें बिकार शरीरमें भरा रहता है और इस बिजातीय द्रव्यके कारण खून विशाक्त हो जाता है उसी हालतमें बिभिन्न रोगोंके कीटाणु अपना असर दिखाते हैं। ऐसी हालतमें शरीरमें रहनेवाले विभिन्न जीवाणु ही नाशकारी हो जाते हैं, ऐसी बात नहीं। बल्कि शरीरमें प्रायः रोगके कीटाणु स्वतः पैदा होते हैं या यदि वे बाहर से आते भी हैं तो उनकी वृद्धि भी तेजीसे होने लगती है। शरीरमें दूषित पदार्थके रहने ही पर ये कीटाणु बढ़ेंगे अन्यथा वे नष्ट हो जायंगे कारण जहां गदंगी रहती है वहीं जीवाणु रहते हैं। शरीरमें इस रोगके कीटाणुओंकी वृद्धिकी अनुकूल अवस्था (predisposition) नहीं रहनेसे कोई भी कीटाणु किसी प्रकारकी क्षति नहीं पहुंचा सकते।

जंगलमें प्रायः देखा जाता है कि कोई पुराना वृक्ष कीटाणुओंसे जर्जरित होकर ध्वंस होरहा है पर उसके पासही एक नया वृक्ष अपना मस्तक

ऊंचा उठाये लहलहाता नजर आता है। जो कीटाणु उस वृक्षको इस प्रकार निस्तेज कर रहे हैं वही लहलहाते वृक्षका कुछ भी अनिष्ट नहीं करते, इसका क्या कारण है? उत्तर स्पष्ट है, पुराने वृक्षमें कीटाणुओंकी वृद्धि करनेका साधन विजातीय द्रव्य प्रचुर मात्रामें मौजूद है, जबकी नये वृक्षमें उसका सर्वथा अभाव है। नये वृक्षपर भी वे कीटाणु आते हैं पर वहां उनकी वृद्धि नहीं हो सकती। इसी कारण नये वृक्षका अनिष्ट भी उनके द्वारा सम्भव नहीं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रोग चिकित्सामें कीटाणुओंका नाश करना उतना आवश्यक नहीं, जितना शरीरको विजातीय द्रव्यसे मुक्त करना आवश्यक है, क्योंकि उस हालतमें रोगके मूलपर ही हम कुठाराघात करते हैं। यदि शरीर दूषित पदार्थसे रहित होगा, तो रोगाणुओंके शरीरमें प्रवेश करनेपर भी उनकी वृद्धि नहीं होगी और वे मारात्मक रूप धारण नहीं कर सकेंगे। अतः उनसे कुछ क्षति नहीं होगी।

इस दूषित पदार्थको इकट्ठा होनेसे यदि रोका न जाय तो किसी भी रोगकी चिकित्सा नहीं हो सकती। भीतरी विकारको उसी रूपमें भीतर ही रहने देकर बाहरसे दवाइयोंका सेवन करनेसे रोगका लक्षण कुछ समयके लिये केवल मात्र दब जाता है पर आदमी नीरोग तो तभी हो सकता है जबकि रोगका मूल कारण विनष्ट हो।

एक आदमीके घरमें गन्दगी इकट्ठी हो गयी। उसमेंसे दुर्गन्धित गेस निकलने लगी। उसने कुछ औषधियाँ और सुगन्धित चीजें लाकर उसपर डाल दीं। गेस बन्द हो गया ऐसा मालूम पड़ने लगा; पर कुछ दिन बाद उसमेंसे और भी बदबू निकलने लगी। गृहस्वामीने फिर पुरानी बात दुहरा औषधि द्वारा उसे दबा दिया। फलस्वरूप उसके सड़नेसे अनेकों कीटाणु उत्पन्न हुए, मक्खियाँ भिनभिनाने लगीं। उसने फिर औषधिका प्रयोग कर इसे दबाया। पर अन्तमें घरकी अवस्था ऐसी हो गयी कि रोगकी अपेक्षा औषधिकी ज्वाला ही इतनी तीव्र हो उठी,

कि उसकी यन्त्रणा असह्य हो गयी। तब उसकी आँखें खुलती हैं। वह शीशी बोतल दूर फेंक कई बाल्टी पानी लेकर सारी गन्दगी धो बहाता है। अब उसने देखा कि घरकी गन्दगीके साथ-साथ कीड़े गये, मक्खियोंकी भिनभिनाहट हटी और बदबूसे पिण्ड छूटा। जब रोगका कारण ही नष्ट हो गया, तब घरमें कीटाणुओंका रहना असम्भव हो गया।

डाबरमें मच्छड़ पैदा होते हैं। उसमें दवा डाल कर अनेकों मच्छड़ मारे जा सकते हैं, पर उससे नये मच्छड़ोंकी उत्पति नहीं रुकती। किन्तु जिस परिस्थितिमें और जिन कारणोंसे मच्छड़ोंकी उत्पति होती है यदि वे कारण समूल नष्ट कर दिये जायं, तो मच्छड़ उत्पन्न ही न होंगे, और उनका समूल नाश हो जायगा। डाबर ही को यदि नष्ट कर दिया जाये, तो एक मच्छड़को मारे बिना ही समस्त मच्छड़ोंका उच्छेद हो जायगा।

हमारे शरीरमें भी जो रोगके कीटाणु उत्पन्न होते हैं—उनकी वृद्धिके लिये अनुकूल परिस्थिति पहलेसे ही मौजूद रहती है, इसी कारण उनकी वृद्धि होती है। ऐसी अनुकूल परिस्थितिके रहने ही के कारण विजातीय द्रव्यके तारतम्य या स्थान-भेदके मुताबिक उससे भिन्न भिन्न प्रकारके रोगके जीवाणु उत्पन्न होते हैं या बाहरसे आकर उसमें वृद्धि पाते हैं। पर जब विजातीय पदार्थ शरीरसे बाहर निकाल दिया जाता है तो उसी समयसे रोगके कीटाणु और उनके साथ-साथ उनका विष भी चला जाता है।

शरीरके विकारको बाहर निकालनेकेलिये प्रकृतिने चार मार्ग बनाये हैं। पहला मल-द्वार, दूसरा मूत्र-नली, तीसरा रोम-कूप और चौथा नाक। प्रकृतिके इन स्वाभाविक रास्तोंसे जब तक दूषित पदार्थ निकलता रहता है शरीरमें कोई बीमारी नहीं होती। रोग होनेपर भी इन स्वाभाविक मार्गोंसे यदि हम विजातीय द्रव्य बाहर निकाल फेंके, तो रोग अच्छा हो जायगा।

वाष्प-स्नान, उष्णपाद-स्नान (hot footbath) या भिगी चादरकी लपेट (wet-sheet-pack) आदि द्वारा शरीरके विभिन्न भागोंमें संचित विजातीय पदार्थ रोमकूपोंकी राह बाहर निकाल दिया जाता है। छोटी तथा बड़ी आँतोंमें जो मल जमकर प्रायः सभी विषोंके सूतिका-गृहका स्वरूप धारण करता है, उसे हिप बाथ (hip bath) भिगी कमरपेटी (wet girdle) या उदर पर मिट्टीकी पोलटिस बाँधकर बाहर निकाला जा सकता है। काफी पानी पीकर मूत्रके साथ भी पर्याप्त विष बाहर निकाला जा सकता है।

जब प्रकृति इस विधिसे तथा और भी अन्यान्य प्रकारसे हल्की कर दी जाती है, तब शरीरमें और किसी रोगका रहना असम्भव हो जाता है, कारण सारे रोग शरीरमें संचित विजातीय द्रव्यसे ही उत्पन्न होते हैं, और जब वह दूषित पदार्थ शरीरसे ही निकल जाता है, तो रोगोंकी स्वाभाविक मृत्यु हो जाती है। क्योंकि ईंधनके अभावमें आग नहीं जल सकती।

———*———

तृतीय अध्याय
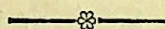
कोष्ट-शुद्धिके उपाय

[१]

हम लोगोंके शरीरमें पेटका निचला भाग ही सबसे बड़ा कूड़ाखाना है। इसी स्थानमें दूषित मल जमा होकर, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे शरीरमें विभिन्न रोगोंकी सृष्टि करता है। इसी कारण अधिकांश बार केवल दोनों प्रकारकी आंतोंको ही दोष रहित करके रोग अच्छे किये जाते हैं; और ऐसा कोई रोग ही नहीं जो आँताँकी इस दोषयुक्त अवस्था से बढ़ता न हो। बहुत बार तो रोग अधिक दिनों तक इसी लिये बना रहता है कि ये आंतें साफ नहीं हो पातीं। इसलिये चाहे जो कोई भी रोग क्यों न हो पेटके इस निम्न भागको साफ कर लेना आवश्यक है।

दोनों प्रकारकी आंतोंको साफ (दोष रहित) करनेके लिये हिप बाथ (hip bath) से बढ़कर दूसरा कोई साधन नहीं है। शरीर पर किसी प्रकारका अत्याचार किये बिना, बड़ी आसानीसे इसके द्वारा कोष्ट साफ हो जाता है।

हिप बाथ (कटि-स्नान) लेनेकी विधि

किसी गमले या बर्तनमें स्वच्छ पानी भरकर उसमें इस प्रकार बैठा जाये कि पैर बाहरको रहें, फिर पेटका निचला भाग (पेड़ू आदि) लगातार काफी देर तक रगड़ना ही 'हिप बाथ' कहलाता है।

किसी प्रकारके सुविधाजनक बड़े गमले या बर्तनके भीतर हिप बाथ लिया जा सकता है। बर्तन मिट्टी, काठ, पीतल या किसी पदार्थका हो सकता है। बर्तन इतना बड़ा हो कि जलमें बैठने पर रोगीकी नाभि तक जलमें डूबी रहे।

पहले गमलेमें पानी भरकर पैर बाहर करके बैठना चाहिये। इस प्रकार कि जंघा तथा नाभि तक जलमें डूबा रहे तथा पैर और नाभिके ऊपरका शरीर पानीके बाहर रहे।

जिस जलमें यह स्नान किया जाये उसकी गर्मी शरीरकी गर्मीकी अपेक्षा हर हालतमें कम (६८° डिग्रीसे लेकर ७०° डिग्री तक की) रहनी चाहिये। किन्तु पहले ही पहल अत्यन्त ठण्डे जलमें कटि-स्नान करना ठीक नहीं। दो-तीन दिन समशीतोष्ण जलमें स्नान करनेके बाद क्रमशः अभ्यासके मुताबिक अधिकाधिक ठण्डे जलका प्रयोग करना चाहिये; परन्तु ज्वरकी अवस्थामें पहले ही से ठण्डे जलका व्यवहार करना आवश्यक है; पर बर्फके समान शीतल जलका इस्तेमाल तो कभी भी नहीं करना चाहिये।

पहले दिन यह स्नान चार पांच मिनटका होना चाहिये। इसके बाद क्रमशः एक दो मिनट बढ़ाकर आध घण्टे या आवश्यकतानुसार जबतक जलमें आराम मिले तबतक बैठा जा सकता है। जाड़ेके दिनोंमें १० मिनटसे अधिक स्नान करनेकी आवश्यकता नहीं। पर हां, गर्मीमें अधिक समय तक हिप बाथ लिया जा सकता है। छोटे बच्चे, अधिक वृद्ध या कमजोर रोगीको अधिक समयतक हिप बाथ [कटि-स्नान] का प्रयोग कराना ठीक नहीं। इन्हें साधारण रोगीकी अपेक्षा आधा समय देना चाहिये।

कटि-स्नान करते समय लगातार (तलपेट) पेड़ू आदिको रगड़ते रहना चाहिये। इस प्रकार रगड़ते रहना बहुत आवश्यक है। इस प्रकार रगड़ते रहनेके ही कारण इसका नाम (friction hip bath) घर्षणयुक्त कटि-स्नान है। जलमें इस प्रकार बैठकर पेड़ू आदिके रगड़नेकी भी

एक विशेष पद्धति है। जिस लाइनमें हम लोगोंकी बड़ी आंत (large intestine) है उसी लाइनकी दाहिनी ओर एक दम नीचेसे हाथ ऊपरको रगड़ते हुए नाभिके कुछ ऊपर तक ले जाकर दूसरी ओरसे फिर नीचे ले जाना चाहिये। सारे नाभिके निचले भागको अर्ध चन्द्राकार गतिसे दाईं ओरसे बाईं तरफ और ऊपरसे नीचेकी ओर रगड़ना चाहिये। यह बड़ी आंत

हिप बाथ (Hip bath)

(colon) में संचित मलको बाहर निकाल फेंकनेमें अधिक सहायता करता है। इसके साथ ही साथ दोनों पट्टे गुदा-द्वार तक और जननेन्द्रियका बाहरी भाग पूर्ववत रगड़ना चाहिये। साधारणतया खाली हाथसे रगड़ना काफी होता है; किन्तु आदमी इच्छानुसार खद्दरकी एक साफी, रूमाल या तौलियेसे रगड़ सकता है। पेट रगड़ते समय हमेशा ही जरा दबाकर रगड़ना चाहिये; पर ज्यादा दबाना भी ठीक नहीं है। हिप बाथके लिये बैठते समय पीछेकी ओर एक ढुगुनी दे देनी आवश्यक होती है। गमला ऐसा होना चाहिये जिससे कि ढुगुनीके सहारे बैठा जा सके। उस हालतमें इसके साथ ही साथ थोड़ा-सा मेरुदण्डका स्नान (spinal bath) भी हो जाता है। मेरुदण्डमें जो स्नायुगुच्छ हैं उनके ठण्डक पानेसे उसकी प्रतिक्रिया द्वारा सारे शरीरमें एक प्रकारका उद्दीपन होता है, जिससे शरीरमें रोग निवारणकी क्षमता बढ़ती है।

हिप बाथके लिये बैठते समय जो भाग जलसे बाहर रहे उसे सिर और मुहको छोड़कर अच्छी तरह कपड़ेसे ढक लेना चाहिये। साधारण स्थितिमें किसी एक कम्बलसे शरीरको ढक लेना काफी होता है; पर यदि पैरोंमें गर्म मोजे हों तो और भी अच्छा है। साधारण टबमें बाथ लेते समय बिना कम्बलके भी काम चल सकता है, परन्तु एक कुर्ता पहन लेना चाहिये और नीचेका हिस्सा भीगनेसे बचनेके लिये मोड़कर सेफ्टीपिन आदिसे खोंस

लेना चाहिये। गर्मीके दिनोंमें स्वस्थ व्यक्ति नंगे बदन भी यह बाथ (स्नान) ले सकता है।

किन्तु जो आदमी बहुत रोगी और दुर्बल हो अथवा जिसे वात रोग (rheumatism) हो या जिसका हाथ पैर ठण्ढे होते हों, उन्हें अत्यन्त सावधानीसे यह बाथ लेना चाहिये। हिप बाथके लिये बैठनेके समय ऐसे रोगीके दोनों पैरोंको एक छोटे गमलेमें गरम पानी रखकर डुबा लेना चाहिये। इसके पहले सिरको अवश्य शीतल जलसे खूब अच्छी तरह धो डालना चाहिये और सिरपर एक भींगो तौलिया लपेट लेना आवश्यक होता है। स्वस्थ व्यक्ति भी इस प्रकारसे यदि यह बाथ लें तो कोई आपत्ति नहीं। हिप बाथके बाद पूरा स्नान करनेका साधारण नियम है; किन्तु कमजोर, बच्चा या अत्यन्त बुड्ढेके शरीरको भीगे कपड़ेसे पोंछ देनेसे ही काम चल जायगा। टबसे निकलनेके पहले रोगीके कंठसे कमर तक शीतल जलसे धो डालना चाहिये। फिर कंधेसे लेकर कमर तक और उसके बाद क्रमशः दाहिना हाथ, बायां हाथ, सिर और सबसे आखिरमें टबसे निकलकर पैर धो डालना चाहिये। इस प्रकार शरीर धो चुकनेके बाद स्वस्थ और बलवान मनुष्य इच्छा होने पर पूर्ण स्नान कर सकते हैं।

हिप बाथ लेनेके पहले इस बातका ख्याल कर लेना चाहिये कि शरीर विशेषकर तलपेट (नाभिके नीचे) गरम है या नहीं। यदि गर्म न हो तो शरीरकी अवस्थाके अनुसार कसरत करके, या धूपमें घूमकर या अच्छी तरहसे मालिश करा शरीरमें गर्मी लाकर हिप बाथ लेना उचित है।

हिप बाथ लेनेके आध घण्टेके भीतर भोजन नहीं करना चाहिये कारण उस समय पेट हिप बाथके कारण ठण्डा रहता है और वहां गर्मी पहुंचने के पूर्व किसी प्रकारका भोजन हानिकर होगा। दिन या रात्रिके प्रधान भोजनके ४ घण्टेके भीतर भी हिप बाथ नहीं लेना चाहिये, क्योंकि उस हालतमें भोजनके पचनेमें वाधा पड़नेकी सम्भावना होती है।

साधारण अवस्थामें दिनमें एक बार हिप बाथ लेना पर्याप्त है; किन्तु पुराने रोगोंमें दिनमें दो बार तथा बुखारमें तो तीन बार तक लेना चाहिये।

[२]

हिप बाथसे लाभ

हिप बाथका प्रधान गुण यह है कि यह निर्दोष उपायसे आंतोंको साफ कर देता है। शीतलता स्वभावतः ही शरीरको संकुचित करती है। जब पेड़ू पर ठण्डक पहुंचती है, तब दोनों प्रकारकी आँतें संकुचित होती हैं और उनमें बहुत तेज कृमि गति (peristalsis) उत्पन्न करती हैं। इसी कारण ठण्डे पानीमें हिप बाथ लेनेसे बहुधा बहुत ही थोड़े समयमें अंतड़ियां साफ हो जाती हैं।

तात्कालिक लाभकी अपेक्षा स्थायी कोष्टबद्धता [कब्जियत] दूर करनेमें यह विशेष लाभ पहुंचाता है। हिप बाथ लेनेकी पद्धतिके अनुसार पेड़ूको रगड़नेसे वहाँकी मांसपेशियां बलवान हो जाती हैं और आँतोंकी कृमि गति बढ़ जाती है।

रगड़नेके साथ-साथ हिप बाथ लेते समय पेड़ूसे खून सरक जाता है। जब इस प्रकार रक्त हट जाता है उस समय पेड़ू स्थित अंतड़ियोंके भीतरसे वह बहुत दूषित पदार्थको लेकर बाहर निकल जाता है। उसके कुछ क्षण बाद फिर नया खून आता है, और यह अपने साथ शरीर गठनकी नई सामग्रियां साथ लिये आता है। इसी कारण पेड़ूको रगड़ते हुए हिप बाथ लेनेसे दोनों प्रकारकी आंतें इस प्रकार मजबूत हो जाती हैं कि प्रति दिन ये स्वयं अपनी सफाई कर देती हैं।

हिप बाथसे कोष्टके साफ होनेका यही प्रधान कारण है कि इसके द्वारा पेड़ूके स्नायु-तन्तु बहुत मजबूत हो जाते हैं। पेड़ूमें ठण्डक

पहुंचनेसे स्नायु पेशियां कुछ संकुचित हो जाती हैं; पर इसकी प्रतिक्रियासे ये इतनी बलवान और सतेज हो जाती हैं कि आंतोंमें मल देरी तक रहने नहीं पाता। नियमपूर्वक इस प्रकार हिप बाथ लेनेसे स्नायु स्थायी रूपसे मजबूत हो जाते हैं।

किसी किसीके पेड़ूमें इतनी गर्मी रहती है कि यह मलके सारे रसको सोख लेती है और इसे सुखाकर जला डालती है। इससे मल आंतोंमें सूखकर अत्यन्त कड़ा हो जाता है। इसी अवस्थाका नाम कोष्ट कठोरता है। रगड़ते हुए हिप बाथ लेनेसे यह गर्मी पानीमें निकल जाती है। उस समय आंतोंमें मल कठोर नहीं हो सकता।

आंतोंकी हालत कितनी भी खराब क्यों न हो, कुछ दिन तक दोनों वक्त हिप बाथ लेनेसे भारीसे भारी असाध्य रोगीका भी प्रति दिन दो बार पेट साफ होने लगेगा। श्रीयुत हेमन्तकुमार देवाशी नामक एक बड़े-बाजारके प्रसिद्ध व्यापारी सात वर्ष पूर्व सन्यस रोगसे आक्रान्त हुए थे। इस रोगके दौरेसे वे बच तो गये; पर उनका आधा अंग पक्षाघात (लकवा) से सुन्न हो गया। इसके साथ ही साथ मल त्याग करनेकी उनकी स्वाभाविक शक्ति भी नष्ट हो गयी थी। इसलिये वे रोज डूस लिया करते थे और सप्ताहमें एक बार जुलाब लेते थे। इसके सिवा उन्हें किसी भी उपायसे पाखाना होता ही नहीं था। मैंने उन्हें भिगी चादरका (पैक) लपेट (wet sheet pack) देकर रोजाना हिप बाथ दिलाना शुरू किया तथा खानेका पथ्य निश्चित कर दिया। इसके चार दिन बाद उन्हें पहले पहल सात वर्ष पर स्वाभाविक रीतिसे पाखाना हुआ और इसके कुछ दिन और बाद ही आँतोंकी हालत बिल्कुल स्वाभाविक हो गयी। ये बड़े कष्टसे कुछ कदम सरक सकते थे। पर तीन महीने तक जल चिकित्सा करानेके बाद ही ये बालीगंजके धाकुरिया लेकके आधे तक टहलने लगे। उन्हें ब्लड प्रेसरकी भी बीमारी थी। कुछ दिन इस चिकित्साके चालू रहने पर रक्तका दबाव भी कम हो गया। हिप बाथके

साथ-साथ नियमित रूपसे उन्हें बाष्प-स्नान, भीगी चादरका पैक (लपेट), भीगी कमर पट्टी, आतप स्नान तथा पेड़ू, लिवर (यकृत) और मेरुदण्ड आदिमें एकान्तर पट्टी (alternate compress) का व्यवहार किया जाता था।

हिप बाथसे केवल पेट साफ होता है यही बात नहीं। यह यकृत (liver), क्लोम (pancreas), आंतोंका रसस्राव (secretion) बढ़ाता है और खाद्य पदार्थसे रस खींचनेकी आंतोंकी ताकतको बढ़ा देता है। इस प्रकार इससे खाली कोष्ट ही साफ नहीं होता; बल्कि यह अजीर्ण रोगको भी दूरकर हाजमा शक्तिको बढ़ाता है। पेटकी किसी भी बीमारीमें यदि पेट गरम रहे तो दो-तीन दिन तक इस बाथके लेनेसे कठिन उदर कष्ट भी अच्छा हो जाता है। मन्दाग्निमें कुछ दिन हिप बाथ चलानेसे दोनों प्रकारकी आंतें परिस्कृत हो जाती हैं, फिर भूख अपने आप लगने लगती है।

आंतोंकी प्रायः सभी बीमारियाँ स्वाभाविक ढङ्गसे इसके द्वारा अच्छी हो जाती हैं। बाँकुड़ाके मारवाड़ी व्यापारी श्रीयुत बालमजी लालजी लड़कपनसे पेटकी विभिन्न बीमारियोंसे आक्रान्त थे। साधारणतया सात-सात आठ-आठ दिन तक उन्हें पाखानेकी हाजत नहीं लगती थी। फिर कई दिनों तक केवल आंव गिरता। अन्तमें भीतरसे बहुत मल आता था; पर वह भी स्वाभाविक ढंगसे नहीं। एक अंगुली भीतर घुसाकर काफी देरमें जरा जरा करके मल निकाला जाता। वैद्यक, डाक्टरी, होमियोपैथी आदि चिकित्सा करा चुकनेके बाद वे हमारे पास आये। उनके पास एक बही थी। जिसमें शुरूसे अन्त तकके रोगका दैनिक विवरण लिख रक्खा था। इसका विवरण इतना अधिक हो गया था कि यदि वह पुस्तकाकार छपाया जाता, तो दो सौ पृष्ठकी पुस्तक तैयार हो जाती। मैंने थोड़ा स्टीम बाथ (वाष्पस्नान) का प्रयोग करके रोज हिप बाथकी व्यवस्था करा दी। साथ ही साथ भीगी कमर पट्टी (wet girdle

पेड़ूकी एकान्तर पट्टी (alternate compress) और खाने पीनेके पथ्य-की व्यवस्था कराई। बस इसी प्रकारकी चिकित्साके द्वारा उनका बहुत दिनोंका साथी आंव जाता रहा और दो सप्ताहमें ही उन्हें नियमित रूपसे पाखाना होने लगा।

हिप बाथका प्रयोग यद्यपि एक निर्दिष्ट भागपर होता है पर स्नायविक प्रतिक्रियाके कारण इसका प्रभाव सारे शरीरपर पड़ता है। इसी कारण हिप बाथ लेने मात्रसे अनेक रोगोंसे सदाके लिये पिराड छूट जाता है।

ज्वरमें यदि तीन बार हिप बाथ लिया जाये तो कैसा भी ज्वर प्रायः आसानीसे उतर जाता है। शरीरकी गर्मीको कम करके यह ज्वर नहीं घटता; बल्कि इससे सारे स्नायु इस प्रकार सतेज हो जाते हैं कि वे रोगके विषको ठेलकर बाहर निकाल फेंकते हैं। इसी कारण बुखार स्वयं उतर जाता है।

जोरके सिर दर्दमें हिप बाथ जादूका काम करता है। इसी कारण सिरमें ठराडक पहुंचा पैरमें गर्मी पहुँचानी आवश्यक होती है। इससे सिरके खूनका दौड़ान नीचेको हो जाता है और सिर-दर्द आसानीसे छू मन्तर हो जाता है।

जिनका शरीर क्रमशः सूखता जाता हो, उनके लिये हिप बाथ बड़ा ही हितकर है।

जिनके सिरके बाल गिरकर खल्वाट हो गये हों, वे यदि स्नानके पूर्व रोज कटि-स्नान करें, तो आंतोंकी गर्मी निकल जायगी। अतः बालोंका गिरना भी रुक जायगा; क्योंकि आंतां द्वारा सिरपर गर्मी नहीं पहुँचेगी। नियमित रूपसे इस प्रकार स्नान करनेसे फिर नये बाल उगने लगेंगे।

अनिद्रा रोगमें (insomnia) रोज दो बार हिप बाथ लेनेसे यह रोग शीघ्र अच्छा हो जाता है।

स्त्रियोंके गर्भपात होनेके लक्षण दिखाई देने पर यदि २० से ३० मिनट तक हिप बाथ लेना शुरू कर दिया जाये तो गर्भपात रुक सकता है। पर इस हालतमें पेटको बड़ी सावधानीसे हल्के रगड़ना चाहिये।

जिन स्त्रियोंको सन्तानोत्पत्तिके समय बहुत कष्ट होता हो, यदि प्रसवके कुछ महीने पहिलेसे ही वे नियमित रूपसे हिप बाथ लिया करें, तो प्रसव बिना किसी कष्टके और निरापद भावसे होगा। मैंने एक गर्भिणीको इसी प्रकार नियमित रूपसे हिप बाथ लेनेकी व्यवस्था दी थी। प्रसवसे ४ महीने पहिलेसे वे रोज स्नानसे पहले हिप बाथ लिया करती थीं। परिणाम यह हुआ कि जब सन्तान हुई, तो उनकी दाई सोई पड़ी थी। बच्चा होनेके बाद उन्होंने ही दाईको पुकार कर जगाया।

स्त्रियोंके पुराने रक्तस्राव रोगमें इससे बड़ा फायदा पहुंचता है। सच पूछा जाय, तो हिप बाथ समस्त स्त्री-रोगोंकी रामबाण औषधि है। स्त्रियोंके रोगमें कटि-स्नान द्वारा बहुत स्त्रियाँ डाक्टरोंके नस्तरसे बच गयी हैं। In the female troubles the cold hip bath has preserved many sufferers from surgeon's knife (W. R. Latson, M. D., Common Disorders, P. 322)।

मूत्राशय (bladder), आंत और जरायु आदिके रोगोंमें अर्श वगैरहसे जब ज्यादा रक्त स्राव होता है, तब हिप बाथ बड़ा ही लाभ पहुंचाता है। पर इस अवस्थामें हिप बाथ लेते समय दोनों पैरोंको अवश्य गर्म पानीमें डुबाये रखना चाहिये। इससे पेड़ू स्थित अधिक खून पैरोंमें उतर आता है और ठण्डक पाकर पेड़ू संकुचित होने लगता है, जिससे कि रक्त स्राव बन्द हो जाता है। अंग्रेजीमें इसे derivative treatment अर्थात् रोगकी गति घुमा देना कहते हैं।

दर्दके न रहने पर पेड़ूकी जिस किसी भी पुरानी जलनमें यह विशेष रूपसे लाभदायक होता है। नपुंसकतामें (in impotence) यह विशेष फायदेमन्द है। इसके द्वारा जीवनी शक्तिको इस प्रकार स्फूर्ति मिलती है

कि इससे पक्षाघात, केन्सर यहाँ तक कि यक्ष्मा रोग भी बढ़ने नहीं पाते।

बहुतसे बच्चोंको नींदमें ही पेशाब हो जाया करती है। उनको अगर कटि-स्नान कराया जाय तो उनकी यह बीमारी दूर हो जाती है।

स्मरण-शक्ति, धीरज एवं मस्तिष्ककी समस्त कार्य करनेकी शक्तियोंको बढ़ानेमें कटि-स्नान बेजोड़ है। लण्डनके एक प्रसिद्ध डाक्टर कई क्षण तक कटि-स्नान लेनेके बाद ही रोगियोंके इलाजके लिये उतरा करते थे। वे कहा करते थे कि अगर वे एक बार ठण्डे पानीसे कटि-स्नान कर लें, तो कितने भी रोगी उनके सामने क्यों न आवें उनके साथ वे गम्भीरता पूर्वक काम कर सकते हैं (J. H. Kellogg, M. D.—Rational Hydrotherapy, P.766)।

कटि-स्नानके बारेमें लूई कुने साहबका बार बार यही कहना है कि कोई भी ऐसा रोग नहीं है, जिसमें कटि-स्नान फायदा न पहुंचाता हो। लूई कुने साहबके इस कथनमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है; क्योंकि चरकका भी मत है कि पेट साफ रहनेसे जठराग्नि तेज होती है। सभी प्रकारकी बीमारियाँ शान्त हो जाती हैं। शरीरकी स्वाभाविक क्रिया चलती है। इन्द्रिय, मन और बुद्धि प्रसन्न रहती हैं एवं बल और सामर्थ्य बढ़ती हैं [सूत्रस्थानम् १६।६]।

[३]

विभिन्न प्रकारके कटि-स्नान

जर्मनीके प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक जुष्टके मतके अनुसार और भी आसान तरीकेसे कटि-स्नान किया जा सकता है। इसके लिये बहुत बड़े गमलेकी भी जरूरत नहीं होती है। एक गमलेमें प्रायः तीन इंच परिमाणमें पानी लेकर उसमें बैठ जाना होता है। इसमें शरीरका थोड़ा

ही हिस्सा पानीमें डूबता है एवं जाघोंसे लेकर पैरों तकका तथा सारा ऊपरी शरीर पानीके बाहर रहता है। रोगी गमलेमें बैठकर उसमेंसे पानीको हाथमें लेकर आधे समय तक लगातार पेड़ूको रगड़ता रहे और बाकी समय वह जाँघोंके जोड़में, जननेद्रियके बाहरी भाग एवं मलद्वार और जननेद्रियके बीचकी जगहको नीचेकी ओर रगड़े। इसके लिये तौलिये वगैरहकी भी जरूरत नहीं होती। खाली हाथोंसे रगड़ना ही काफी है। इसमें पानीकी गर्मी शरीरकी गर्मीसे कहीं कम होनी चाहिये। अगर पानीमें कुछ समय बैठनेके बाद वह गरम हो जाय तो गमलेमेंसे कुछ पानी बाहर फेंक देना चाहिये और उसकी जगह उसमें ठण्डा पानी और डाल लेना चाहिये।

बाथ लेनेके बाद रोगी एक दूसरे बर्तनसे हाथमें पानी लेकर सारे शरीरको भिगो ले और इसके बाद ही खूब जल्दीसे खाली हाथसे शरीरको रगड़कर पानीको सुखा ले। जाड़ेके दिनोंमें इस स्नानके लिये दस मिनट काफी हैं। गर्मीके दिनोंमें जब तक आराम मालूम दे तबतक इसे जारी रखना चाहिये।

मिट्टीके एक पुराने गमलेका दाम करीब ५ आनेके होता है। अगर कोई गमला या टब लेनेमें असमर्थ हो तो वह दूसरे तरीकेसे भी कटि-स्नान कर सकता है। एक पीढ़ेके ऊपर एक गीले तौलियेको फैलाकर उसपर बैठकर दोनों पैरोंको कुछ ऊंची एक जल-चौकी या अन्य किसी ऊँची चीज पर रखना चाहिये। इसके बाद एक बाल्टीमें ठण्डा पानी लेकर उसके द्वारा हिपबाथकी तरह पेड़ू और जोड़ आदिकी जगहोंको रगड़ना चाहिये। ऐसा १० से १५ मिनट तक करना चाहिये।

अगर रोगीकी ऐसी हालत हो कि वह खटियेसे न उठ सके, तो कटि-स्नानके बदले उसके पेड़ू और जननेन्द्रियके ऊपर एक भीगा गमछा रख दें, अगर वह गरम हो जाय तो उसे फिर बदल दें; नहीं तो उलट

पलट देनेसे भी काम चल जाता है। इसोलिये गीले गमछेसे मलद्वार तकका सारा स्थान ढक देना जरूरी होता है।

[४]

डूस

जिस समय वृहद् अन्त्र (colon) से दूषित मल शीघ्र बाहर कर देना आवश्यक हो, उस वक्त साधारण अवस्थामें डूस लिया जा सकता है। किन्तु डूसकी आदत डालना या बार-बार डूस लेना कभी भी ठीक नहीं है। दो-एक बार डूस लेकर हिप बाथ (कटि-स्नान), गीली कमर-पट्टी अथवा पेड़ूमें मिट्टीकी पोलटिस इत्यादिका व्यवहार करने एवं पथ्यको नियन्त्रित रखनेसे डूस लेनेकी और जरूरत नहीं रहती। ऐसे समय हिपबाथ इत्यादिसे काम चल जाता है।

अगर पानी और शरीरका ताप समान हो तो डूससे बहुत फायदा होता है। इससे भी अधिक फायदा तब होता है जब ठीक ढंगसे ठंडे पानी (७०°) को काममें लाया जाता है। मामूली डूसके पानीकी गर्मी ७०° से ८०° तक होनी चाहिये। गरम पानीका व्यवहार करनेसे आँतें बहुत कमजोर हो जाती हैं। इसके दो-एक दिन बाद तक मलका स्वाभाविक जोर नहीं होता। अगर लगातार गरम पानीका ही व्यवहार किया जाय, तो आँतोंकी झिल्लियाँ ढीली पड़ जाती हैं और कई अवस्थाओंमें तो उनका आकार भी बढ़ जाता है; किन्तु ठंडे पानीके डूससे वृहदन्त्र (colon) की माँसपेशियाँ और स्नायु मजबूत हो जाते हैं और इससे वृहदन्त्रके भीतर एक प्रकारकी कसरत सी हो जाती है। कहनेका तात्पर्य यह है कि गरम पानी आँतोंको जितना ही कमजोर कर देता है ठंडा पानी उनको उतना ही मजबूत बनाता है।

कुछ लोग डूसके पानीके साथ साबुन मिला देते हैं, लेकिन पानीके साथ ऐसी चीजोंको न मिलाना ही अच्छा है ; क्योंकि साबुनके कितने ही जहरोंको शरीर सोख लेता है। अगर रोगीको जोरकी कब्जियत हो तो साबुनके बदले पानीमें कुछ शहद या नींबूका रस मिला देनेसे काफी मल बाहर निकल आता है।

काममें लानेके पहले डूस और उसकी नलीको खूब अच्छी तरह साफ कर लेना जरूरी है। अगर नलका पानी न मिले तो पानीको खौला कर ठण्डा कर लेना चाहिये। डूसको पलंगसे ऊंची एक जगह पर कीलीसे लटका देना चाहिये। डूसके अन्दर पानी भर उस मेंसे कुछ बाहर कर देना चाहिये। ऐसा करनेसे डूसकी नलीकी हवा बाहर निकल जाती है। अगर यह हवा रोगीके पेटके अन्दर चली जाती है तो दर्द पैदा हो सकता है। इसीलिये डूसके अन्दर फिर पानी देते समय इसमें काफी पानी होनेपर भी और पानी देना चाहिये। नहीं तो रोगीके पेटमें हवा घुस सकती है।

डूस
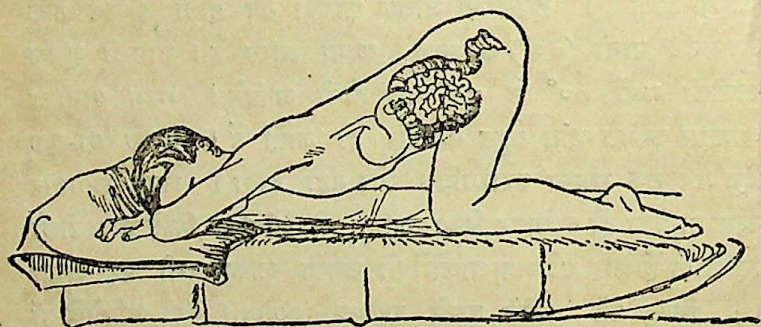
डूसका इस्तेमाल करनेके पहले क्याथिटरके सिरे और मलद्वारमें कुछ नारियलका तैल मल देना चाहिये।

डूस लेनेका सबसे आसान तरीका यह है कि जांघोंको गिराकर बैठ करके सिरको एक हाथके ऊपर रख शरीरको त्रिभुजकी दो भुजाओंकी तरह रखना चाहिये। इससे मलद्वार खूब ऊंचाई पर हो जाता है और पानी आसानीसे अन्दर चला जा सकता है। डूस लेनेका यह तरीका सबसे आसान और फायदेमन्द है। इस ढंगसे डूस लेनेसे मालूम भी नहीं पड़ता कि डूस ले रहे हैं और पानी भी बिना किसी तकलीफके काफी मात्रामें अन्दर पहुंच जाता है। इससे सारा बृहदन्त्र आसानीसे धुल कर साफ हो जाता है और रुका हुआ सारा मल उससे बाहर निकल आता है।

कमज़ोर रोगीको दो तकियों (पिण्डी) के ऊपर दाहिनी बगल सुलाकर डूस देना चाहिये। पीछेकी ओरकी तकियेके नीचे कुछ देकर उसे ऊंचा कर देना चाहिये; या रोगीको पीठके सहारे चित् सुलाकर नीचेमें एक तकिया रख देनेसे भी काम चल सकता है।

मलद्वारके अन्दर क्याथिटरको एक या डेढ़ इञ्च घुसाकर धीरे-धीरे पानी देना चाहिये। पानीको खूब जोरसे देनेके कारण रोगी ज्यादा पानी नहीं ग्रहण कर सकता है। जब पानी अन्दर जाने लगे तब क्याथिटरको दो इञ्च तक घुसाये रखिये। पानी जाते समय अगर जोरकी हाजत मालूम हो, तो थोड़े समयके लिये पानीको रोक देना चाहिये।

आँतोंके अन्दर मामूली तौरपर एक सेरसे लेकर सवा सेर तक पानी प्रवेश कराया जा सकता है। कभी भी डेढ़ सेरसे ज्यादा पानी प्रवेश नहीं कराना चाहिये। इससे बृहदन्त्रको नुकसान पहुंच सकता है।

डूस लेनेके बाद ५ से १० मिनट तक पानीको पेटमें रखना बहुत अच्छा है। इसके बाद हाजत करनेपर सारा रुका मल हड़हड़ाता हुआ बाहर निकल जाता है। हाजतको बैठनेके लिये पेड़ूको दाहिनी ओरसे बाईं ओरको अर्ध चन्द्राकार रूपमें बृहदन्त्रके ऊपर मलते

रहना चाहिये। ऐसा करनेसे वृहदन्त्रके समस्त विकार पानीके साथ बाहर हो जाते हैं।

वृहदन्त्रके भीतर मल जब बहुत दिनों तक जमा हो जाता है या इस जगहका मल जब पच जाता है, तो वह रक्त-स्रोतको प्रत्येक क्षण दूषित करता रहता है। ऐसी हालतमें इस प्रकारका एक डूस शरीरमें एकत्रित विषके बोझको एक क्षणमें दूर कर देता है।

वृहदन्त्रका भीतरी हिस्सा समतल नहीं है। इसकी कई पतोंमें बहुधा साल भरसे भी ज्यादे समय तक मल सूखकर जमा होता जाता है और इस एकत्रित मलमें कई तरहके जीवाणु और कृमि मय अपने अण्डोंके रहने लगते हैं। डूसके पानीके साथ ये बाहर निकल आते हैं।

जब कभी बुखार आनेकी सम्भावना हो, उस समय एक डूस ले लेनेसे फी सैकड़े ९९ ज्वरोंके हमले व्यर्थ हो जाते हैं। किसी भी बीमारीमें पहले एक बार डूस लेनेके बाद इलाज शुरू किया जा सकता है। इससे किसी भी तरहकी हानि नहीं होती है; बल्कि शरीरकी मुख्य-मुख्य आंतोंसे कूड़ा और विकारको निकाल देनेसे रोगमें फायदा ही पहुंचता है।

पुरानी कब्जियतके रोगोंमें बीच-बीचमें ठण्ढे पानीका डूस लेने से बहुत फायदा होता है; क्योंकि ठण्ढा पानी वृहदन्त्र और उसके भीतरकी श्लेष्मिक झिल्लीको मजबूत बनाता है और लीवरको उत्तेजितकर पित्तके वेगको बढ़ाता है।

डूसके लिये प्रत्येक समय ठण्ढे पानीका व्यवहार उचित होनेपर भी कभी किसी समय गरम पानीका इस्तेमाल भी जरूरी होता है। बुखारकी पहली हालतमें अगर जाड़ा और कँपकँपी हो, तो गरम पानीका ही डूस देना ठीक है। ऐसी हालतमें ठण्ढे पानीका डूस भूलकर भी नहीं देना चाहिये।

पेड़ूमें सूजन पैदा करनेवाले (inflamatory) जिस किसी भी रोगमें गरम पानीका ही डूस देना सर्वथा उचित है।

हैजा और मियादी बुखारमें जब रक्तके विषाक्त हो जानेके कारण रोगीके मूर्छित (collapse) होनेका भय हो, तो उस समय गरम पानीके डूसके समान और कोई उपकारी चीज नहीं है।

स्त्रियोंका रजोधर्म बन्द होने पर गरम पानीका डूस विशेष लाभदायक होता है। ऐसी हालतमें पानी कुछ ज्यादा समय तक पेटमें रखना जरूरी है।

[५]

दस्तावर दवाइयां (PURGATIVES)

कई लोग पेट साफ करनेके लिये दस्तावर दवाइयोंका इस्तेमाल करते हैं। लेकिन इनको तरह नुकसान पहुंचानेवाली और कोई चीज नहीं है। हर एक दस्तावर दवा पेटके लिये जहर है। यह जहर जिस किसी भी समय हमारे पेटमें जा पहुंचता है, उसी समय इसको शरीरसे दूर करनेके लिये आमाशयको बहुत-सा रस बाहर निकालना जरूरी हो जाता है। खाये हुए भोजनको पचानेके लिये शरीरके जो दूसरे यन्त्र रस निकालते हैं इससे उनमें से हर एक चंचल और उत्तेजित हो उठता है। उस समय इस जहरीली दवाको बाहर करनेके लिये इन सभी यन्त्रोंसे बहुत-सा द्रावक रस निकलता है, जिसके जरियेसे इकट्ठा हुआ सारा मल बाहर निकल आता है।

किन्तु पचानेवाला यह रस जो शरीरकी जान है बहुत-सा फजूल ही खर्च हो जाता है। उस समय ये सभी यन्त्र जिनके रसके कारण मल बाहर निकलता है कमजोर हो जाते हैं, जिससे मल और भी सख्त हो जाता है। ऐसी हालतमें और भी तेज दस्तावर दवाइयोंकी जरूरत पड़ती है। इससे शरीरके यन्त्र धीरे-धीरे और भी कमजोर होते जाते हैं। आखिरकार ऐसी हालत हो जाती है कि कोई भी बाजारू दस्तावर दवा पेट साफ करनेमें कामयाब नहीं होती।

चतुर्थ अध्याय

——::*::——

शरीरको दोषमुक्त करनेके उपाय

[१]

हम लोगोंका शरीर जब दूषित पदार्थोंसे बहुत ज्यादा भारी मालूम होने लगता है तब प्रकृति उन्हें नष्ट करनेके लिये सारे शरीरमें एक उत्तापकी सृष्टि करती है। इसके बाद प्रकृतिकी अथक चेष्टाओंके फलस्वरूप जब रोमकूप खुल जाते हैं तब बहुत-सा विजातीय और दूषित पदार्थ पसीनेके साथ बाहर निकलता एवं अन्यान्य मार्गोंसे भी बाहर हो जाता है। बुखार तब अपने ही आप छूट जाता है।

हम लोग भी ठीक प्रकृतिका अनुसरण कर शरीरके दूर-दूरके हिस्सोंमें अवस्थित सारे कूड़े-कर्कटको उत्ताप इत्यादिकी सहायतासे गलाकर रोम-कूपों एवं शरीरके विभिन्न मार्गोंसे बाहर कर सकते हैं। इस प्रकार उत्तापकी सहायतासे शरीरको कई प्रकारसे दोष-मुक्त किया जा सकता है। वाष्प-स्नान (steam bath) ही इन मेंसे सबकी अपेक्षा अधिक प्रचलित है।

वाष्प-स्नान (STEAM BATH) लेनेकी पद्धति

रोगीको बेंतकी एक छिद्रवाली कुर्सीपर बैठाकर बड़े ही अच्छे तरीकेसे स्टीमबाथ दिया जा सकता है। रोगीके सामने एक कम्बल तथा उसके पीछे एक और कम्बल इस तरह ओढ़ा देना चाहिये जिससे कुर्सी समेत रोगीका गले तक सारा शरीर ढक जाय एवं कम्बल जमीनको

छूते रहें। कम्बल न रहनेपर सुजनी वगैरहसे भी काम चल सकता है। इनके अन्दर भाप पहुंचा देनेसे ही उत्तम स्टीमबाथ हो जाता है।

भाप पैदा करनेके लिये दस बारह आनेके खर्चमें कौरगेट टीनका एक वाष्प-उत्पादक पात्र (steam generator) तैयार किया जा सकता है। बन्द मुखवाले एक टीनके डिब्बेके ऊपर टीनकी एक नली लगाकर उससे एक रबरकी नलीके द्वारा कुर्सीके नीचे भाप पहुंचाई जा सकती है। सबसे अच्छा तो यह होता है कि यदि एक ही साथ लगे हुए (at right angles) तीन टीनकी नलें रबरकी नलीके साथ मिला दी जायँ।
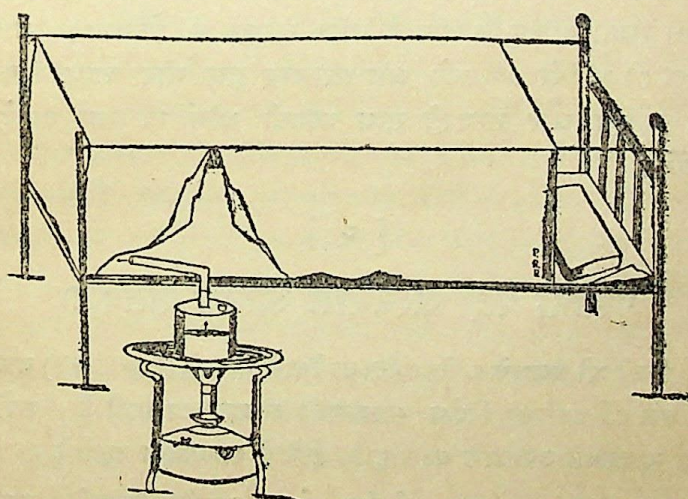
वाष्पस्नान (steam bath)

टीनके इन तीन नलों में से दोके अन्तिम सिरे अवश्य बन्द रहने चाहिये और नलमें भी कई छोटे-छोटे छेद होने जरूरी हैं। ऐसा होनेसे भाप केवल एक स्थानसे ही न निकल, कई रास्तोंसे होकर रोगीके शरीरमें लगती है। भाप पैदा करनेवाले बर्तनको पानीसे आधा भरकर किसी स्टोभ या चूल्हेपर रख देना चाहिये। पानीके कुछ खौलनेपर भाप

निकलने लगेगी। बहुत दिनों तक सोचनेके बाद भाप लेनेकी यह विधि अचानक मेरे मनमें आई। वाष्प-स्नान करनेकी जितनी भी विधियाँ हैं उनमें सबसे अधिक आसान और सर्वोत्तम विधि यही है।

अगर घरमें छिद्रवाली कुर्सी न हो तो एक कम ऊंची मशहरी तैयार करा लेनेसे भी उसके द्वारा अच्छी तरह स्टीमबाथ लिया जा सकता है। मशहरी मोटे मारकीन कपड़ेकी होनी चाहिये और उसे कम्बलसे अच्छी तरहसे ढक देना चाहिये।

यदि स्टोभके न रहनेपर चूल्हेका व्यवहार किया जाय तो इस बातका ख्याल रखना चाहिये कि आगकी आँच ज्यादा न हो जाय। भापके ज्यादा हो जानेपर कम्बलको जरा सरकाकर कुछ भाप बाहर निकाल देनी चाहिये और साथ ही साथ आगकी आँच भी कम कर देनी चाहिये।

[२]

पसीना पैदा करनेवाले स्नानमें सतर्कता

किसी भी प्रकारके पसीना पैदा करनेवाले (sweating bath) बाथके लेते वक्त कई प्रकारकी विशेष सतर्कताकी आवश्यकता होती है; क्योंकि ऐसा न करनेसे उपकारके बदले हानि होनेकी सम्भावना रहती है।

स्नान (bath) करनेके पहले सिर, मुंह और शरीरको अच्छी तरह ठण्डे पानीसे धो लेना जरूरी है। इसके बाद एक गिलास गरम पानी पीकर मशहरी अथवा कम्बलके भीतर चला जाना चाहिये। फिर भीतर जाकर शरीरके सभी कपड़ोंको उतार डालना चाहिये। मुंह और सिर हमेशा बाहर रहने चाहिये। यदि मशहरीमें बाथ लेना हो तो रोगीके लेट जाने पर भापकी नलीको पैरोंके पाससे मशहरीके भीतर डाल देना चाहिये। दोनों पैरोंको नलीके मुंहसे हमेशा दूर रखना

चाहिये और इस बातके लिये अत्यन्त सावधान रहना चाहिये जिससे कि भापसे पैर न जलने पावें। भाप नलीसे निकलकर सीधे रोगीके शरीर पर कभी भी नहीं लगनी चाहिये। जिस प्रकार भाप घूमकर रोगीके शरीर पर लगे ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये। इसलिये नलीका मुंह रोगीके शरीरसे दूसरी ओर घुमा देनेसे काम चल सकता है।

रोगीको सुलाकर या एक कुर्सीपर बैठा एक गमछे या तौलियेको ठण्डे पानीमें डुबोकर गीली हालतमें ही रोगीके सिरके चारों ओर लपेट देना चाहिये। बाथ लेते समय इस तौलियेपर समय-समयपर ठण्डा पानी छिड़कते रहना चाहिये, क्योंकि सिरको ठण्डा रखना जरूरी होता है। लेकिन जरूरतसे ज्यादा पानी छिड़कना भी ठीक नहीं है; क्योंकि इससे पसीनेका बहाव रुक सकता है। जाड़ेके दिनोंमें सिर पर कम पानी देनेसे भी काम चल सकता है। मशहरी या कम्बलके भीतर भाप भर जानेसे एक और दूसरे गमछेको ठण्डे पानीमें भिगोकर रोगीके गलेके चारों तरफ घुमाकर अलग लगा देना चाहिये। इसके बाद शरीरके गरम हो जानेपर और दो रूमाल भिगोकर एक को हृदयके और दूसरेको जननेन्द्रियके ऊपर रखना होता है। जाड़ेके दिनोंमें जननेन्द्रियके ऊपर रूमाल न रखनेसे भी काम चल जाता है; किन्तु गर्मीके दिनोंमें यह व्यवस्था करनी आवश्यक है। बाथ (स्नान) खतम होनेके पहले ही ये सब गमछे या रूमाल सूख जांय अथवा ज्यादा गरम हो जायं तो उनको फिर ठण्डे पानीमें डुबो लेनेसे काम चल सकता है।

बाथ लेते समय रोगीको नम (सम शीतोष्ण) पानी पिलाते रहना जरूरी है। अगर मशहरीमें बाथ लें, तो बीच-बीचमें रोगीको करवटें बदलाते रहना चाहिये, जिससे उसके शरीरके सभी हिस्सोंमें भाप लगे। रोगीको अच्छी तरह पसीना आनेके ६ से १५ मिनट बाद भाप बन्दकर देनी जरूरी है। मामूली गर्मीके

दिनोंमें २० से ३० मिनट तक भाप लेना काफी है और जाड़ेके दिनोंमें ३० से ४५ मिनट तक। भाप यथेष्ट समय तक ली गई है, इसकी जानकारीका उपाय यही है कि उस समय मोतियोंकी तरह पसीनेको हजारों बूंदोंसे नासिका भर जाती है या ये मिलकर गिरने लगती हैं। भाप बन्द कर देनेके पांच मिनट बाद सिर और शरीरके अन्यान्य भागोंके भींगे गमछे अथवा रूमालोंको हटा लेना चाहिये। जाड़ेके दिनोंमें भाप बन्द कर देनेके बाद ही हटा लेना आवश्यक है। इसके बाद दस मिनट तक रोगीको बिस्तरेपर लेटा रहना चाहिये। इस समय एक सूखे कपड़ेसे बार-बार पसीना पोंछ लेना आवश्यक है। इसके बाद नम पानीमें एक तौलिया डुबोकर फिर यथेष्ट गीले इस तौलियेसे रोगीके मुखको पोंछ कर उसके हाथमें दे देना चाहिये ; ताकि रोगी बार-बार इस तौलियेसे रगड़ कर अपनी देहको ठण्डा करे। दो-एक मिनट बाद जब तौलिया गरम हो उठे, तब इसे पानीमें डुबोकर फिर रोगीके हाथमें देना चाहिये। इसी तरह दस मिनट तक अथवा इससे ज्यादे समय तक जब तक कि सारा शरीर ठण्डा न हो जाय तब तक कम्बल या मशहरीको उठाये बिना शरीरको पोंछते रहना चाहिये। रोगी कमजोर हो तो उसके शरीर पर हवा न लगनेका उपाय कर कोई दूसरा व्यक्ति उसके शरीरको ठण्ढा कर सकता है। पहले नम पानीका व्यवहार करनेके पश्चात् दो-एक मिनट बाद क्रमशः अधिक ठण्डे पानीका व्यवहार करना जरूरी है। ठण्डे पानीसे शरीर पोंछनेमें किसी प्रकारका डर नहीं करना चाहिये। शरीर जब तक गरम रहता है तब तक ठण्डा जल किसी प्रकारकी हानि नहीं पैदा कर सकता, बल्कि इससे रोगीकी जीवनी शक्ति बहुत अधिक बढ़ जाती है।

शरीर पोंछ लेनेके बाद ही १५ मिनटसे लेकर आधे घण्टे तक हिप-बाथ लेना आवश्यक है। हिप बाथके बाद बन्द कमरेमें ठण्डे पानीसे

पूर्ण स्नान कर लेना भी जरूरी है। स्नान करते समय सारे शरीरको खूब अच्छी तरह रगड़ रगड़ कर स्नान करना चाहिये।

स्नान खतम कर लेनेके बाद ही फिर चमड़ेमें गर्मी लौटा लाना विशेष आवश्यक है। इसलिये स्नान पूरा हो जानेके बाद ही कम्बल आदिसे गले तक सारे शरीरको ढक लेनेसे चमड़ेमें स्वाभाविक गर्मी आ जायगी। फिर कपड़े पहन लेने चाहिये।

स्नान करनेके एक घण्टे बाद आधे नींबूके रसके साथ एक गिलास ठण्डा पानी पी लेना आवश्यक है। ठण्डा पानी पी लेनेके एक घण्टे बाद भूख लगने पर रोगी नारंगी, दूसरे फल या दूध इत्यादि हलका पथ्य खा सकता है। किन्तु दिन या रातका प्रधान भोजन ४ या ५ घण्टेके आरामके पहले करना कभी भी उचित नहीं है। स्टीम बाथ लेनेके पहले भी उसे पांच छः घण्टे पूर्व कुछ भी नहीं खाना चाहिये। इसीलिये अधिक समय तक स्टीमबाथ लेनेके लिये खाली पेट सुबहका वक्त ही सबसे उपयुक्त समय है।

स्टीमबाथ द्वारा शरीरसे बहुतसे जलीय पदार्थ बाहर हो जाते हैं। इसीलिये स्टीम बाथके दिन एवं उसके बाद और तीन-चार दिन तक रोज नींबूके रसके साथ ६ से ८ गिलास तक पानी पीना जरूरी है। इसके सिवा कई दिनों तक खूब फल, सब्जी तथा सवेरे बेलका सरबत अथवा बेलका मुरब्बा और हो सके तो एक वक्त भात और दूसरे वक्त रोटी खानी जरूरी है। ऐसा करनेसे स्टीम बाथ द्वारा शरीरके अन्दरसे जो विजातीय पदार्थ अलग हो जाते हैं वे आसानीसे मल-मूत्र द्वारा शरीरसे बाहर निकल आते हैं।

स्टीमबाथ लेनेके पहले पेड़ूको साफ कर लेना जरूरी है। यदि रोगीका पेट साफ न हो तो हमेशा पहले रोगीका पेट साफ कर लेना चाहिये। इसके बाद स्टीम बाथ लेना उचित है। जरूरी मौकों पर

इसीलिये इसका व्यवहार करना आवश्यक है। यह विधि नितान्त आवश्यक है अतः इसका उल्लङ्घन कभी भी नहीं होना चाहिये।

दूसरे प्रकारसे भी आसानीके साथ स्टीमबाथ लिया जा सकता है। बेंतकी दूर-दूर बुनी हुई एक कुर्सी पर बैठकर शरीरको गलेसे पैरों तक चारों तरफ दो कम्बलों अथवा सुजनियों इत्यादिसे अच्छी तरह ढक लेना होता है। इसके बाद एक हाँड़ी या अन्य किसी बर्तनमें खौलते हुए पानीको लेकर उसे इस कुर्सीके नीचे रख देना चाहिये। कुछ समय बाद भापका जोर कम हो जाय जो इस हांड़ीको उठाकर उसकी जगह पर दूसरी खौलती हुई हाँड़ी रख देनी चाहिये।

[३]

स्टीम-बाथसे लाभ

डाक्टरी शास्त्रोंमें वर्णित ऐसे बहुत ही कम रोग हैं, जिनमें कोष्ठ साफ करनेके बाद स्टीमबाथ लेनेसे आरोग्य लाभ न हो। क्योंकि इसके द्वारा रोगके असली कारणको शरीरसे निकाल कर बाहर कर दिया जाता है। पर कई प्रकारके रोगोंमें तो यह विशेषकर लाभदायक होता है। सब प्रकारके वात रोगोंको दूर करनेमें स्टीमबाथ अपना सानी नहीं रखता। साइटिका और कमरके वात इत्यादि विभिन्न प्रकारके वात रोगोंमें यह समान प्रकारसे लाभ पहुंचाता है। पक्षाघात रोगमें भी इससे अत्यन्त लाभ पहुंचता है।

सब प्रकारकी मुटाई (obesity) के लिये स्टीमबाथ एक प्रधान चिकित्सा है। खूब पानी पीने और फलाहारके साथ स्टीमबाथ लेनेसे शरीरका वजन और आकार क्रमशः अपनी स्वाभाविक अवस्थामें आ जाते हैं। जिन लोगोंका पेट बढ़ गया हो, स्टीम बाथ उनके लिये अमोघ चिकित्सा है।

मुर्शिदाबाद जिलेके एक हाई स्कूलके हेड मास्टर श्री यतीन्द्रनाथ चक्रवर्त्ती अत्यन्त मोटे हो गये थे। बहुत दिनों तक नाना प्रकारकी चिकित्सा कराने पर भी वे अपने शरीरको ठीक न कर सके। अन्तमें कलकत्ते आकर उन्होंने मुझसे करीब डेढ़ महीना चिकित्सा करवाई। इतने ही समयके अन्दर केवल पानी पिलानेके साथ-साथ स्टीम बाथ देने मात्रसे ही उनका शरीर अपनी स्वाभाविक अवस्थामें आ गया।

श्रीहट्टके जमींदार श्री कृष्णकिशोर स्वामीने अपने रोगोंके सम्बन्धमें मुझे बुलाया। उनके पेटमें बहुत ज्यादा चर्बी जमा हो गयी थी। मेरी बतलाई हुई चिकित्साके अनुसरण करने और प्रधानतः स्टीमबाथसे कुछ ही दिनोंमें उनके शरीरकी सारी चर्बी गायब हो गई।

इसी प्रकार मैंने अनेकों चर्बीवाले रोगियोंको खान-पानके संयमके साथ जल-चिकित्साके द्वारा चंगा किया है। सावधानीके साथ चिकित्सा करनेसे खूब मोटे आदमीको भी स्वाभाविक रूपमें लाया जा सकता है। पर इस विषयमें खूब सावधान रहनेकी आवश्यकता है कि मोटे आदमीको तुरन्त बहुत पतला न किया जाय।

पुराने ब्राँकाइटिस रोगमें यह विशेष उपकारी है। कोष्ठ साफ रखकर कुछ दिन तक स्टीम बाथ जारी रखनेसे धीरे-धीरे छाती साफ हो जाती है।

सब प्रकारके अजीर्ण रोगोंमें स्टीम बाथ नये जीवनका संचार करता है। स्टीम बाथ लेनेके बाद शरीरमें पानीकी इस तरह कमी हो जाती है कि इससे आंतोंमें खाये हुए भोजनसे रस शोषणकी शक्ति कई गुना ज्यादा बढ़ जाती है। इसी कारण स्टीम बाथ पौष्टिकता प्राप्त करनेका एक मुख्य उपाय है।

खाज-खुजली इत्यादि चर्म-रोगोंके लिये भी यह एक अव्यर्थ औषधि है। चर्म-रोग कितना ही पुराना और भयंकर क्यों न हो, दो एक बार स्टीम बाथ लेनेसे आश्चर्यजनक लाभ होता है। एक बार यशोहर

जिलेके सोनापुर नामक गाँवके श्री नरेन्द्रनाथ नामके एक व्यक्ति चर्म-रोगकी चिकित्सा करानेके लिये मेरे पास आये। जब उन्होंने कपड़े उतारे, तो उनके नंगे शरीरको देख कर मैं सिहर उठा। पैरोंसे लेकर गले तक उनके शरीरमें एक इञ्च भी ऐसा स्थान नहीं था, जिसमें दाद-खुजली और पपड़ियाँ न हों। उनकी दाद कहीं-कहीं तो हाथ-हाथ भर तक फैली हुई थी। जगह-जगह उनमें फुन्सियाँ उठकर घावोंमें परिणित होकर अन्तमें पुराने पपड़ीका रूप धारण कर ली थी। उन्होंने मुझसे कहा कि बचपनसे अबतक वे आध मन मलहम और अनेकों इन्जेक्शनोंका व्यवहार कर चुके हैं। परन्तु अभीतक किसीसे कुछ भी फायदा नहीं हुआ। मैंने उन्हें एक लम्बे स्टीम बाथका प्रयोग कराया। इसके बाद देशमें जाकर प्रत्येक दिन स्नान के पहले देहमें ताजी कादा मिट्टी लगाकर आध घण्टेसे लेकर एक घण्टे तक सूर्य-स्नान (sun bath) के बाद स्नान करनेकी व्यवस्था दी। एक-एक महीनेके बाद कई एक स्टीम-बाथ लेनेके लिये भी मैंने उनसे कहा। पेट साफ रखनेके लिये बेल और अमरूद खाने और खूब परिमाणमें पानी पीनेको कहा। तीन महीने बाद वे फिर मुझसे मिलने आये। इस बार उनका चेहरा देखकर मेरे आश्चर्यका कोई ठिकाना न रहा। शरीरमें कहीं भी किसी प्रकारके खाज और घावका कोई नामोनिशान भी न था। कई स्थान तो स्वाभाविक शरीरके समान ही निर्मल हो गये थे। कहीं-कहीं पर बड़े-बड़े दादोंके चिन्ह मात्र बाकी थे। पहले जो असह्य चिलक होती थी, वह भी अब गायब हो गई थी।

दूसरे रोगोंके लिये भी जब कभी लोगोंको स्टीम बाथ दिया तब भी देखा कि उनके शरीरके बहुत दिनोंके घाव पपड़ी इत्यादि सूखकर आराम हो गये हैं; क्योंकि चर्म रोगके कीटाणु जो चमड़ेके भीतर विजातीय पदार्थोंमें घर बना लेते हैं, वे स्टीम बाथसे इस विजातीय

पदार्थके साथ साथ बाहर निकल आते हैं। तब चर्म-रोग अपने आप आराम हो जाता है।

हैजेकी बीमारीमें हलका स्टीम-बाथ देनेसे अत्यन्त लाभ होता है। स्टीम-बाथके द्वारा रोगकी गतिको आंतोंकी ओरसे चमड़ेकी ओर फेर देने और रोगीको पसीना ला देनेसे तुरन्त फायदा होता है। पेशाबके रोकनेवाले (uraemia) रोगमें भी स्टीम-बाथ रोगीको बचानेके लिये एक अचूक दवा है।

अम्ल रोगमें यह मन्त्र-शक्तिकी तरह काम करता है। रसा रोडके मि० दासगुप्त महाशयकी स्त्रीको अम्लके कारण दिनमें ३०।४० बार कै आती थीं। वे जो कुछ खाती थीं उसका दसगुना कै कर डालती थीं। कुछ भी खा लेनेसे ही उन्हें अम्ल हो जाता और अम्लसे गले तक जलन होने लगती। सब प्रकारकी दवाओंका प्रयोग कर लेने पर मि० दासगुप्तने मुझे बुलाया। मैं पहुंचा, तो दो व्यक्तियोंने रोगीको उठाकर मेरे सन्मुख रखा। उनकी तकलीफको भाषा द्वारा प्रकट करना असम्भव है। हाथ पैर और सारा शरीर जल रहा था। चारों ओर निराशा तथा रोगिणीके मुँहसे सर्वदा कराहकी आवाज निकल रही थी। घरमें सभीकी धारणा थी कि रोगिणी अब नहीं बचेगी। उस समय मि० दासगुप्तकी एक लड़की मैट्रिकमें पढ़ती थी। मैंने जब रोगिणीको देखकर कहा कि मैं एक महीनेके अन्दर इन्हें चंगा कर दूंगा, तो वह लड़की मारे आनन्द और आश्चर्यके बोल उठी, कि क्या मां अच्छी हो जायेंगी! इसके दूसरे ही दिन रोगिणीको एक स्टीम-बाथ दिया गया। केवल एक बारके स्टीम-बाथ देनेसे रोगिणीको ४० की जगह केवल दो बार कै हुईं। शरीरकी जलन और अन्य यन्त्रणायें भी कम हो गयीं। रोगिणी पानी भी नहीं हजम कर सकती थी। स्टीम-बाथके बाद वह ५।६ गिलास पानी पीने लगी। इसके बाद उसको रोज हिप-बाथ और बीच-बीचमें कमरपर गीली पट्टी बाँधनेकी व्यवस्था की गई। इसके कई महीने बाद वे पूर्ण रूपसे आराम हो गईं।

४

किन्तु इस बातका ख्याल रखना जरूरी है कि स्टीम-बाथसे शरीरके दोष रहित होने पर भी हिप-बाथसे ही पाकस्थलीकी ग्रन्थियोंकी उत्तेजना दूर होती है। इसीलिये अम्लके रोगियोंको दिनमें दो बार हिप बाथ लेना अत्यन्त आवश्यक है।

सब प्रकारकी शूल-वेदना स्टीम-बाथ द्वारा आराम होती है। क्योंकि अधिकांश अवस्थाओंमें रोगीको पसीना ला देनेसे आराम हो जाता है।

सिफलिस तथा गनोरियामें यह विशेष कर लाभदायक होता है। इन सभी रोगोंमें इसको कई दिनों बाद बीच-बीचमें लेना आवश्यक होता है।

पित्त-पथरीमें (gall stone) बिना आपरेशनके और कोई दूसरा उपाय नहीं है। किन्तु स्टीम-बाथ द्वारा इस रोगमें निश्चय ही आराम पहुंचता है। पवना जिलेके श्रीसुरेशचन्द्र घोष कलकत्तेकी किसी इन्स्योरेन्स कम्पनीमें काम करते थे। उनकी स्त्रीको कठिन पित्त-पथरीका रोग था। प्रत्येक महीनेमें दो या एक बार उनको दर्द उठता था। उस समय उनकी दर्दभरी चीखके कारण घरमें कोई नहीं रह सकता था। सुरेश बाबू के एक भाई कलकत्ता कारपोरेशनमें डाक्टरके पदपर नियुक्त थे। अतः कलकत्तेके बड़े-बडे डाक्टरोंकी चिकित्सा करानेमें किसी प्रकारकी कमी न की गई। सब तरहकी दवा-दारूके बाद डाक्टरोंने अपना मत प्रकट किया कि अब आपरेशनके बिना और कोई उपाय बाकी नहीं है। किन्तु स्त्री किसी प्रकार भी आपरेशन करानेके लिये राजी नहीं हुई। अतः एक बार अन्तिम चिकित्सा करानेके लिये मुझे बुलाया गया। मैंने जाते ही उनको एक स्टीम बाथ दिया। रोगिणीका कोष्ठ बिलकुल साफ न था। तीन-चार दिन बाद उसको टट्टी होती थी। पानी भी वह बहुत कम पीती थी। मैंने उसको रोज हिप-बाथ लेने और खूब पानी पीनेको कहा। इसके साथ ही साथ निर्दिष्ट पथ्य भोजनकी भी व्यवस्था कर

दी। मेरी चिकित्सा आरम्भ कर देनेके बाद उनको केवल एक बार दर्द उठा। मैंने लिवरके ऊपर आध घण्टेतक गरम सेंक करनेके बाद दस मिनट तक जलपट्टी देनेके लिये कहा। उसका दर्द तीन दिनसे पहले थोड़ी भी देरके लिये नहीं रुकता था। किन्तु एक बार गरम सेक करने और उसके बाद दस मिनट तक शीतल पट्टी देनेके बाद ही रोगिणीको नींद आ गई। इसके बाद फिर कभी उन्हें दर्द नहीं उठा। इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने इसके कई दिन बाद तक यह इलाज जारी रखा।

श्वास-रोगके रोगी समय-समय पर अत्यन्त कष्ट पाते हैं। स्टीम-बाथ उनका यह कष्ट बहुत कम कर देता है।

वात रोगको जड़से उखाड़ फेंकनेमें इसके जोड़का कोई दूसरा इलाज नहीं है। मेरी मां बहुत समयसे वात रोगसे तकलीफ पा रही थीं। इसके लिये उन्होंने बहुत कुछ किया भी। किन्तु इससे उनको कोई स्थायी लाभ नहीं हुआ। कविराजोंने कहा कि मां का यह रोग दूर नहीं हो सकता। क्योंकि मेरी नानीको भी बात रोग था। उन्होंने बहुत दिन तक इस बीमारीसे पीड़ित होकर बड़े कष्टसे देह त्याग किया था। मेरी माताजीकी भी शायद यही हालत होती। किन्तु नियमित रूपसे कई दिन तक स्टीम-बाथ लेनेसे माताजीका यह वात रोग जाता रहा।

जो लोग किसी प्रकारकी कसरत नहीं करते उनके लिये छः महीनेमें एक बार स्टीम-बाथ लेना अत्यन्त आवश्यक है। इससे कई दिनोंकी शारीरिक परिश्रम न करनेकी ग्लानि जाती रहती है।

स्टीम-बाथसे इस प्रकारकी हमारी कई बीमारियाँ और ग्लानियाँ जाती रहती हैं।

तथापि सभी अवस्थाओंमें स्टीम-बाथका प्रयोग करना ठीक नहीं है। जो रोगी बहुत कमजोर हों, जिनका हृदय कमजोर अथवा खराब हो, जिनको यक्ष्मा तथा अन्यान्य क्षयकारक रोग हों, जिनके सिरमें रक्त हीनताका रोग हो, जिनके किसी अंगमें सूजन होता हो, जो बहुमूत्र रोगसे

पीड़ित और दुबल हो गये हों एवं जो नये ज्वरसे पीड़ित हों, उनको कभी भी स्टीम-बाथ नहीं देना चाहिये। इन लोगोंको स्टीम-बाथके बाद वाली चादरकी लपेट (आगे देखें) देनी उचित है। बच्चे और बुड्ढोंको बड़ी सावधानीसे स्टीम-बाथ देना उचित है। उनको कहीं छोटी और हल्की आँचकी स्टीम-बाथ देना ही उचित है।

बहुत लम्बे समय तक स्टीम-बाथका प्रयोग करना कभी भी उचित नहीं है। क्योंकि इससे फायदेके बदले नुकसान होनेकी सम्भावना होती है। जल-चिकित्सा हमेशा थोड़ी ही करनी अधिक अच्छी है। कभी भी इसको ज्यादा समय तक नहीं लेना चाहिये। पहली बार स्टीम-बाथसे वजन बहुत कुछ कम हो जाता है। किन्तु इससे घबड़ाना नहीं चाहिये। क्योंकि शरीरके अन्दर मरे हुए जीव-कोष और विजातीय पदार्थ जो बाहर न निकलनेके कारण जमा रहते हैं, वे स्टीम-बाथके बाद अलग अलग रास्तोंसे बाहर निकल आते हैं। समय-समय पर आध घण्टेके स्टीम-बाथके बाद दो तीन सेर वजन कम हो जाता है। किन्तु इसके कुछ दिनों बाद शरीरमें नये तन्तुओंकी सृष्टि हो जाती है, माँस-पेशियाँ गठित हो जाती हैं और शरीरका वजन भी पहलेसे बढ़ जाता है। यही कारण है कि बहुत पुराने रोगोंमें स्टीम-बाथ नये जीवनका संचार करता है।

समय-समय पर थोड़े समयवाले स्टीम-बाथोंसे बहुत फायदा पहुंचता है। जिन लोगोंका शरीर बहुत खराब हो गया है, यदि वे लोग कई दिनोंतक तीनसे छः मिनट तक हल्का स्टीम-बाथ लें और बादमें ठण्डे पानीसे स्नान करें, तो थोड़े ही दिनोंमें उनका पहला स्वास्थ्य लौट आयेगा। शरीरको इस प्रकार थोड़े समयके लिये गरम कर फिर ठण्डे पानीसे धो लेनेमें जो संजीविनी और उद्दीपक शक्ति है वह और किसीमें नहीं है।

इस प्रकार थोड़े समयके लिये स्टीम-बाथ लेनेसे कुछ दिनों तक रोज बाथ लिया जा सकता है।

जो लोग हृदयके विभिन्न रोगोंसे कष्ट पा रहे हों, वे हृदयपर एक गीली तौलिया रख कर रोज स्नानके पहले करीब ३ से ६ मिनटतक स्टीम-बाथ लें और इसके बाद सिरपर ठण्डक पहुंचा पैरोंको गरम पानीमें रख कर यदि हिप बाथ लें, तो उनका हृदय शीघ्र ही स्वस्थ हो जायगा। इससे शरीरकी सारी ग्लानियाँ मिट जायेंगी।

महाप्राण अब्दुल करीम, रिटायर्ड इन्सपेक्टर आफ स्कूलस्, हृदयशूलकी बीमारीसे बहुत दिनोंसे भुगत रहे थे। भींगी चादरकी लपेट (पैक), भींगी कमर पट्टी आदि अन्यान्य जल-चिकित्साके साथ-साथ कुछ दिन इसी प्रकार स्टीम-बाथ लेने मात्रसे ही रोगसे छुटकारा पा गये। उनका साधारण स्वास्थ्य भी काफी सुधर गया।

बारीसालके रिटायर्ड डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट श्रीयुत कालीप्रसन्न विश्वास हृदयकी बीमारीसे भुगत रहे थे। उनमें हार्ट-फेल होनेके विभिन्न लक्षण भी दिखाई पड़ रहे थे। उनकी उम्र ७१ वर्षकी थी। इसलिये स्थानीय डाक्टरोंमें से बहुतोंने उनसे कहा था—अब चिकित्सा कराने से क्या लाभ है! अब भगवानका नाम लीजिये। वे मुझे बारीसाल ले गये। मैंने वहाँ ५।६ दिन रह कर उनकी चिकित्सा की। एक दिन हँसते हुए उन्होंने मुझसे कहा, "देखिये हमारे दादा १०६ वर्षकी उम्रमें मरे और माताका स्वर्गवास ९७ वर्षमें हुआ। इसके अतिरिक्त मैं इतने रुपयेकी पेन्शन पाता हूं। मैं परिवारकी एक सम्पत्ति हूं। फिर भला, मैं अभी क्यों मरूं।" मैंने ऊपर बताई हुई विधिके अनुसार उनकी चिकित्साकी व्यवस्था कर दी। वे शीघ्र ही चंगे हो गये। अब वे आशा करते हैं कि वे अपनी माँ की तरह ही दीर्घायु होंगे।

इस पद्धतिके द्वारा मैंने इतने हृदय-रोगियोंको चंगा किया है कि यदि उनके विवरण लिखे जांय, तो अनेकों पेज रंग जायेंगे। हृदय रोगकी चिकित्सामें हमेशा ही विशेष सावधानीकी जरूरत होती है।

[४]

पैरोंके लिये गरम स्नान (HOT FOOT-BATH)

'स्टीम-बाथ' से जो फायदे होते हैं, प्रायः वे सभी लाभ पैरोंके लिये गरम स्नान इत्यादि पसीना पैदा करनेवाले (sweating bath) स्नानों द्वारा प्राप्त हो सकते हैं।

रोगीको सुलाकर, बैठाकर या आधा लिटाकर यह बाथ दिया जा सकता है। रोगीके जाँघोंसे लेकर गले तक सारे शरीरको कम्बल या लिहाफसे ढक देना चाहिये। फिर एक गरम पानीवाले बर्तनमें घूंठीके चार अंगुल ऊपरसे सन्धि भागके नीचे तक डुबो कर रखना चाहिये। गमले, बाल्टी, टब अथवा किसी बर्तनमें यह बाथ लिया जा सकता है। पानीके बर्तनको बिस्तरेसे बाहर रखना चाहिये। क्योंकि ऐसा न करनेसे बिछौना भीग जा सकता है; या बिछौनेके ऊपर एक आयल क्लाथ बिछा कर उसके ऊपर बर्तन रखना चाहिये। जल कुछ अधिक गरम होनेसे (१०४° से ११२°) अच्छा और लाभ दायक होता है; किन्तु कम गरम बाथसे शुरू कर धीरे-धीरे बर्तनमें अधिक गरम पानी डाल कर उसकी गरमी क्रमशः बढ़ा देनी चाहिये।

पानीके ठण्डा हो जानेपर बीच-बीचमें उसको बाहर निकाल कर उसमें गरम पानी मिलाते रहना चाहिये। इसमें विशेष सावधान रहना जरूरी है; क्योंकि पानी उड़ेलते समय रोगीके पैरों पर गरम पानी गिरना नहीं चाहिये। गरमीके दिनोंमें इस बाथसे १५ से २५ मिनटोंके भीतर ही खूब पसीना आता है। जाड़ेके दिनोंमें कुछ अधिक समय लगता है। दोनों पैरोंको जितना अधिक डुबाया जाय उतनी ही जल्दी इसका असर होता है। यह बाथ लेनेपर रोगीको आधे मिनट तक दोनों पैरोंको ठण्डे पानीमें डुबो कर यह स्नान समाप्त करना चाहिये। किन्तु इसमें भी बाथ लेने के पहले निम्न-पेट साफ कर सिर, मुंह और शरीरको धोकर सिरपर गीली तौलिया लपेट कर एवं बाथके अन्तमें कम गरम पानीसे शरीरको पोंछ कर कटि-स्नान लेकर फिर इसके बाद थोड़े नीबूके रसके साथ बार-बार पानी पीकर यह बाथ समाप्त करना चाहिये। इस बाथको पूरे समयके लिये लेनेपर इन सब नियमोंका पालन करना आवश्यक है।

गरम पाद-स्नान (Hot foot-bath)

स्टीम-बाथकी तरह पैरोंके लिये गरम स्नान द्वारा रोम-कूपोंको खोल कर शरीरका यथेष्ट दूषित और विजातीय पदार्थ बाहर किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इस बाथसे कई विशेष उपकार भी होते हैं। पैरोंके लिये गरम स्नानसे अतड़ियाँ, मूत्राशय और पेडूकी अन्यान्य अंतड़ियोंमें खूनका दौरा होता है जिससे वे सबल होती हैं।

जिन स्त्रियोंका बीच-बीचमें मासिक धर्म बन्द हो जाता है उनको कुछ दीर्घकालतक यह बाथ लेनेसे विशेष लाभ पहुंचता है। इससे जरायु (uterus) तथा डिंवकोशमें प्रचुर रक्त जाता है, जिससे इन अंगोंमें सबलता आती है और इसके परिणाम स्वरूप परिमित श्राव होता है और ऊर्ध्वाङ्गके रक्तकी अधिकताको दूर कर रक्तकी गतिको पैरोंकी ओर खींच कर लानेमें यह बाथ बेजोड़ है। इसलिये अत्यन्त सिर दर्द इसके द्वारा बहुत आसानीसे दूर हो जाता है। एक बार चेतला डेटिन्यू कैम्पके श्रीयुत् जगदीशचन्द्र सरकारको बड़े जोरोंका सिर दर्द हुआ। लगातार चार दिनों तक यह सिर दर्द इसी प्रकारका बना रहा। प्रत्येक महीनेमें प्रायः सात आठ दिन तक यह कम होता ही नहीं था। इन दिनों उनको नींद भी नहीं आती थी एवं मारे सिर दर्दके वे हर समय रोते और चिल्लाते थे। जब साधारण चिकित्सासे उनको कोई लाभ नहीं पहुंचा तो डेटिन्यू कैम्पके युवक मुझे बुलाकर ले गये। मैंने उनको एक डूस दिया और फिर आधे घण्टे बाद पैरोंके लिये गरम स्नानका प्रयोग कराया। बाथ लेते ही उनका सिर दर्द जाता रहा एवं दूसरे ही दिनसे वे अपना रोजमर्राका काम करने लग गये।

इन समस्त गरम स्नानोंसे (hot bath) से जो लाभ होते हैं वे सभी सूर्य स्नानमें भी मौजूद हैं (देखो १५ वां अध्याय)।

[५]

आंशिक स्टीम बाथ (LOCAL STEAM-BATH)

अनेक मौकों पर सारे शरीरमें भापका प्रयोग करना आवश्यक नहीं होता है। कभी-कभी सारे शरीरमें भापका प्रयोग करनेपर किसी विशेष आंगिक रोगमें बार-बार शरीरके उसी अंगमें ही वाष्प-स्नान जरूरी होता है।

यह बाथ सेंकका एक उच्च परिष्कृत रूप मात्र है। जिस किसी जगह पर सेंक करनेसे काम चलता है वहां पर इसका भी प्रयोग किया जा सकता है। किन्तु सेंकसे यह अधिक अच्छा है, क्योंकि रोगग्रस्त स्थानमें यह बिना किसी प्रकारका दबाव दिये बिना ही उस स्थानके अणु परमाणुमें गर्मी पहुंचा सकता है। मुंहके अन्दर आदि जैसे स्थानोंमें जहां कि सेंककी गर्मी नहीं पहुंच सकती है वहां भाप अनायास ही पहुंचाई जा सकती है। हाथ, पैर, मुंह, गला, आँख और कानमें भापका प्रयोग किया जा सकता है।

आंशिक स्टीम-बाथमें साधारण तौरसे नलीके जरिये भाप लेनेकी आवश्यकता नहीं होती है। एक वर्तनमें खौलते हुए पानीको लेकर उसके ऊपर रोगग्रस्त अंगको मय वर्तनके कम्बल आदिसे ढक देनेसे यह काम हो जाता है। मुंह इत्यादि स्थानोंके लिये ३ से १० मिनट तक भाप लेनेसे काम चल जाता है, किन्तु देहके निम्न भागोंके लिये कुछ अधिक समयतक भापका प्रयोग करना होता है। अर्थात् इन स्थानोंमें १५ से २५ मि० तक भापका प्रयोग होना चाहिये। जिस अंगमें भापका प्रयोग करना है, उसपर खूब भलीभांति पसीना आने तक भापका प्रयोग जारी रखना चाहिये।

किसी अंगमें आंशिक भापके स्नानका प्रयोग करनेके बाद उसे ठण्डे पानीसे भींगे तौलिये द्वारा पोंछ लेना चाहिये। मुंह या गलेमें कुछ

समयके लिये भापको रोक कर छोड़नेके बाद दो तीन बार नर्म पानीसे कुल्ली कर लेनी विशेष रूपसे आवश्यक होती है। यदि सारे शरीरमें पसीना आ गया हो, तो सारे शरीरको गीले तौलियेसे पोंछ लेना चाहिये। जिस किसी अंगमें भापका प्रयोग किया गया हो उसे गीली तौलियेसे पोंछ कर फिर कपड़े इत्यादिसे लपेट देना चाहिये; ताकि उसमें फिरसे गर्मी लौट आये। अधिक समय तक स्टीमबाथ लेनेके बाद (विशेष कर सिर और मुखके) हिप-बाथ लेना अत्यन्त आवश्यक है।

आंशिक स्टीम-बाथ बहुतसे रोगोंमें लाभदायक होता है। जहरीले कीड़ोंके काटनेमें, अंगोंकी मरोड़में (in cramps), पागल कुत्तेके काटनेपर, एकूजमा (eczema) रोगमें, स्त्रियोंके वेदनायुक्त रजःस्रावमें, अर्शमें, गुह्यद्वारके घाव तथा भगन्दर इत्यादिमें यह अत्यन्त लाभदायक होता है।

सब तरहकी पीड़ाओं और सूजनोंमें यह जादूका काम करता है। क्योंकि पसीना आने मात्रसे ही सब पीड़ायें अपने आप दूर हो जाती हैं।

दांतका दर्द मामूली दवाओंसे दूर नहीं होता है। किन्तु दांतका दर्द कितना ही पुराना और भयंकर क्यों न हो आंशिक स्टीम-बाथ उसमें जादूका असर करता है। २४ परगनेके श्रीहृषीकेश मुखोपाध्याय, एम० ए०, बी० एल०, महाशयका दांत दर्दके कारण एकबार उनका सारा मुंह फूलकर विषाक्त (septic) हो गया था। उनका सारा मुंह इस प्रकार फूल आया था कि सहसा उनको पहचाना भी नहीं जा सकता था। उनके मुंहके अन्दर इस प्रकार नालियां हो गई थी कि आंखोंके नीचे भागको दबानेसे सामनेके दाँतोंकी जड़ोंसे फक फक कर पीव बाहर निकल आती था। शरीरका ताप १०२° था। दिन और रात एक क्षणके लिये भी नींद हराम थी। उन्होंने पहले एक ऐलोपैथिक डाक्टरको बुलाया। डाक्टरने उनके मुखकी अवस्थाको देखकर बताया कि यदि तुरन्त आप-

रेशनकी व्यवस्था न की गई तो उनका जीवन खतरेमें पड़ जायगा। हृषीकेश बाबूने यह बात अस्वीकार करते हुए कहा कि यदि सारे मुंहपर ही आपरेशनकी आवश्यकता प्रतीत होती है तो इसकी अपेक्षा उनका मर जाना ही बेहतर है। तब उन्होंने एक अच्छे होमिओपैथिक डाक्टरको बुलाया। दो दिन तक जब इससे भी कोई फायदा नजर न आया, तो उन्होंने मुझे बुला भेजा। उनके मुखकी ऐसी हालत देखकर मैंने उनसे कोई परामर्श नहीं किया। उसी समय एक स्पिरिट-स्टोभके ऊपर एक बर्तनमें पानी रखकर मैंने भाप पैदा की और उनसे कहा कि मुह खोलकर उसके ऊपर रख दें। पांच छः मिनट बाद मुखसे पसीना आने लगा और पसीना बाहर निकलनेके साथ ही साथ दांतोंका वह भयंकर दर्द भी दूर हो गया। इसके बाद मुखसे बहुत सा पीव, रक्त और खूब दूषित थूक निकलने लगा। उनके मुखके सामने एक पीकदान रखा हुआ था, वह सारा इससे भर गया। दस मिनट बाद मैंने भाप हटा दी और इसके बाद ठण्डे पानीसे उनको कुल्ले कराये और गीले तौलियेसे उनके शरीरको पोंछ कर उन्हें सुला दिया, फिर मैं चला आया। लौटते वक्त कह आया कि एक घण्टे बाद उनकी हालत मुझे बता दी जाय। किन्तु डेढ़ घंटा बीत गया, मेरे पास कोई आदमी नहीं आया। इसलिये मैं घबड़ाने लगा और स्वयं वहाँ जा पहुंचा। रोगी गहरी नींदमें सो रहा था। अतः मैं वहाँ सबसे कह आया कि रोगीकी नींद मत तोड़ना और जब अपने आप नींद टूट जाय, तो मुझे खबर देना।

१२ बजे भापका प्रयोग किया गया था और ५ बजेके करीब उनकी नींद टूटी। उठते ही उन्होंने मुझे बुलाया। मेरे पहुंचते ही उन्होंने कहा, अब जरा भी दर्द नहीं है और खूब अच्छी नींद आई। तब मैंने उनको दिनमें दो बार स्पञ्ज-बाथ एवं केवल नींबूके रसके साथ पानी पीनेकी व्यवस्था दी। मुखमें एक गीले कपड़ेकी पट्टी दी और उसे फ्लालेनसे ढक कर बांध दिया। पट्टी रात भर इसी प्रकार रही।

दूसरे दिन सुबहके वक्त जाकर देखा मुख स्वाभाविक अवस्थामें आ गया था—उसमें सूजन नहीं थी, बुखार भी हट गया था, आंखों तक जो नालियाँ ही नालियाँ बन गई थीं, वे गायब हो गई थीं। केवल आँखोंके नीचे कुछ सूजन थी। मैंने फिर उनके मुंहपर पट्टी बांध दी और दूसरे ही दिन वे चंगे हो गये। हृषीकेष बाबूका मिन्टमें काम लगा था। इधर उनको कुछ छुट्टियाँ हुई थीं। तीन दिन बाद वे खतम हो आईं तो मैंने उनसे कहा, आप अच्छे तो हो गये हैं, किन्तु आपको अभी एक हफ्ता और आराम करना चाहिये। उन्होंने कहा मैं छुट्टी लेकर आता हूं। किन्तु इसके लिये मेडिकल सार्टिफिकेटकी आवश्यकता थी। अतः वे मिन्टके डाक्टर साहबके पास सार्टिफिकेट लानेके लिये गये। डाक्टर ने उनके मुखकी अच्छी तरह परीक्षा की और कहा, 'तुम्हें ऐसी कोई बात नहीं हुई है कि जिसके लिये तुम्हें छुट्टी दी जाय।'

सब प्रकारके पुराने दांतके रोगों और दर्दोंमें इसके द्वारा फायदा पहुंचता है। गीली चादरके पैक इत्यादिके साथ आंशिक स्टीम-बाथ देकर मैंने दांतके जितने कठिन रोगोंको दूर किया है यदि उनका ही वर्णन करूं, तो एक अलग पोथी तैयार हो जाय। किन्तु चोट या आघातसे उत्पन्न दांतकी पीड़ामें कभी भी भापका प्रयोग नहीं करना चाहिये। ऐसी हालतमें इसका प्रयोग करनेसे दांत नष्ट हो सकता है। इसमें तो बार-बार ठण्डे पानीको मुंहमें लेनेसे ही थोड़े समयमें दर्द दूर हो जाता है।

ग्लूकोमा अत्यन्त कठिन व्याधि है। बिना आपरेशनके इसमें कभी आराम नहीं होता। किन्तु आंख बन्द कर कई दिन तक आँखोंमें भाप लेनेसे इसमें आश्चर्यजनक लाभ होता है। बारिसाल जिलेके श्रीयुत अनन्त कुमार सरकारको बेरीबेरी रोगके उपरान्त ग्लूकोमाने आ घेरा। उन्होंने जब मेडिकल कालिजमें अपनी आँखोंकी जाँच करवाई तो डाक्टरोंने कहा उनमें पानी जम गया है, अतः जल्दी ही आपरेशन

करवाना चाहिये। इसी बीचमें मैंने उनसे एक गीली चादरकी लपेट (wet sheet pack) से कई दिन तक भाप लगानेको कहा। सात दिनतक इसका प्रयोग करनेके बाद वे फिर मेडिकल कालिजमें पहुंचे, तो डाक्टरोंने उनकी आँखोंकी जाँच कर कहा, अब उनमें पानी नहीं है; वे अच्छी हो गई हैं।

ठीक इसी तरह कालीघाटमें भी एक महिलाको ग्लूकोमामें फायदा हुआ।

[६]

गरम सेंक (FOMENTATION)

आंशिक भापके स्नानसे जो फायदे होते हैं, उनमें से अधिकांश गरम सेंकमें भी मौजूद हैं। फटे कम्बल या फ्लालेनके टुकड़ोंके न होनेपर रूई या तौलियेसे भी यह सेंक दिया जा सकता है। फ्लालेनको खौलते हुए पानीमें डुबोकर एक तौलियेके अन्दर रखना होता है। इसके बाद तौलियेको दोनों सिरोंसे पकड़ कर बिना कष्टके वह निचोड़ा जा सकता है। पानी जिससे ठण्डा न होने पावे इसलिये उसे एक बर्तनसे ढक देना होता है।

सेंक देनेके समय चमड़ेके ऊपर सेंक न देकर शरीरके जिस स्थानपर सेंक देना हो, वहां एक सूखा फ्लालेन या तौलिया रख कर उसके ऊपर सेंक देना चाहिये। ऐसा करनेसे रोगयुक्त स्थानपर बहुत देर तक गर्मी का प्रयोग किया जा सकता है। सेंककी गर्मी जिस प्रकार बाहर न हो जाय, इसलिये गरम फ्लालेनको शरीरके ऊपर रख कर तुरन्त ही उसको एक कम्बल अथवा पश्मीने आदिसे ढक देना होता है। ऐसा होनेसे सेंक की गर्मी करीब पाँच मिनट तक बनी रहती है एवं सेंकके चारों ओर बन्द रहनेसे उस जगहपर एक आंशिक स्टीम-बाथका भी काम हो जाता है।

यदि बहुत देरतक सेंककी गर्मी रखनेका प्रयोजन हो तो सेंकको फ्लालेनके ऊपर एक गरम जलवाले बोतल या रबर वेग (hot water bag) को रख कर कम्बलके द्वारा लपेट कर रख देना चाहिये। कुछ समय तक सेंक देनेके बाद जब फ्लालेनकी गर्मी कम हो जाय, तो फ्लालेनके भीतर कुछ ज्यादा पानी रखकर सेंक देनी चाहिये। ऐसा करनेसे यह कुछ अधिक समय तक गरम रहेगा। सेंककी गरमी कम हो जानेपर फ्लालेनको हटाकर उसकी जगहपर तुरन्त ही गरम जलमें डुबोया हुआ दूसरा फ्लालेन रख देना चाहिये। इसके लिये एक फ्लालेनको उठानेके पहले दूसरेको तैयार रखना चाहिये।

साधारणतः दर्दकी जगह जितनी बड़ी हो उससे आठ या दस गुनी जगहपर सेक करना जरूरी है (J. H. Kellogg, M. D.—Rational Hydrotherapy, P. 72)। ऐसा करनेसे सेंक द्वारा सबसे अच्छा फायदा होता है।

धड़ (trunk) के किसी स्थानपर सेंक देनेके पहले यह देखना आवश्यक है, कि रोगीके हाथ-पैर ठण्डे तो नहीं हैं या उसके सिरमें रक्त की अधिकता तो नहीं है। रक्तकी अधिकता होनेपर रोगीके सिरको अच्छी तरह धोकर उसपर गीली तौलिया लपेट कर फिर इसके बाद सेंक लगाना चाहिये।

अगर पुराने रोगके लिये सेंक देना जरूरी हो तो उसकी जगहपर कुछ पुराने घी या तेलकी मालिश कर लेनी चाहिये। सेंकका प्रयोग इस प्रकार करना जरूरी होता है कि शरीर कहीं जल न जाय। अगर फ्लालेन अच्छी तरह निचोड़ ली गई हो एवं चमड़ेपर पुराने घी अथवा तेल इत्यादिकी मालिश कर दी गई हो तो रोगीको लिटा देनेमें किसी प्रकारका भय नहीं रहता। फोड़े अथवा घावमें तेलकी मालिश भूल कर भी नहीं करनी चाहिये।

केवल गर्मीका प्रयोग कर देने मात्रसे ही सेंक खतम नहीं हो जाता।

सेंकके अन्तमें रोग ग्रस्त स्थानको खूब ठण्डे पानीमें डुबाकर एवं उसे खूब अच्छी तरह निचोड़े हुए तौलियेसे ३० से ६० सेकेण्ड तक पोंछ कर ठण्डा करनेके बाद सूखे फ्लालेन इत्यादिसे उसे लपेट कर गरम कर लेना होता है।

जोरके दर्दकी किसी किसी हालतमें दीर्घ कालीन सेंक देनेकी आवश्यकता होती है। ऐसी हालतमें आध घण्टेके बीच-बीचमें खूब ठण्डे पानीसे गीली एवं अच्छी तरह निचोड़ी हुई तौलियासे एक मिनटसे दो मिनटतक सेंककी जगहको पोंछ कर फिर दूसरी बार सेंक देना चाहिये।

सेंकके बाद यदि रोगीको पसीना आ जाय तो एक तौलियेको आवश्यकतानुसार नम या ठण्डे पानीमें डुबो कर रोगीका शरीर जल्दीसे पोंछ देना चाहिये। इसके बाद कुछ समयके लिये कम्बलसे ढक कर चमड़ेकी पहली गरमी लौटा लानी चाहिये। अगर स्पन्ज-बाथ लेना असम्भव हो तो सूखे तौलियेसे पसीना अवश्य ही पोंछ देना चाहिये।

सेंकका प्रयोग करते ही यदि रोगीको खूब पसीना आने लगे तो तुरन्त ही सेंक बन्द कर देना जरूरी होता है। क्योंकि बहुत ज्यादा पसीना निकलनेसे रोगी कमजोर हो सकता है। उस समय आवश्यक होने पर सेंकके बाद गरम पानीसे भींगे हुए कपड़ेसे उस जगहको पोंछ देना जरूरी है।

सेंकके बाद यदि उसकी जगह पर एक गीला कपड़ा रख कर उसे फ्लालेनसे ढक कर बांध दिया जाय तो सेंककी उपादेयता बढ़ जाती है और उसका असर बहुत समय तक रहता है। तेज प्रदाहके लिये जैसे न्यूमोनिया, प्लूरिसी अथवा विसर्प-रोग (erysipelas) के लिये सेंक करना हो तो सेंकके ऊपर इस तरहकी पट्टी विशेष लाभदायक होती है।

सेंकका प्रधान गुण यही है कि नम गर्मी बहुत ही जल्द और निश्चित रूपसे दर्दको कम कर देती है। दर्दको दूर करनेके लिये सेंकका बहुत गरम (१४०° से १५०° डिग्री) होना जरूरी है।

पाकस्थलीकी सब प्रकारकी वेदनाओंके लिये सेंक बहुत ही लाभदायक है। इसलिये रीडकी पोपी हड्डीसे नाभि तक एवं रीडकी दोनों हड्डियों तक सेक करना जरूरी होता है।

अजीर्ण (Dyspepsia) रोगमें भोजनके बाद एक घण्टेसे लेकर दो घण्टेतक पाकस्थलीके ऊपर गरम जलकी थैली (hot water bag) रखने से सिकुड़ी हुई रक्तकी नलियाँ फैल जाती हैं एवं बहुत सा पचानेवाला रस उनसे निकलता है। इससे पाचनशक्ति यथेष्ट रूपमें बढ़ जाती है।

कमरके वात और साइटिका रोगका दर्द खूब गरम सेंक द्वारा आश्चर्यजनक रूपसे दूर हो जाता है। पेशियों और जोड़ोंके वातका दर्द दूसरे उपायोंसे कहीं जल्द सेंक द्वारा कम हो जाता है। सेंक देते वक्त दर्दकी जगह से ऊपर और नीचेकी ओर कई इञ्च ज्यादा जगह तक सेंक देना जरूरी है। जरूरतके मुताबिक यह सेंक दिनमें कई बार दिया जा सकता है।

पित्त-पथरी, मूत्र-पथरी एवं लीवरके दर्द इत्यादि वेदनाओंमें सेंक अत्यन्त लाभदायक होता है। किन्तु सेंक काफी होना जरूरी है। सेंकके बाद इस जगहपर जल-पट्टीका प्रयोग कर उसके ऊपर फ्लालेनसे ढक कर बांध देना आवश्यक है।

गलेकी ग्रन्थि (tonsil), गलेकी नाली (pharynx) अथवा स्वर-यन्त्र (larynx) के प्रदाहमें सेंकके द्वारा खून चमड़ेमें खींच कर लाया जाता है जिससे बहुत फायदा होता है। इन सब रोगोंमें १५ से २० मिनटतक सेंक देकर बादको एकसे लेकर दो घण्टेतक गलेके चारों ओर एक गीले कपड़ेको लपेट करके पश्मीनेसे ढक कर बांध कर गरम हवाको बार-बार बदलते रहना चाहिये।

कानके दर्दमें यह बहुत फायदेमन्द है। किन्तु इसमें मुखके पाससे सेक देना चाहिये। नहीं तो दर्द बढ़ सकता है।

फोड़े और फुन्सियोंकी पहली हालतमें दिनमें दो तीन बार १० मिनटके लिये रोगी जितना गरम सहन कर सकता है उतना गरम सेंक

देना चाहिये। बाकी समयमें इसी प्रकार ढकी हुई पट्टीका प्रयोग करना चाहिये।

लिवरके दर्दमें यदि दो तीन घण्टे बाद बार-बार सेंक देकर बीच-बीच में इस प्रकार पट्टी बांध दी जाय, तो दर्द जल्द कम हो जाता है और लिवर भी आसानीसे ठीक हो जाता है। इसके अलावा बहुतसे रोगोंमें सेंकका इस्तेमाल किया जा सकता है; किन्तु कितने रोग सेंकके द्वारा दूर किये जा सकते हैं, उन सबकी सूची तैयार करना फिजूल है।

[७]

गरम स्नानसे फायदा क्यों होता है ?

हिसाब लगाकर यह देखा गया है कि एक जवान मनुष्यके चमड़ेका परिमाण १७ वर्ग फीट होता है। इस फैले हुए स्थानके प्रत्येक स्क्वायर इंच जगहमें २,८०० छिद्र हैं एवं एक सम्पूर्ण शरीरवाले व्यक्तिके सारे शरीरमें १० लाख छिद्र होते हैं। इन छिद्रोंके साथ एक एक छोटी:नाली के आकारकी ग्रन्थियां लगी हुई होती हैं। मनुष्य शरीरकी इन ग्रन्थियों को यदि एक बार एक एक कर फैलाया जाय तो उनका यह फैलाव १० मील लम्बा होता है। इन छिद्रोंसे शरीर कितने ही फुसफुसोंकी तरह अम्लजान वायु (oxygen) को अन्दर खींचता है। इसी लिये बहुतसे लोग चमड़ेको तीसरा फुसफुस भी कहते हैं। इन्हीं छिद्रोंकी राहसे आध सेरसे लेकर एक सेर तक दूषित पदार्थ प्रत्येक दिन शरीरसे बाहर निकलता है। बहुतसे समयोंमें यह गेसके रूपमें बाहर निकलता है। इसलिये हम उसे देख नहीं सकते हैं। किन्तु गर्मीके दिनोंमें अथवा कसरतके बाद या वाष्पका स्नान लेनेसे यह पसीनेके रूपमें चमड़ेके बाहर निकल आता है (W. D. Halliburton—Handbook of Physiology, P. 606)। रसायनिक जांच करके देखा गया है कि, यह पसीना शरीरके पुराने और इकट्ठे विजातीय पदार्थोंसे भरा हुआ है।

जिन रास्तोंसे प्रकृति रोजमर्रा एक सेर दूषित पदार्थ बाहर निकालती है, अगर वे रास्ते बन्द हो जांय तो मनुष्य बीमार न हो तो क्या हो। हमारी बहुत सी बीमारियाँ इन्हीं चमड़ेके छिद्रोंके बन्द हो जानेसे पैदा होती हैं। पुराने रोगोंमें रोम-कूप प्रायः बन्द रहते हैं। उठते हुए रोगमें भी चमड़ेके छिद्र बन्द हो जाते हैं; जब हम स्टीम-बाथ इत्यादिकी सहायतासे रोम कूपोंको खोल देते हैं, तो शरीर और उसके भीतरके दूषित पदार्थ पसीनेके रूपमें बाहर निकल आते हैं और रोग अपने आप दूर हो जाता है।

किन्तु इससे किसीको यह न समझ बैठना चाहिये कि हमारे देशमें पसीना पैदा कर आरोग्य प्राप्त करनेकी इस प्रथाका श्रीगणेश अंग्रेजोंने किया। चरक पढ़नेसे अवाक हो जाना पड़ता है, क्योंकि उसमें पसीना लानेकी कई स्नानोंकी विधियोंका वर्णन है।

वाष्प-स्नानके बारेमें चरकका कहना है कि हांड़ीमें विभिन्न प्रकारके पसीना पैदा करने वाले पदार्थोंको रख और उसे गरम कर, हांड़ीके मुखमें नाली बिठा कर उसके भापसे बीमारको पसीना कराना चाहिये या नली को झुका कर उसके द्वारा भापका स्नान कराना चाहिये। भाप रोगीके शरीरमें सीधे न लगकर टेढ़ी पड़नी चाहिये क्योंकि ऐसा होनेसे उसका जोर अधिक नहीं होने पायगा और इससे शरीरमें दाह भी पैदा नहीं होगी। अतः भापका यह स्नान सुखदायक होगा (सूत्रस्थानम् १४।२९)।

चरकमें इस प्रकारकी कई पसीना पैदा करनेवाली विधियोंका वर्णन है।

पंचम अध्याय

---*---

पानी पिलाकर बीमारी दूर करना

[१]

हम लोगोंका शरीर एक प्रकारकी जटिल जल प्रणाली कहा जा सकता है। छोटी और बड़ी कई तरहकी नालियोंके भीतरसे इसके एक हिस्सेसे दूसरे हिस्सेमें विभिन्न जातीय तरल पदार्थ दौरा करते रहते हैं। प्रकृति शरीरके एक तन्तुमें जो पौष्टिक पदार्थ पहुंचाती है, उसका ले जानेवाला भी जल ही है। शरीरका हर एक छोटे से छोटा कोष भी पानीसे धुलता रहता है।

हमारे शरीरमें ७० हिस्सा पानी है। हमारी लारका ९९·६ भाग पानीसे बना हुआ है। पाकस्थलीका अम्ल रसका ९७·५, पेशाबका ९३·६, पित्तका ८८, मांसका ७५, पसीनेका ५६·८ एवं हड्डियोंका १३वां हिस्सा पानी है। शरीरका यह पानी वाला हिस्सा नियमित रूपसे मल, मूत्र और पसीनेके साथ बाहर निकलता रहता है। शरीरमें इस रसकी समता ठीक रखनेके लिये ठीक ढंगसे पानी पीनेकी जरूरत होती है। अगर हम ऐसा न करें तो प्रकृति खून, मांस-पेशियों और शरीरके तन्तुओंसे पानीका हिस्सा खींचनेके लिये वाध्य हो जायगी। इससे शरीर पतला फिर धीरे-धीरे सूखने लग जायगा। शरीरमें पानीके भागकी कमीके कारण पहले कब्ज होती है। इसके बाद खूनकी

कमी और बादमें शरीरमें कई प्रकारके रोगोंके लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

जिस प्रकार नाली या मोहरीको साफ करनेके लिये बहुत सा पानी छोड़ना पड़ता है, उसी प्रकार शरीर रूपी नालीको साफ रखनेके लिये काफी पानी पीना जरूरी है। हमारे शरीरमें प्रति दिन क्षय होता है। जो सारे जीव-कोष (cell) नष्ट हो जाते हैं, खून उनको धोकर बाहर कर देता है। किन्तु खूनमें पानीके भागकी कमी होनेके कारण ये बहुत से नष्ट जीव-कोष शरीरके अन्दर ही रह जाते हैं, जिससे शरीरमें विजातीय पदार्थ इकट्ठे होने और बढ़ने लगते हैं।

शरीरका बहुत सा विष पेशाबके रास्तेसे बाहर निकलता है। यह विष कितना भयंकर है यह इसीसे जाना जा सकता है कि, यदि दो दिन तक यह बाहर न निकले तो सारा शरीर जहरीला हो जायगा। शरीरकी इस दशाको यूरेमिया कहते हैं। देहके विष और अलग अलग दूषित पदार्थों को निकालनेके लिये पेशाबका ही प्रकृतिका मुख्य दरवाजा है। रोजाना खूब पानी पीनेसे प्रकृति पेशाबके भीतरसे काफी दूषित पदार्थ बाहर कर देनेमें समर्थ होती है।

इसलिये पानी पीना ही सब रोगोंका सबसे अच्छा और खास इलाज है।

पेट साफ करनेके लिये पानीमें सबसे अद्भुत ताकत है। सुबह उठ कर बिस्तरा छोड़नेके आध या एक घण्टा बाद अगर तीन बार आध-आध घण्टे बाद ठण्डा पानी पी लिया जाय, तो पेट साफ करनेमें यह विशेष सहायता पहुंचाता है। कई बार तो एक ग्लास पानी पी लेनेसे ही विशेष फ़ायदा हो जाता है। आर्य ऋषि लोग इसे ऊषापान कहते थे।

शरीरकी ग्लानिको दूर करनेके लिये पानीके समान और कोई दूसरी चीज नहीं है। पहले मुझे यह बीमारी थी कि मैं जरा भी भूख बर्दाश्त नहीं कर सकता था। जब कभी भूख लगती थी तभी अपने आप शरीर टूटने

लगता था। हंसमुख चेहरा उदास हो जाता और जरा सी बात पर गुस्सा आने लगता था। बिना भोजन खतम किये मेरा यह भाव दूर ही नहीं होता था। इसके बाद जल-चिकित्साकी एक किताब पढ़ने पर मैंने ग्लानिका अनुभव करने पर एक गिलास पानी पीना शुरू किया। मेरे अचरजका ठिकाना ही न रहा, जबकि मैंने अनुभव करना आरम्भ किया कि पानी पीनेके पांच मिनट बाद मेरा चेहरा खिल उठता है। इसी प्रकार कुछ दिनोंके जल पीनेके बाद मेरी यह ग्लानि जाती रही। अब मुझे इस प्रकार पानी पीनेकी कोई जरूरत नहीं है।

बहुतेरे समयों पर हमारे मनमें आता है कि शरीरमें क्यार जैसा हो रहा है, वह क्यों खराब है यह भी हम नहीं जानते हैं। पर जानते हैं वह खराब है। जी मिचलाता हो या खट्टे डकार आते हों तो एक गिलास ठण्डा पानी पी लेनेसे शरीर अपनी पहली हालतमें आ जाता है।

बुखारमें पानी पीना बहुत ही फायदेमन्द है। रोगी जितना पानी बिना किसी तकलीफके पी सकता हो उसे उतना पानी पिला देना चाहिये। बुखारकी हालतमें जवान आदमीको ढाई सेरसे लेकर तीन सेर तक रोजाना पानी पीना चाहिये। हर एक घण्टे बाद आधे गिलाससे लेकर एक गिलास तक पानी पीना अधिक लाभदायक होता है। बुखारमें ठण्डा पानी पीनेसे नाड़ियोंकी गति में १० से १५ बार तककी कमी आ जाती है। किन्तु जब रोगीको जाड़ा लग रहा हो या कंपकंपी आ रही हो तब उसे कभी भी ठण्डा पानी नहीं पिलाना चाहिये। ऐसी हालतमें रोगी को हमेशा गरम पानी ही पिलाना चाहिये। पसीनेकी हालतमें भी बुखार वाले रोगीको ठण्डा पानी पिलाना ठीक नहीं है। बुखार वाले रोगीके पानीमें कुछ बूंद नीबूका रस निचोड़ देनेसे विशेष अच्छा होता है, इससे रोगीको बहुत फायदा पहुंचता है।

वात रोगमें पानी पीना बहुत ही फायदेन्द है। यह खूनको पतला करता है एवं शरीरके भीतर इकट्ठे हुए यूरिक एसिड (uric acid) और विषों

को गलाकर उन्हें भी बाहर कर देता है। अतः वात रोगमें यह बहुत लाभदायक होता है।

जो लोग बहुत मोटे हो गये हैं उनके लिये भापका स्नान और खाद्यका नियन्त्रण इत्यादि खास इलाज हैं। किन्तु वे खूब पानी पीयें तो उनके शरीरके अन्दरके टूटे हुए जीव कोष आसानीसे बाहर निकल आयेंगे।

बहुमूत्र रोगमें काफी पानी पीनेसे शरीरके अन्दर इकट्ठी हुई अधिक चीनी पेशाब और पसीनेके साथ बाहर निकल आती है जिससे रोगीको काफी आराम पहुंचता है। मैं एक ऐसे रोगीको जानता हूं जो उषापानके द्वारा इस असाध्य रोगसे छुटकारा पा गया।

एक विशेषज्ञ डाक्टरका कहना है कि अगर संसारका हर एक मनुष्य रोज ८ आउन्स गिलासके ८ गिलास पानी पिये और मांस खाना छोड़ दे तो दो पीढ़ियोंके अन्दर दुनियांमें बहुमूत्र रोगका कहीं भी नामो-निशान नहीं रह जायगा (H. S. Gambers—Miracles of water, P. 23)।

पांडु (पीलिया) रोगमें दिनमें दस या बारह गिलास पानी पीनेसे यह रोग आराम होता जाता है।

जिनको पुरानी बदहजमीका रोग हो या किसी दूसरी प्रकारकी पेट की बीमारी हो उन्हें दोनों बक्त भोजनके १ घण्टे पहले एक गिलास ठंडा पानी पीनेसे आश्चर्यजनक लाभ होगा।

पानी पीनेका यह नियम है कि भोजनके समय पानी न पीकर उसके एक घण्टेसे लेकर डेढ़ घण्टे पहले पानी पी लेना होता है। खूब चबा-चबा कर खानेसे लार इत्यादि पाचक रस इतने परिमाणमें खाई हुई चीजोंके साथ पेटमें चले जाते हैं कि और पानी पीनेकी जरूरत ही नहीं रहती।

भोजनके समय या ठीक उसके बाद सोडा, लेमनेड या अन्य प्रकारकी पीने वाली चीजोंके व्यवहारसे पाचक रसोंकी शक्ति नष्ट हो

जाती है। इन्हीं बुरी आदतोंके कारण ही बहुधा कब्जियत और बदहजमीके रोग पैदा हो जाते हैं।

यह प्रकृतिके नियमके विरुद्ध है कि हम भोजनके समय पानी पीयें। हम देखते हैं कि जंगलके पशु एक समय भोजन करते हैं और दूसरे वक्त पानी पीते हैं। पानी पीनेके समय वे दल बांध कर नदी या तालावके किनारे जाते हैं। परन्तु बिल्लियां और कुत्ते भी जिस वक्त भोजन करते हैं उसी समय पानी नहीं पीते हैं। सभी प्राणियोंकी स्वास्थ्य रक्षाके लिये यह सबसे अच्छा तरीका है।

प्रकृतिके इस नियमका पालन करनेसे असाध्य कब्जियत और अजीर्ण जैसे रोग थोड़े ही दिनोंमें दूर हो जाते हैं। भोजनके समय पानी नहीं पीनेसे सभी पाचक रस खाये हुए भोजन पर अपना असर करते हैं। खूब कमजोर रोगीकी भी हाजमा शक्ति इससे बढ़ जाती है। जिन लोगोंका पेट सख्त हो वे अगर भोजनके समय पानी पीना छोड़ दें तो खाये हुए भोजनको हजम करनेके लिये आंतोंमें ऐसी क्षमता आ जाती है कि वे दिनमें एक या दो बार भीतरमें एकत्रित मलको बाहर कर देती हैं।

बहुत दिनोंसे चली आई हुई इस आदतके कारण पहले पहल भोजन के समय या बादमें प्यास लग सकती है, किन्तु तीन चार दिन बाद देखनेमें आवेगा कि फिर इस समय प्यास नहीं लगती है।

परन्तु नियमित रूपसे पानी पीना किसी भी हालतमें बन्द नहीं करना चाहिये। क्योंकि पानी शरीरके लिये प्राणोंके समान है। किन्तु पानी पीनेका सबसे अच्छा समय है भोजनके एक या डेढ़ घण्टे पहिले जब कि पेट खाली हो एवं भोजनके तीन चार घण्टे बाद जबकि खाया हुआ भोजन हजम हो गया हो (Reddie Mallett—Nature's way, P. 16-17)।

जब पेट खाली हो तभी खूब पानी पीना चाहिये। एक बार एक गिलास पानी पी लेनेके बाद जब वह शरीरसे बाहर निकल जाय, तो

फिर पानी पिया जा सकता है। इसी प्रकार जरूरतके मुताबिक सुबहको दो तीन गिलास, दोपहरके भोजनके पहले एक गिलास, दोपहरके भोजनके तीन घण्टे बादसे शाम तक कई गिलास एवं रातके भोजनके पहले एक गिलास ठंडा पानी पी लेनेसे ठीक-ठीक पानीका पिया जाना कहा जाता है।

पानी पीनेका यही वैज्ञानिक तरीका है। किन्तु इस तरीकेके प्रयोजनोंको मैं ठीक-ठीक ढंगसे व्यक्त कर सका हूं कि नहीं मुझे इसमें सन्देह ही है। मनमें तो यही आता है कि मकानकी छतपर खड़ा होकर इस बातका प्रचार करूं।

भोजनके समय पानी पीनेकी बुरी आदतको छोड़कर भोजनके पहले इस तरह पानी पीनेसे पेटके सभी रोग दूर हो जाते हैं। थोड़े ही दिनोंमें सारा शरीर मजबूत, तन्दुरुस्त और पुष्ट हो जाता है।

भोजनके पहले पानी पीनेसे भूख और हाजमा शक्ति बढ़ती है और पाकस्थली मजबूत हो जाती है। पाकस्थलीके भीतरमें खाया हुआ भोजन पच जाता है, वह पानीसे धुल जाता है। इसके एक घण्टे बाद जब जब नया खाया हुआ भोजन पाकस्थलीमें आता है तब पाचक रस और खाद्य भोजनके बीचमें और कोई तीसरी चीज नहीं रहती। इसी लिये भोजनके पहले पानी पीनेसे अजीर्ण, पाकस्थलीकी जलन और उसके अफरने इत्यादिमें आराम पहुंचता है।

इससे कमजोर यत्कृत मजबूत हो जाता है एवं बहुत सा पित्त निकल कर भुक्त पदार्थोंमें चला जाता है।

इससे पेशाबमें कोई रुकावट नहीं होती, पेशाब काफी होती है और वह साफ और दुर्गन्ध रहित होती है एवं मूत्राशय (kidney) खूनसे जिस पेशाबको छानती है उसका वह काम भी अनायास हो जाता है। हम लोगोंके मूत्राशय पेड़ूके नीचे कमरके हिस्सेमें (in the lumber region) पेटको लपेटने वाली झिल्लीके पीछे मेरुदण्डके पीछे अवस्थित हैं। ये

करीब ४ इञ्च लम्बे होते हैं। खूनसे पेशाबको छानकर शरीरसे बाहर कर देना ही इनका काम है। मूत्राशय शरीरका अत्यन्त आवश्यक यंत्र है। इस प्रकार पानी पीनेसे मूत्राशयके यंत्रकी पीड़ाओंमें बहुत ही फायदा पहुंचाता है।

इससे आतोंकी गतिमें तेजी आती है और उनके भीतर मल बहुत दिनोंतक एकत्रित होकर पचने नहीं पाता।

इसके द्वारा खून साफ और पतला होता है और सारे शरीरमें खून का दौरा अच्छे ढंगसे होने लगता है (Emla Stuart—What must I do to get well? and how can I keep so? 32nd. Edition, P. 22-24)।

साधारण पीनेका पानी अधिक ठण्डा (७०F) होना ठीक है। किन्तु बुखार और कब्जियत में और अधिक ठण्डा पानी (६०° से ६५° तक) होनेसे अच्छा होता है। किन्तु पानी पीनेका एक खास तरीका है। कलसीसे पानी उडेल कर उसे गट-गट नहीं पी लेना चाहिये। पानीको एक गिलास में उड़ेलकर एक दूसरे गिलासमें कई बार फेंट लेना चाहिये, इससे पानीके अन्दर हवा जाती है और उसमें प्राणोंका संचार होता है। इस तरीकेसे पानी पीने से शरीर को कई तरहके फायदे पहुंचते हैं। दूध शरबत इत्यादिको भी ठीक इसी ढंगसे पीना चाहिये।

निसन्देह पानी पीना लाभदायक है। किन्तु कई मौकों पर इसके लिये विशेष रूपसे सावधान होना जरूरी है। पाकस्थलीके आकारमें वृद्धि होनेपर, ठण्ड लगनेके कारण छातीमें दर्द होनेपर तथा बहुत थकान और पसीनेमें पानी पीना ठीक नहीं है। जो रोगी बहुत दुर्वल हों उन्हें बड़ी सावधानीके साथ पानी पिलाना चाहिये। पानी पीनेका सबसे निरापद नियम यही है कि पानी जितना सह्य हो सके अर्थात् जितना पीनेसे किसी प्रकारके कष्टका अनुभव न हो उतना ही पीना उचित है। ज्यादा पानी पीना कम पानी पीनेके समान ही खराब है।

—०:०—

षष्ठ-अध्याय

——::*::——

स्नान द्वारा रोगोंको दूर करना

[१]

बाजारोंमें टौनिकके नामसे जो कई प्रकारकी दवाइयाँ बिकती हैं, वे थोड़े समयके लिये स्नायु मण्डलमें एक प्रकारकी कृत्रिम चंचलता पैदाकर शरीर में एक प्रकारकी उत्तेजनाकी सृष्टि करती हैं। हमलोग गलतीके कारण उसमें ताकतका अनुभव करते हैं। किन्तु थोड़े समय बाद यह अधिकांश ग्लानि में परिणत हो जाती है। इसके विपरीत ठण्डे पानीके स्पर्शसे जो जीवनी शक्ति उत्पन्न होती है, वह कभी भी ग्लानिमें नहीं परिणत होती है। बल्कि यह बहुत समय तक रहती है।

इस लिये ठण्डे पानीका स्नान ही सबसे बड़ा टौनिक है। केवल स्नान द्वारा ही कितने ही रोगोंसे छुटकारा मिल सकता है।

प्राचीन रोम देशके निवासियोंने अपने बाहुबलसे एक विशाल राज्य की स्थापना की थी। किन्तु प्रायः ५ सौ वर्षों तक लड़ाईके मैदानोंमें बड़े बड़े स्नानागारोंके अलावा उनकी चिकित्साका और कोई इन्तजाम नहीं था। नहान-घर ही उनके केवल मात्र अस्पताल थे। रोमकी सेनाको किसी जगह पर भेजनेके पहले वहां स्नानागार बना दिये जाते थे। रोमवासी अपने सैनिकोंको रोज स्नान करवा कर ही रोगोंसे मुक्त रखते थे (F. W. Powel—Water treatments, P. 24-30)।

पुराने जमानेमें ग्रीसके स्पार्टा देशके रहनेवाले अपनी बहादुरीके लिये

मशहूर थे। इस देशकी सरकारने कानून द्वारा सर्वसाधारणके लिये स्नान अनिवार्य कर रक्खा था। क्योंकि शरीरको रोगसे बरी रखनेके लिये स्नान ही एक मात्र उपाय है।

हमारे पूर्वज भी हजारों वर्ष पहले इस बातकी पूरी जानकारी रखते थे। इसी लिये उन्होंने सुबहका स्नान, दोपहरका स्नान, ग्रहण-स्नान मकर-स्नान, वारुणी-स्नान आदि स्नानोंकी पद-पद पर व्यवस्था कर रखी थी।

आजक़लके डाक्टरोंने भी स्नानके सम्बन्धमें कई तरहकी खोजकर यह स्थिर किया है कि स्नानके द्वारा कई प्रकारके रोगोंका आक्रमण दूर किया जा सकता है।

एक बार मिश्र देशमें अंग्रेज सिपाहियोंमें मियादी बुखार (typhoid) फैला। इस रोगने इतने जोरोंसे फैलना शुरू किया कि थोड़े ही समय में सेनाका पाँचवां हिस्सा रोगग्रस्त हो गया और दिन पर दिन रोगियोँकी संख्या बढ़ने लगी। जिन लोगोंको टाइफाइड हुआ था उनमें से बहुतोंको फिर न्यूमोनियाने आ घेरा। तब सिपाहियोंके प्रधान डाक्टर ने सभी सिपाहियोँको समुद्रके किनारे मार्च कराया और हर एक सिपाही को दिनमें तीन बार स्नान करनेको कहा। इसका आश्चर्यजनक परिणाम यह हुआ कि इसके दो तीन दिन बाद ही रोगका आक्रमण ढीला पड़ गया और थोड़े ही दिनोंमें नया आक्रमण एकदम ही बन्द हो गया (J. H. Kellogg, M. D.—Rational Hydrotherapy, P. 532)।

इसमें कोई भी अचरजकी बात नहीं है कि शरीरकी जीवनी शक्ति (vital resistance) एवं उसमें रोगका मुकाबला करनेकी शक्ति जिस समय कम हो जाती है, उसी समय रोग हमें आ घेरता है। इसके पहले किसी भी प्रकारके कीटाणु रोग पैदा नहीं कर सकते हैं। ठण्डे पानीसे नहानेसे जीवनी-शक्ति और रोगका मुकाविला करनेवाली ताकत

बहुत ही बढ़ जाती है। इसलिये नियमित रूपसे स्नान करने मात्रसे ही बहुतसे रोग काफूर हो जाते हैं।

स्वाभाविक ढंगसे भी रोगके आक्रमणसे आत्मरक्षा करनेका सबसे अच्छा और प्रधान उपाय स्नान ही है।

इङ्गलैण्डके प्रसिद्ध डाक्टर क्यूरी (Dr. James Currie) कहते हैं कि अगर कोई अगनित प्लेगके रोगियोंके बीचमें रहे और नियमानुसार स्नान करता रहे तो वह प्लेगकी बीमारीसे अछूता रह सकता है। दूसरे एक और प्रसिद्ध डाक्टर का (Alfred Martinet, M. D.) कहना है, कि रोगके कीटाणुओंको रोकनेके लिये स्नानकी तरह कोई दूसरी चीज नहीं है (Clinical Therapeutics, P. 875)। अगर आसपासमें हैजेका जोर हो, तो दिनमें दो तीन बार ठण्डे पानीका स्नान करनेसे उससे बरी रहा जा सकता है।

शरीरको स्वस्थ रखनेके लिये नियमानुसार दिनमें दो बार स्नान करना सबसे उत्तम उपाय है। नियमित रूपसे स्नान करनेसे हाजमा-शक्ति बढ़ती है, भूख लगती है और मनमें सन्तोष और आनन्द छाये रहते हैं।

हमारे देशमें स्नानके बाद भोजन करनेकी पद्धति है। इसका कारण यह है, कि स्नानसे पाकस्थली मजबूत होती है एवं उससे बहुतसा पाचक रस खाये हुए भोजनके भीतर चला जाता है। इसी कारण भूख और हाजमा शक्ति बढ़ जाती है।

आजकलकी गवेषणाओंसे यह सिद्ध हो गया है कि टाइफाइड, हैजा, इत्यादि रोगोंके कीटाणु स्वस्थ पाचक रसके अन्दर बहुत समय तक कदापि नहीं टिक सकते हैं। इसी लिये ठण्डे पानीके 'स्नानसे बहुतसे रोगोंसे अछूता रहा जा सकता है।

इससे आंतोंकी रस सोखनेकी ताकत बढ़ती है, जिससे शरीर पुष्ट होता है।

अचानक ठण्डे पानीके छू जानेके आसार मात्रसे ही शरीरके अन्दर एक प्रकारकी उत्तेजना पैदा हो जाती है। इससे लिवर और मूत्रयन्त्र (kidney) का काम अच्छा होता है। अतः लिवर प्रत्येक दिन शरीरके जिस विषको नष्ट कर देता है एवं किड्नियां खूनसे जिस विषको छान कर प्रतिक्षण बाहर करती रहती हैं उनका यह काम इससे बेरोकटोक चलने लगता है।

हृदयको ठीक रखनेके लिये नियमित स्नानके समान और कोई दूसरी चीज नहीं है। ठण्डे पानीसे हृदय इतना मजबूत हो जाता है कि एल्कोहौल, डिजिटेलिस, स्ट्रिक्नियाँ इत्यादि संसारकी दवाइयोंसे इतना फायदा होना असम्भव है।

जो लोग अधिकतर मानसिक कार्य करते हैं, उनके लिये दोनों वक्त स्नान करना अत्यन्त लाभदायक होता है। स्नानके बाद सिरमें नये खूनका दौरा होने लगता है। इससे मन प्रसन्न होता है। इसलिये नियमानुसार स्नान करनेसे मानसिक शक्तियाँ (intellectual functions) प्रखर होती हैं।

ठण्डे पानीके स्नानसे खूनके खारी पदार्थ (alkalinity) बढ़ते हैं एवं खूनमें काफी खारापन रहनेके कारण कोई भी रोग सहज ही में आक्रमण नहीं करने पाता।

स्नानके कारण रोग क्यों दूर होते हैं, इसका मुख्य कारण यही है कि खूब रगड़ कर नहानेसे बाकी गर्मी बाहर हो जाती है। हमारे शरीरमें हमेशा निश्चित ताप पैदा होता रहता है। इस तापके अधिक बढ़नेसे शरीरके अन्दर रोग एवं रोगके फैलनेकी अवस्था पैदा हो सकती है। प्रत्येक दिन दोनों वक्त रगड़ कर स्नान करनेसे यह अतिरिक्त ताप बाहर हो जाता है, जिससे बहुतसे रोगोंका आक्रमण व्यर्थ हो जाता है।

स्नानके ये सभी लाभ जिनसे शरीर साफ होता है और रोमकूप खुल जाते हैं उपेक्षाके योग्य नहीं हैं। क्योंकि, सफाई ही स्वास्थ्य लाभ करने का मुख्य उपाय है।

[२]

रोगोंमें स्नान

कुछ लोग मामूली अस्वस्थ होते ही स्नान बन्द कर देते हैं। यह वैसा ही है, जैसा कि डाकुओंके आ पड़ने पर हथियार रख देना।

स्नान जिस प्रकार रोगके आक्रमणसे हमारी रक्षा करता है, उसी प्रकार यह हमें रोगसे छुटकारा भी दिलाता है।

अमेरिकाके न्यूयार्क अस्पतालमें कितने ही टाइफाइडके रोगियोंको बीच-बीच में स्नान करानेसे देखा गया है कि जहां ३० से ४० सैकड़ा मौत होती थीं वहाँ यह संख्या नहीं के बराबर रह गई है।

इङ्गलैण्डके सुप्रसिद्ध जल-चिकित्सक डा० ब्रांडने १२२३ टाइफाइडके रोगियोंका इलाज पहले जल-चिकित्सासे आरम्भ किया। इनमेंसे केवल १२ रोगियोंकी मृत्यु हुई। अर्थात् फी सैकड़ा १ से कम रोगीकी मृत्यु हुई (J. H. Kellogg, M. D.—Rational Hydrotherapy, P. 586)।

केवल टाइफाइड ही में नहीं बल्कि अन्य सभी प्रकारके रोगोंमें स्नान छोड़ देने लायक चीज नहीं है। डा० मैटिनैट, एम० डी०, का कहना है कि बुखारको मार भगानेवाली जितनी भी व्यवस्थायें हैं उन सभीमें जल-चिकित्सा ही सर्वोत्तम है (Clinical Therapeutics, P. 875)।

अस्पतालोंमें न्यूमोनियाके कई रोगियोंकी पहली अवस्थामें जल-चिकित्सा करा कर देखा गया है कि इससे मृत्यु संख्या पहलेसे भी कम

हो गई। चेचक आदि रोगोंमें भी अनुकूल असर और फायदा ही नजर आया।

हम लोगोंके शरीरमें जो नियत ताप उत्पन्न होता है उसके १० भागमें से ९ भाग ही चमड़ेसे बाहर निकलता है। इस तापको बाहर खींच लानेके लिये पानीके समान अन्य कोई भी चीज नहीं है। इसलिये सब प्रकारके ज्वरके रोगियोंको अवश्य स्नान कराना चाहिये।

जिस प्रकार कुनैन इत्यादि विशाक्त दवाइयोंसे ज्वर कम कर दिया जा सकता है, स्नानके द्वारा भी ठीक उसी तरह ज्वर कम कर दिया जा सकता है। औषधिसे जो लाभ होते हैं वे सभी इसमें विद्यमान हैं। किन्तु इससे किसी प्रकारकी हानि नहीं होती। तेज बुखारके समयकी कई हालतोंमें एक बारके स्नानसे आधी डिग्रीसे लेकर दो डिग्री तक बुखार कम हो जाता है।

किन्तु रोगीके शरीरका ताप कभी भी बहुत कम नहीं करना चाहिये। शरीर के एकत्रित दूषित पदार्थ और रोगके विषको नष्ट करनेके लिये प्रकृति जब कभी भी कोई चेष्टा करती है, तो उस समय उसके भीतर एक गर्मी होती है। लूईकूने साहब कहते हैं, There is no disease without fever and no fever without disease—बिना ज्वरका न कोई रोग है, और कोई ज्वर बिना रोगसे नहीं होता है। (The New Science of Healing, P. 82)। रोगके समय अगर शरीरमें काफी ताप न हो तो रोगीके लिये यह अच्छा लक्षण नहीं है। पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति के प्रवर्तक हिपोक्रेट्स (Hippocrates) कहते हैं कि, मुझे थोड़ा बुखार दो तो मैं उससे सभी तरहके रोगोंको दूर कर दूंगा।

जब तक रोगका विष नष्ट न हो जाय तब तक यथेष्ट तापका रहना ही अधिक अच्छा है। इस तापके बिना प्रकृति किसी भी रोगको दूर नहीं कर सकती है। किन्तु जिस समय ज्वरका वेग बहुत बढ़ जाता है समय यह केवल रोगके बिषको ही नष्ट नहीं करता बल्कि हमारे

शरीरके खून और रसको भी सोखता है। इसलिये ज्वरके समय शरीरमें ठण्डे पानीका प्रयोग कर शरीरके उत्तापको इस प्रकार स्थिर रखना होता है कि जिससे बुखारका उत्ताप शरीरको किसी प्रकारका नुकसान न पहुंचने पावे।

जोरके बुखारमें रोगीको भापके स्नान इत्यादिका प्रयोग नहीं कराना चाहिये। उस समय पद्धतिके अनुसार ही रोगीको स्नान करानेसे वाष्प स्नानका फायदा पहुंचाया जा सकता है। ठण्डे पानीके स्पर्शसे चमड़ेके पहले संकुचित होने पर भी रोम-कूप इस प्रकार फैल जाते हैं कि इन फैले हुए रास्तोंसे शरीरका यथेष्ट विष बाहर हो जाता है और रोगीका ज्वर अपने ही आप कम हो जाता है।

स्नानके द्वारा शरीरके लाल कण और विशेष कर सफेद कण ज्यादातर बढ़ जाते हैं और ये कण रोगके कीटाणुओंको नष्ट कर देते हैं। इसलिये बुखारके समय शरीरसे अतिरिक्त ताप खींच लेनेसे केवल बुखार ही कम नहीं होता बल्कि इससे बुखारका असली कारण नष्ट होकर बुखार कम हो जाता है। स्नानके बाद शरीरके विषको नाश तथा दूर करने वालोंकी ताकत इस प्रकार बढ़ जाती है कि वे रोग और उसके कीटाणुओंको शरीरके अन्दर नष्ट कर डालते हैं या उनको बाहर फेंक देते हैं। टाइफाइडके रोगीको स्नान कराकर देखा गया है कि साधारण तौरसे पेशाबमें जिस परिमाणमें विष बाहर निकलता है स्नानके बाद उसका परिमाण पांच गुना ज्यादा बढ़ जाता है।

इस लिये ज्वर रहने से ही रोगीको स्नान करना चाहिये ऐसा नहीं बल्कि प्रत्येक रोगीको स्नान कराना चाहिये। रोगीके अवस्थाके अनुसार ही पूर्ण स्नानसे स्पञ्ज बाथकी व्यवस्था करनी चाहिये।

रोगके समय स्नानका प्रधान गुण यही है कि इससे रोगी इतने आरामसे रहता है कि रोग जड़से चला गया इसका पता ही नहीं चलता। ज्वर इत्यादि रोगोंमें साधारणतया कई उपसर्ग एकत्रित हो

जाते हैं। किन्तु रोगके आरम्भसे ही रोगीको स्नान कराया जाय, तो टाइफाइड, पेटकी बीमारी, सिर दर्द, कानकी पीड़ा, न्यूमोनिया, दिलकी जलन, मूत्र-ग्रन्थिकी सूजन, खूनकी कै एवं पक्षाघात इत्यादि उपसर्ग कभी भी पैदा होने नहीं पाते हैं। डाक्टरी किताबोंमें जिन कई लक्षणोंका उल्लेख मिलता है, उनमेंसे बहुत से प्रकट भी नहीं होने पाते हैं।

प्रायः देखनेमें आता है कि रोगके हट जानेपर रोगीका शरीर आधा हो गया है। किन्तु रोगकी पहली अवस्थामें जल-चिकित्सा चलानेसे शरीर विशेष खराब नहीं होने पाता और रोगके दूर हो जाने पर ऐसा मालूम होता है मानो रोगीको कोई विशेष बीमारी ही न हुई हो।

रोगके समय स्नान करानेसे रोगके बहुतसे लक्षण गायब हो जाते हैं।

स्नायु मण्डलीको स्निग्धकर रोगीको नींद लानेमें स्नानके सिवा और कोई दूसरी चीज नहीं है।

रुग्णा अवस्थामें अनेक समय फुसफुस, प्लीहा और मस्तिष्क इत्यादि में खूनकी अधिकता हो जाती है। इस अवस्थाको दूर करनेके लिये एलोपैथिक डाक्टर लोग इस शताब्दीमें भी जोंक लगाते हैं। किन्तु ठण्डे पानीके स्नानके बाद स्नायविक प्रतिक्रियासे चमड़ेमें सारा खून फैल जाता है एवं आन्तरिक खूनकी अधिकता जादूकी तरह छू मंतर हो जाती है।

जिस प्रकार रोगके समय स्नान जरूरी है उसी प्रकार रोगके बाद भी स्नान आवश्यक है। प्रकृति जिस समय रोगके विषको नष्ट करना चाहती है उस समय वह शरीरके अन्दर एक प्रकारकी गरमी पैदा करती है। यह उसकी नाशकारी मूर्ति है। ज्वरके बाद वह निर्माणके काममें लगती है। उस समय उचित स्नान द्वारा शरीरको स्निग्ध रखनेसे प्रकृतिको शरीरका संस्कार करनेके लिये उचित सहायता मिलती है।

किन्तु स्नानके सम्बन्धमें हम लोगोंकी धारणा बिलकुल उटपटांग होती है। यहां तक कि हम लोगोंके देशके कई डाक्टर ठंडे पानीके स्नान के नामसे सिहर उठते हैं।

एक बार कलकत्तेमें मैं जिस मकानमें रहता था उसके पासके घरमें हरिपद घोष नामके एक लड़केको बड़े जोरका बुखार हो आया। सुबह से ही लड़केने इस प्रकार रोना चिल्लाना शुरू किया कि पासके घरमें मुझे लिखना पढ़ना हराम हो गया। वह लड़का एक होमिओपैथिक डाक्टर का कम्पाउगडर था। पहले तो उसको डाक्टरका आदमी समझकर उसके पास नहीं गया। इसके बाद देखता हूं कि ग्यारह बज गये हैं, फिर भी किसीने उसके पास जाकर पूछा भी नहीं। तब मैं स्वयं उसके पास जा पहुंचा। जाकर देखता हूं कि उसका बुखार १०४ से भी ज्यादा है— रोगकी यन्त्रणासे वह छटपटा रहा है। तुरन्त ही मैंने उसे बिछौने से उठाकर हिप-बाथके लिये बैठाया। आश्चर्यकी बात है कि पानीमें दस मिनट तक बैठे रहनेके बाद उसकी अस्थिरता कम हो गई। मैंने करीब बीस मिनट तक उसको टबमें रखा। इसके बाद नियमानुसार उसके सारे शरीरको धोकर मैंने आठ दस लोटे जलसे उसे स्नान कराकर बिस्तरेपर लिटा दिया। विछौनेपर लिटानेके बाद मैंने उसका सारा शरीर कम्बल से ढक दिया और उसे कुछ गरम पानी भी पीनेको दिया। इससे उसे खूब अच्छी तरह पसीना हुआ।

किन्तु इसी बीच उसके डाक्टरसे जाकर किसीने कहा कि मैंने उसके कम्पाउन्डरको पानीके लोटेके बाद लोटे उड़ेलकर स्नान कराया है। सुनते ही डाक्टर मारे गुस्सेके आग बबूला होकर दौड़ा आया। मेरे कुछ कहनेके पहले ही उसने मुझे इस प्रकार गाली गलौज देना शुरू किया कि मैं अवाक रह गया। मन ही मन मुझे भी बहुत गुस्सा आया पर मैंने कहा कुछ भी नहीं। उस घरके और लोगोंने भी कहा कि लड़के को जरूर न्यूमोनिया हो जायगा। दूसरे दिन सुबहके वक्त जब लड़का नींद

से उठा तो सभी यह देखनेके लिये आये कि उसे कितना न्यूमोनिया हो आया है। किन्तु सभीने देखा कि उसे अब जरा भी ज्वर न था। कुछ दिनों बाद डाक्टर दुःखित होकर मुझसे क्षमा प्रार्थनाके लिये आये। किन्तु मुझे तो इतना गुस्सा आया था कि मैं तीन महीने तक उनसे बोला ही नहीं।

[३]

स्नानकी पद्धति (तरीका)

स्वस्थ अथवा अर्धस्वस्थावस्थामें डुबकी लगाकर स्नान करना सबसे उत्तम है। तालाब, नदी, पोखर या समुद्रमें जहां कहीं भी हो, स्नान किया जा सकता है। शहरके लोग हौजसे पानी लेकर स्नान कर सकते हैं। किन्तु रोगीको खास तरीकेसे ही स्नान कराना चाहिये।

यदि रोगी उठकर बैठ सकता हो और उसमें काफी ताकत हो, तो उसे घरके भीतर पूर्ण-स्नान कराया जा सकता है।

पूर्ण-स्नान (FULL BATH)

स्नानके पहले रोगीका सिर, मुंह, गर्दन, पेड़ू और जोड़ इत्यादिको ठण्डे पानीसे धो डालना चाहिये। इसके बाद रोगीके सिर पर एक गीला तौलिया लपेट कर उसके शरीर पर ठण्डा पानी उड़ेलना चाहिये। पहली बार एक लोटा पानी उसकी छाती पर उड़ेल कर दूसरा उसकी पीठपर उड़ेलना चाहिये। इसी प्रकार कई बार छाती और पीठ पर पानी उड़ेल कर स्नान खतम करना चाहिये। छाती और पीठ पर इस प्रकार पानी उड़ेलनेसे फुसफुस और हृदय मजबूत होते हैं।

अनेक समय रोगी ठण्डे पानीका बड़ा विरोध करते हैं। ऐसी अवस्था

में क्रमानुसार ठण्डे पानीके स्नानका (graduated bath) प्रयोग किया जा सकता है। पहले गरम पानीसे स्नान शुरू कर फिर बादमें कुछ-कुछ समय बाद उसमें ठण्डा पानी मिलाकर धीरे-धीरे पानीको ठण्डा करते जाना चाहिये। अथवा पुराने रोगियोंको प्रत्येक दिन पहलेकी अपेक्षा अधिक ठण्डे पानीसे स्नान कराया जा सकता है। जिस प्रकार क्रमशः अधिक ठण्डे पानीके व्यवहार करनेके पहले ठण्डे पानीका व्यवहार करना पड़ता है उसी प्रकार धीरे-धीरे स्नानका समय भी बढ़ाते जाना चाहिये। रोगीको पहले थोड़ा स्नान कराकर धीरे-धीरे स्नानके समयको बढ़ाते जाना चाहिये। ज्वरमें पहले पहल रोगीको तीन चार मिनट स्नान करानेके बाद फिर दस बारह मिनट तक स्नान कराया जा सकता है। इस प्रकार रोगी धीरे-धीरे ठण्डे पानीका आदी हो जाता है और इससे किसी प्रकारकी हानि होनेकी सम्भावना नहीं रहती।

रोगीको ठण्डे पानीसे स्नान करानेके बाद जरा भी आराम न करने देकर पहले हमेशा खाली हाथ उसके शरीरको मलते रहना जरूरी होता है। इससे रोगीको सर्दी लगनेका डर नहीं रहता और शरीरमें यथेष्ट ताप उतर आता है। स्नानके बाद ही बिना विलम्ब रोगीके शरीरको सूखे तौलिये या साफ चादरसे पोंछ देना चाहिये। इसके बाद रोगीके सारे शरीरको विशेषकर छाती और पीठको हाथोंसे मलकर गरम कर लेनेके बाद थोड़े समय तक उसके शरीरको गले तक कम्बल इत्यादिसे जरूर ढक देना चाहिये।

टबमें स्नान

घरमें बड़ा टब होनेसे रोगीको टबमें (६८° से ८०° डिग्री) ठण्डे पानीका पूर्ण-स्नान कराया जा सकता है। रोगीका सिर, गर्दन और मुख खूब ठण्डे पानीसे (५०°) धो और फिर उसके सिरको गीले तौलियेसे लपेट कर जितनी जल्दी हो सके रोगीको टबमें सुला देना चाहिये। अगर रोगीकी

गर्दन बाहर रहेगी, तो उसकी छातीमें विकार पैदा हो सकता है। इसलिये रोगीको गले तक पानीमें डुबोकर रखना जरूरी है। उस समय हमेशा रोगीके शरीरको मलते रहना चाहिये। बीच-बीचमें रोगीको टबमें बिठाकर उसके सिरपर ठण्डे पानीकी धार देनी चाहिये। यह पानीकी धार उसकी छाती और पीठसे नीचे उतर आनी चाहिये। साधारणतः ५ सेकेंडसे लेकर २० मिनट तक रोगीको इस तरह स्नान कराया जा सकता है; रोगीको कंपकपी लगनेके पहले ही टबसे उठा लेना आवश्यक है। इसके बाद सारे शरीरको जल्दी पोंछ कर खाली हाथ मालिश इत्यादिसे चमड़ेका ताप लौटा कर कुछ समयके लिये उसे गले तक कम्बलसे ढक देना आवश्यक है।

अगर रोगीको मामूली हल्का स्नान देना उचित प्रतीत हो, तो उसे तौलिया-स्नानका प्रयोग कराया जा सकता है।

तौलियेका स्नान (SPONGE BATH or TOWEL BATH)

रोगीको एक छोटी चौकीके ऊपर गरम पानीमें उसके दोनों पैरोंको डुबोकर बिठा अथवा मेजके ऊपर एक गरम पानीके बर्तनमें खड़ाकर या रोगीको बिछौने पर सुला कर उसके पैरोंके दोनों ओर गरम पानीकी बोतलें अथवा पैरोंके नीचे गरम पानीकी थैली रखकर पहले उसके सिर मुख, गर्दन, जोड़ और जननेन्द्रियके ऊपरी भागको अच्छी तरह धो देना चाहिये। रोगी स्वयं ही जोड़ इत्यादि स्थानोंको गीले तौलियेसे पोंछ सकता है। आखिरमें रोगीकी छाती और पेड़ू इसके बाद उसकी पीठ हाथ और पैर जरा दबाकर पोंछ देने चाहिये। अगर तौलिया सूख जाय तो उसे फिर गीला कर लिया जा सकता है। इसके बाद एक सूखे तौलियेसे रोगीके सारे शरीरको अच्छी तरह पोंछ कर उसे पैरोंके गरम स्नानसे हटा देना चाहिये। अथवा उसके पैरोंके नीचेसे गरम पानीकी

बोतलें या थैली इत्यादि हटा देनी चाहिये। उस समय या तो रोगीके पैरों पर दो लोटा ठण्डा पानी ढाल देना चाहिये या एक ठण्डे पानीसे भींगे गमछेसे उन्हें पोंछ डालना चाहिये। फिर रोगीके सारे शरीरको विशेष कर उसकी छाती और पीठको खाली हाथकी मालिश द्वारा गरम कर कुछ समय तक उसे गले तक एक कम्बलसे ढक देना चाहिये।

[४]

स्नानमें सावधानी

जिस किसी प्रकार इस उस तरहसे स्नान करने मात्रसे ही फायदा नहीं हो जाता है। स्नानका उद्दीपन फल उसी समय होता है जब पानीका ताप शरीरके तापसे कम हो एवं पानी ठण्डा हो। कुछ लोग सर्दीके भयसे गरम पानीसे स्नान करते हैं। इन लोगोंका जुकाम कभी दूर नहीं होता। सर्दी लगनेकी सम्भावनामें उससे छुटकारा पानेके लिये सबसे अच्छा उपाय है ठण्डे पानीके स्नानका आदी होना (William D. Zoethout—A Text-book of Physiology, P. 360)। ठण्डा पानी रोमकूपोंको बन्द कर ठण्डसे शरीरकी रक्षा करता है यह बात नहीं है, बल्कि नियमित रूपसे स्नान करनेसे खून चमड़ेमें उतर कर स्थायी रूपसे रहने लगता है एवं शरीरमें रोगोंको रोकनेकी ताकत (vital resistance) बढ़ जाती है, इसी लिये सर्दी दूर हो जाती है।

रोगकी पहली अवस्थामें कभी कभी गरम पानीसे स्नान करना जरूरी होता है। किन्तु उस समय भी इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिये कि पानीका उत्ताप धीरे-धीरे कम करते आया जाय, जिससे रोगी जल्दी ठण्डे पानीका आदी हो जाय।

मामूली तौरसे ठण्डे पानीका स्नान थोड़े ही समयतक करना चाहिये। जितने समय तक स्नानसे आराम मालूम हो उतने ही समय तक स्नान करना चाहिये। किन्तु बहुत अधिक समय तक स्नान करनेसे स्फूर्तिके बाद आलस्य एवं ग्लानि (depression) आ जाती है।

और फिर बुखारके वक्त थोड़े स्नानसे कुछ लाभ नहीं होता है। जोरके बुखारके वक्त बारबार पूर्ण-स्नान या तौलियेका स्नान इत्यादिका प्रयोग कर शरीरका ताप कम कर देना होता है।

जिस समय जोरका बुखार हो, शरीरमें अस्थिरता और जलन हो उस समय स्नान सबसे ज्यादा फायदेमन्द होता है। किन्तु मलेरिया इत्यादि रोगोंमें जब कंपकंपी और जाड़ेके साथ बुखार आया हो या जब चमड़ा ठण्डा, होंठ नीले एवं शरीरमें कंपकंपी हो, उस समय किसी भी हालतमें ठण्डे पानीसे स्नान कराना ठीक नहीं है। बुखारकी इस ठण्डी अवस्था (cold stage) के चले जाने मात्र पर ही स्नान कराया जा सकता है।

स्नानके पहले यह अच्छी तरह देख लेना जरूरी है कि शरीर गरम है या नहीं। यदि शरीर गरम न हो तो स्वास्थ्यकी अवस्थाके अनुसार कसरत कर, धूपमें घूम या मालिश कर शरीरको गरम कर लें, जब शरीर गरम रहे तभी स्नान कर लेना जरूरी है। स्नानके बाद भी मालिश इत्यादिसे शरीरको गरम कर लेना आवश्यक है।

कमजोर रोगीको बड़ी सावधानीसे स्नान कराना जरूरी है। मजबूत रोगियोंकी अपेक्षा कमजोर रोगियोंके शरीरमें ताप पैदा करनेकी शक्ति कहीं कम होती है। इसी लिये कमजोर रोगीको बहुत अधिक ठण्डे एवं बहुत ज्यादा समय तक स्नान कराना नहीं चाहिये। किन्तु इस बातको याद रखना चाहिये कि ठण्डे पानीसे अगर किसीका प्रयोजन है, तो वह सबसे ज्यादा कमजोर रोगीका है। क्योंकि ठण्डे पानीके सिवा जीवनी-शक्तिको बढ़ानेवाली और कोई चीज नहीं है।

बहुत छोटे बच्चे ठण्डे पानीको वरदाश्त नहीं कर सकते हैं। ठण्डे पानीसे उनको नहलानेसे फिर शरीर भी आसानीसे गरम होना नहीं चाहता है। इसलिये कम पानी या थोड़ा गरम पानी ही (७०°से ८०°) उन के लिये काफी है। इसपर भी बच्चोंको रोज नहलाना जरूरी है। यह जितना ही उनके शरीरको बढ़ानेके लिये जरूरी है उतना ही उनको बीमारीसे दूर रखनेके लिये प्रयोजनीय भी है। बहुतसे बच्चोंकी पेशाब बन्द हो जाती है। किन्तु रोज नहलानेसे ऐसा नहीं होता है। जाड़े के दिनोंमें पहले बच्चोंको तेल मालिश कर फिर कुछ समय धूपमें रखकर स्नान कराया जाय तो इससे उनकी कांति बढ़ती है, वे पुष्ट होकर आश्चर्य जनक ढङ्गसे बढ़ने लगते हैं।

कुमारा अवस्थाके कुछ पहले ही से लड़कियोंको दो बार स्नान करनेका आदी बनाना चाहिये।

ऐसा करनेसे उनका स्राव खूब अच्छा होता है। अनेकों स्त्री-रोग पास फटकने नहीं पाते। किन्तु स्त्रियोंको मासिकधर्मके समय कभी भी डुबकी लगाकर स्नान करना उचित नहीं है। किन्तु पहले तीन दिनों तक तौलियाका स्नान लेनेसे कोई हानि नहीं पहुंचती। इस समय अगर जोरका बुखार हो तो कुछ नम पानीसे शरीरको पोंछ लेना बहुत जरूरी है। जोरके बुखारके समय हल्की जल-चिकित्सासे स्राव बन्द नहीं होता। किन्तु इस प्रकारके ज्वरमें अपेक्षा करनेसे रोगीके शरीरमें विजातीय पदार्थ इस प्रकार उमड़ (fermented) सकते हैं कि उस समय रोगका वशमें लाना कठिन हो सकता है (Lindlahr—Practice of Natural Therapeutics, P. 80)।

बहुत ही बुड्ढे मनुष्योंके स्नानके सम्बन्धमें भी विशेष सावधान रहना जरूरी है। बहुत बुड्ढे लोग ठण्डे पानीको सहन नहीं कर सकते हैं। इसलिये जिन लोगोंको इसका पहलेसे अभ्यास न हो उन्हें पानीसे (७५° से ८५°F) स्नान करना जरूरी है।

स्वस्थ मनुष्योंके लिये रोजमर्रा नियमित समयपर ही स्नान करना जरूरी है। हर एक मनुष्यको कमसे कम दिनमें दो बार जरूर स्नान करना चाहिये। गरमीके दिनोंमें जितने समय तक शरीरको स्नान अच्छा लगे इसे करते रहना चाहिये। किन्तु जाड़ेके दिनोंमें खूब थोड़े समय तक ही स्नान करना आवश्यक है।

भोजनके बाद दो घण्टेके पहले कभी भी स्नान नहीं करना चाहिये। स्नानके बाद जब चमड़ेमें गरमी वापस आ जाय तभी पथ्य या अन्न खाया जा सकता है।

जब शरीर गरम हो तभी स्नान करना बहुत अच्छा है। किन्तु थकी-मांदी अवस्थामें कभी भी स्नान नहीं करना चाहिये। बहुत ज्यादा परिश्रम करनेके बाद अगर थकान मालूम हो तो पूरा विश्राम कर लेनेके बाद ही केवल स्नान करना चाहिये।

स्नानके समय शरीरको खूब रगड़ते रहना चाहिये। तौलिया या अंगौछा खुरदुरा होनेसे ही अच्छा होता है। तौलिया या खसखससे शरीरको रगड़नेसे शरीर खूब साफ हो जाता है और रोम-कूप खुल जाते हैं।

इस पद्धतिके अनुसार स्नान किया जाय तो स्नानसे पूरा पूरा फायदा होता है।

सप्तम अध्याय
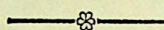
रोग किस प्रकार दूर होते हैं

चिकित्सक लोग इस बातका घमण्ड करते हैं कि वे रोगको दूर करते हैं—और दवाइयोंसे सभी रोग दूर हो जाते हैं! किन्तु हाथ में जरासी खुरच लगनेसे संसारके किसी भी डाक्टर या दवाईमें ऐसी ताकत नहीं कि उसपर मुलम्मा चढ़ा दे। प्रकृतिके उसे भीतरसे भर देने पर ही उस पर मुलम्मा चढ़ता है।

किसान खेतमें धान पैदा करता है, किन्तु सचमुच ही क्या वह उन्हें पैदा करता है? खेत में से वह दूसरे पौधे उखाड़ फेंकता है, खेतमें पानी देता है, कीड़ोंसे पौधोंकी रक्षा करता है, उनमें खूब हवा और धूप लगनेकी व्यवस्था करता है। किसान केवल यही कर सकता है। इससे वह रत्ती भर भी ज्यादा नहीं कर सकता है। प्रकृति अपनी रहस्यमयी क्रियासे तिल-तिलमें पौधेको बढ़ाती है, पौधेमें फूल खिलते हैं एवं फल लगते हैं। किसान चेष्टा कर प्रकृतिको केवल सहायता मात्र कर सकता है। किन्तु सैकड़ों प्रयत्न करने पर भी वह एक कलीको खिला नहीं सकता है। प्रकृतिके खिलानेसे ही फूल खिलता है। इसी प्रकार रोगको दूर करनेके उपायमें हम विजातीय पदार्थोंको शरीरसे दूर कर, शरीरके लिये पुष्टिकारक खाद्यका प्रबन्ध कर एवं शरीर को उचित हवा और प्रकाश दे, केवल प्रकृतिकी सहायता मात्र ही कर सकते हैं, किन्तु प्रकृति स्वयं ही शरीरके भीतर ही भीतर शरीरका

संस्कार करती है। संसारका सबसे बड़ा डाक्टर भी अपने शरीरकी जरा भी उन्नति नहीं कर सकता है। प्रकृतिके संस्कार करनेसे ही शरीरका संस्कार होता है।

ईश्वरने हमारे शरीरके अन्दर रोग दूर करने और शरीरकी सब प्रकारसे रक्षा करनेकी व्यवस्था कर रखी है। रोगको दूर करनेका प्रधान यन्त्र खून है। खून ही शरीरको दूषित पदार्थोंसे मुक्त करता है एवं यही शरीरके सभी भागोंमें पौष्टिकता पहुंचाता है। यन्त्रकी सहायतासे खून की परीक्षा करनेसे देखा जाता है कि खूनमें तीन प्रकारके उपादान हैं— लालकण (Red corpuscles), सफेदकण (White corpuscles), और खूनका रस (Plasma)। इसी खूनके रसके अन्दर लाल और सफेद कण तैरते रहते हैं। इनमेंसे हर एककी खास विशेषतायें हैं। हमारे खून के अन्दर जितने सफेद कण हैं उनके प्रायः चार-पांच सौ गुणा लालकण हैं। लाल कणोंके लाल होनेके कारण ही खूनका रङ्ग लाल होता है। ये फुसफुससे औक्सिजन खींच कर शरीरमें सब जगह ले जाते हैं। इस औक्सिजनके कारण शरीरमें ताप और शक्ति पैदा होती है।

शरीरके सफेद कणोंको साधारणतः लड़ने वाले कण कहा जाता है। जब किसी फोड़े या जख़मके कारण विशाक्त पदार्थ या रोगके कीटाणु शरीर के अन्दर प्रवेश करनेको तैयार होते हैं, तो हजारहों सफेद कण सुशिक्षित सिपाहियोंकी तरह जख़मके चारों ओर व्यूह बनाकर खड़े हो जाते हैं, जिससे दूषित घावसे विष शरीरके अन्दर प्रवेश न कर सके, इसीलिये वे इस तरह पहरा देते हैं। इसलिये फोड़ा होनेसे वे चारों तरफ मजबूत होकर रहते हैं। इस जगह पर रोगके कीटाणुओंसे उनका रीति पूर्वक युद्ध होता है। युद्धमें जो सफेद कण ध्वंस हो जाते हैं, उनके शरीरसे पीव पैदा होता है। जबतक शरीरमें आक्रमण करनेवाले शत्रु सम्पूर्ण रूपसे नष्ट नहीं हो जाते तबतक ये समान रूपसे युद्ध जारी रखते हैं। हमलोगोंका

शरीर इस प्रकारका एक सक्रिय यन्त्र है कि जिस समय हमारे शरीरमें कहीं भी जलन या जखम हो जाता है तो प्रकृति श्वेत-कणोंकी संख्या बढ़ा देती है।

भोजन, पीनेकी चीजों और निश्वासके साथ हमेशा हजारहों जीवाणु हमारे शरीरके अन्दर प्रवेश करते रहते हैं। अगर सफेद कण नहीं होते तो हम नहीं बच सकते। सफेद कण हमेशा हमारे शत्रुओंके साथ युद्ध कर हमारी रक्षा करते रहते हैं। हमारे शरीरके जीवकोष भी सर्वदा नष्ट होते रहते हैं। शरीरमें इनके इकट्ठे हो जानेसे ये भीतरमें कई रोगोंके जीवाणुओंको पैदा करते हैं। किन्तु किसी कोषके नष्ट होते ही सफेद कण उसको खाकर हजम कर लेते हैं। इसलिये शरीरके सफेद कण एक ओरसे हमारे शरीरके रक्षक हैं, तो दूसरी ओरसे वे उसके मेहतर हैं।

शरीरके खूनके रसमें भी स्वाधीन भावसे रोगके कीटाणुओंको नष्ट करनेकी ताकत है। अलग अलग रोगोंके अलग अलग प्रकारके रोगके विषोंको नष्ट करनेके लिये प्रकृति इनके भीतर विभिन्न प्रकारके प्रतिविषोंको (anti-toxin) पैदा करती है।

हमारे लिवरको खाद्य-परीक्षक (food inspector) कहा जाता है। शरीरके मुख्य मार्गमें जिस प्रकार जीभ प्रहरी है, भीतरमें लिवर भी ठीक उसी प्रकार प्रहरीका काम करता है। हमलोग जो कुछ खाते हैं वह सभी पहले लिवरमें पहुंचता है। लिवर उसमें से दूषित पदार्थ को छान कर अलग कर देता है और विशुद्ध खाद्य रसको खूनके अन्दर ढाल देता है। शरीरके रक्त स्रोतको लिवर साफ रखता है एवं विषको नष्ट करता है। यकृत के कारखानेमें यह काम दिन रात लगातार जारी रहता है।

हम लोगोंके प्लीहा और ग्रन्थियाँ देहके यथेष्ट विष और कीटाणुओंको नष्ट करते हैं। यही कारण है कि विभिन्न रोगोंमें प्लीहा, लिवर और ग्रन्थियां बड़ी हो जाती हैं।

हम लोगोंकी आंतें, मूत्राशय (kidney) एवं पसीनेकी ग्रन्थियां मल मूत्र और पसीनेके रूपमें शरीरके यथेष्ठ विषको बाहर करते हैं।

प्रकृतिने शरीरको स्वस्थ और नीरोग रखनेके लिये एवं उसे रोग मुक्त करनेके निमित्त शरीरके अन्दर इस प्रकार आश्चर्यजनक व्यवस्था कर रखी है।

बनोंमें जो समस्त पशु-पक्षी रहते हैं, समय समय पर उन्हें बड़ी बड़ी चोटें आ जाया करती हैं। कभी कभी तो बहुतसे पशुओंको दुःसह रोग आ घेरते हैं। उनके लिये कोई डाक्टर नहीं आता है। अतः हम लोगोंकी अपेक्षा वे जल्दी आसानीसे भले चंगे हो जाते हैं। इन्हें भला कौन चंगा करता है? प्रकृति ही भीतरसे इनको अच्छा कर देती है।

अमेरिकाके एक बहुत बड़े डाक्टर (Dr. Nicholas Senn) अपने व्यवसायका बड़ा नुकसान कर कैन्सर रोगके कारणका अनुसन्धान करनेके लिये अफ्रिका गये थे। वे अफ्रिकाकी बहुत सी अर्धसभ्य और असभ्य नग्न जातियोंके बीचमें घूमते रहे। बहुत दिनों तक अफ्रिकाके भीतर घूमकर उन्होंने यह खास बात देखनेकी कोशिश की कि किस जातिमें रोगका प्रभाव किस प्रकार है। उन्होंने देखा कि जिन सभी जातियोंका जीवन बनके पशु-पक्षियोंके जितना निकट है, उनमें कैन्सरकी बीमारीका आक्रमण उतना ही कम है। उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जो सम्पूर्ण जातियां वनके पशु-पक्षियोंके समान ही असभ्य हैं, उनमें मोटापन, मृगी, स्नायविक दुर्बलता इत्यादि सभ्यताके रोग नाममात्र भी नहीं हैं। वे अन्य रोगोंसे भी मुक्त हैं। यक्ष्मा रोगकी बात तो उनमें कोई जानता ही नहीं। जो समुद्रके किनारे आकर बस गये हैं एवं जिनका सभ्यतासे संसर्ग हो गया है, केवल उनमें ही यक्ष्मा रोग देखा गया (Kilka—Natural Ways of Cure, P. 10)।

बनके ये सभी पशु-पक्षी एवं अर्धसभ्य ये सब मनुष्य क्यों स्वस्थ होते एवं रहते हैं। हम लोगोंके भीतर शरीरकी रक्षा करने एवं रोगोंको

दूर करनेकी व्यवस्था रहती है, यही कारण है कि वे स्वस्थ हैं एवं स्वस्थ रहते हैं।

हम देखते हैं कि, दांतके भीतर अगर एक तिनका अटक जाता है तो जीभ अनजानमें ही बार बार उसी जगह पर जा लगती है। जबतक वह वहांसे बाहर नहीं हो जाता तबतक जीभको शान्ति नहीं मिलती। हमारे शरीरका जब कोई भी अंग अस्वस्थ हो जाता है तो जबतक वह स्वस्थ नहीं हो जाता प्रकृतिको शान्ति नहीं मिलती।

शरीरको स्वस्थ रखनेके लिये प्रकृति इसी प्रकार सजग रहती है। रोगकी प्रधान चिकित्सा है कि उसकी बाधाको दूर करना एवं उसके यन्त्रोंको संजीवित करना। हिपबाथ (कटिस्नान), स्टीमबाथ इत्यादि के द्वारा शरीरको दोषमुक्त कर जब स्नान इत्यादिसे शरीरके यंत्रोंको मजबूत कर लिया जाता है, तब वह सारे प्राणोंकी ताकत लगाकर तन्दुरुस्त शरीरको आप ही मजबूत कर देती है। प्रकृतिकी इस प्रकार सहायता कर शरीरको स्वस्थ रखने एवं रोग मुक्त करनेका और कोई दूसरा ऐसा निर्दोष उपाय नहीं है।

दवाईसे शरीरको आरोग्य करनेकी चेष्टा की जाती है, किन्तु ज्यादातर इससे लाभके बदले हानि ही हुआ करती है। शरीरके रक्त-स्रोतके दूषित होनेके कारण ही रोग या बीमारीकी उत्पत्ति होती है। दवा इसके ऊपर नये विषका-सा असर करती है। प्रकृति रोगके विषके कारण अस्थिर रहती है। अब उसे रोग तथा दवा दोनोंके विषोंसे लड़ना पड़ता है। इन दोनों विषोंसे लड़कर वह बिजयी होती है तो वह बचती है। अगर ऐसा न हुआ, तो पुराने और जीर्ण कुसंस्कारकी वेदीपर वह अपने जीवनका बलिदान कर देती है।

दवा अगर विषाक्त है, तो वह नुकसान करती है, अगर ऐसी न हुई, तौभी शरीरकी रुग्णावस्थामें वह शरीरके लिये विषके ही समान होती है। किन्तु दवाके मोहने लोगोंको अन्धा बना रखा है। अगर डाक्टर रोगीके

शरीरमें खूब मोटी सूई चुभा दे या उसकी विशाक्त दवासे रोगीका मुंह कड़ुवा हो जाय, तो रोगी समझता है कि उसका इलाज हो रहा है। यही कारण है कि डाक्टर लोग जान-बूझकर भी अक्सर अपनी इच्छाके विरुद्ध रोगीको दवा देनेके लिये विवश हो जाते हैं। इङ्गलैण्डके एक बड़े नामी डाक्टर अपने मरीजोंको सन्तुष्ट करनेके लिये पाव रोटीकी सहायतासे एक बड़ी-सी (bread pill) तैयार कर उसे अपने रोगियोंको देते थे। क्योंकि रोगीको दवा न देनेसे वह सन्तुष्ट नहीं होता है। ऐसे ही रोगियोंसे बुद्धिमान होमियोपैथिक डाक्टर लोग 'सूगर आफ मिल्क' बेचकर हर साल बहुत सा रुपया पैदा करते हैं।

किन्तु मनुष्यके द्वारा तैयार किये हुए विष पर निर्भर न रहकर भगवानकी इच्छा पर ही विश्वास रखना उचित है—अन्धेकी तरह नहीं—बुद्धिमानकी तरह युक्तिपूर्वक। भगवानके जिस नियमसे आकाशके करोड़ों ग्रह और उपग्रह परिचालित हो रहे हैं उसी नियमसे, हमारी शारीरिक प्रकृति भी चल रही है। अगर हम भगवानकी पैदा की हुई इसी सृष्टिका अनुसरण कर चलें, तो हमें किसी भी प्रकारकी बीमारी न हो। अस्वस्थ होनेपर प्रकृतिकी बाधाओंको दूर कर एवं प्रकृतिकी सहायता कर हम सब प्रकारके रोगोंसे छुटकारा पा सकते हैं।

—००—

अष्टम-अध्याय

—※—

कमजोर रोगीका इलाज

[१]

हिप-बाथ, स्टीम-बाथ और पूर्ण-स्नानसे अधिकांश रोगोंमें आराम पहुंचता है यह बात सच है, किन्तु बहुतसे ऐसे रोगी भी हैं जो इतने कम-जोर होते हैं कि उनको हिप-बाथमें नहीं बैठाया जा सकता है, स्टीम-बाथ देनेसे भी काम नहीं चलता एवं स्नान करानेसे उनका शरीर आसानीसे गरम होना नहीं चाहता। ऐसे सभी रोगियोंके लिये अपेक्षा-कृत हल्की पद्धतिकी आवश्यकता होती है। वे रोगी जिनको हिप-बाथ नहीं दिया जा सकता है, वे गीली कमर-पट्टी (wet girdle) लगाकर आसानी से पेट साफ कर सकते हैं। बहुत ही कमजोर रोगियोंको स्टीम-बाथ, खास कर बहुत देर तक स्टीम-बाथ देना कभी भी ठीक नहीं है। किन्तु भींगी चादरकी लपेट (wet-sheet pack) उन्हें यही फायदे पहुंचाती है। तौलियेके स्नान आदिसे भी उन्हें इसी प्रकार लाभ होता है। ये समस्त पद्धतियां चूंकि कमजोर रोगियोंके लिये ही हैं, तौ भी सबल रोगियोंके लिये भी इनका व्यवहार करनेमें कोई हर्ज नहीं है। बल्कि इनसे सभी प्रकारके रोगी बिशेष लाभ उठा सकते हैं।

तब भी यह जान लेना जरूरी है कि सबल और दुर्बल रोगी दोनोंके इलाजका तरीका एक ही है। पेट साफ करने, पसीना लाने, पानी पीने

एवं स्नानसे जिस प्रकार सबल रोगियोंका इलाज किया जाता है, कमजोर रोगियोंका इलाज भी इसी प्रकार करना चाहिये। उनका जोरदार इलाज न कर हल्का ही करना ठीक है।

कमजोर रोगीकी कब्जियत दूर करनेके उपाय

जो सभी रोगी हिप-बाथ में बैठनेके लिये असमर्थ हैं अथवा जिन्हें हिप-बाथ देनेकी सुविधा न हो, उनके लिये हिप-बाथके बदले गीली कमर-पट्टी (the wet girdle) बांधना ही सबसे उत्तम है। दिनमें कई बार अथवा रात भर इसके व्यवहार करनेसे इससे जल्दी पेट साफ हो जाता है।

गीली कमर-पट्टी (THE WET-GIRDLE)

मामूली आठ नौ इञ्च चौड़े एक कपड़ेको पानीमें भिंगोकर इस प्रकार निचोड़ डालना चाहिये कि उससे बूंद बूंद पानी न टपके। नाभिके चार
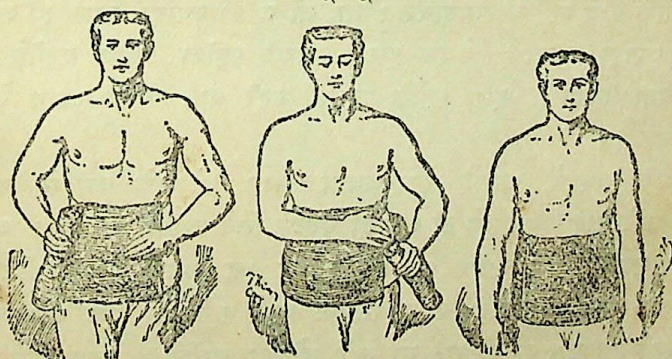
गीली कमर-पट्टी (The wet-girdlo)

पांच उंगली ऊपरसे इससे सारा पेड़ू और कमरके चारों ओर लपेट देना चाहिये। इस कपड़ेको दो से चार बार घुमाकर लपेट लेना काफी है। शरीरका ताप जितना ही ज्यादा हो उतनी अधिक बार लपेट देनी

चाहिये। महीन और पुराना कपड़ा सब तरहकी पट्टियोंके लिये काफी है।

इस कपड़ेको लपेट कर एक बड़े फ्लालेनका टुकड़ा अगर यह न हो, तो शालकी तह कर, उसे इस तरह लपेट देना चाहिये कि जिससे भींगे कपड़ेमें हवा न लगने पावे एवं न खूनका दौरा ही बन्द हो। इसके बाद फ्लालेनको कपड़ेके साथ एक सेफ्टी पिनसे अच्छी तरह अटका देना चाहिये या इसे पीठके चारों तरफ गांठ देकर बांधनेसे भी काम चल जाता है। यह थोड़े ही समय तक ठंडा रहता है और इसके बाद गरम हो उठता है। अगर गीला कपड़ा गरम न हो, तो कपड़ेकी लपेट कम कर देनी चाहिये। या पेड़ू के चारों ओर ज्यादा फ्लालेन या शाल और लगा देना चाहिये। कहनेका मतलब यह है कि पट्टीके नीचे थोड़ी गर्मी पैदा करनी चाहिये। ऐसा करनेसे ही फायदा होगा। किन्तु इतनी ज्यादा फ्लालेन नहीं लपेट देनी चाहिये कि रोगीका सारा शरीर गरम हो उठे। रोगीके लिये वही आरामदायक होगा, जो न तो ज्यादा गरम हो और न ज्यादा ठण्डा। केवल इस प्रकारकी पट्टीका प्रयोग करनेसे ही फायदा होगा। इस पट्टीके प्रयोगमें यही बात विशेष ध्यान देने लायक है।

कब्जियतमें खाली पेट अथवा प्रधान भोजनके कम से कम दो घण्टे बाद दिनमें इसे दो बार दो घण्टेके लिये लगाना चाहिये। एक बार सुबह और एक बार अपरान्हको भी यह लगाई जा सकती है। रातका पथ्य जरा जल्दी खाकर सोनेके पहले इसे और एक बार लेना जरूरी है। इस पट्टीको रात भर नहीं खोलना चाहिये। सुबह होते ही इसे खोल देना चाहिये। प्रत्येक बार पट्टी खोल कर सारे पेट और मेरुदण्डका जो हिस्सा ढका हुआ हो, उसे खूब अच्छी तरह निचोड़े हुए एक गीले गमछे या तौलियेसे पोंछ कर फिर उसे कुछ रगड़कर बादमें कपड़े आदि पहन कर उस स्थानको गरम कर लेना जरूरी है।

इस पट्टीमें यह सुविधा है कि इसके बांधनेसे रोजमर्राके काम-काज करनेमें किसी प्रकारकी दिक्कत नहीं होती। नींदमें भी इससे किसी प्रकारका खलल नहीं पहुंचता।

छोटी और बड़ी आंतोंके भीतर मलके विषाक्त होने या मामूली कब्जियतमें यह जादूका-सा असर करता है। संसारके सभी सभ्य देशोंमें इस पट्टी का प्रचलन है। गत सौ वर्षोंसे जर्मनीमें इस पट्टी का घर-घर प्रचार हो रहा है। इस देशके निवासी इस पट्टीको कहते हैं— Neptune's girdle।

इस की उपयोगिता केवल इसी क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है। ऊपरके पेट तथा पेड़ूकी विभिन्न आतोंके रोगोंमें इस पट्टीको ऊपर या नीचे आवश्यकतानुसार बांधनेसे बड़ा लाभ पहुंचता है। पाकस्थली और लिवरके रोगोंमें इससे इन दोनों स्थानोंको ढक कर कुछ ऊपरकी ओर बढ़ा देना चाहिये। औरतोंके जरायु इत्यादि रोगोंमें नाभिसे नीचे सारे पेड़ूके ऊपर इसका प्रयोग जरूर करना चाहिये।
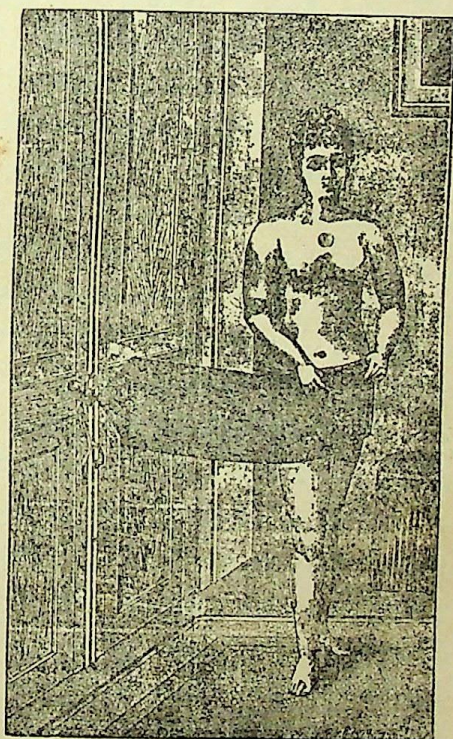
स्त्री-रोगोंमें गीली कमरपट्टी

पाकस्थलीके बढ़ जाने एवं झूलने (dilatation and prolapse) अथवा खानेके बाद पेटमें भारीपनका अनुभव होनेसे इस पट्टीके प्रयोगसे विशेष फायदा होता है।

पुराने अजीर्ण (chronic dyspepsia) में यह बहुत ही फायदेमन्द है। जिस किसी भी प्रकारका अजीर्ण क्यों न हो, उसे दूर करनेके लिये इससे बढ़ कर और कोई उपाय नहीं है। किन्तु इसके लिये गीले कपड़ेको खूब निचोड़ कर सूखा जैसा करके काममें लाना चाहिये। डाइरियामें इसे एक या दो घण्टे बाद बदलते रहनेसे बहुत लाभ पहुंचता है। लोगोंका विचार है कि अजीर्ण और कब्जियत दो विरोधी रोग हैं। किन्तु अजीर्ण कब्जियतकी सन्तान है। कब्जियतका असली कारण दूर होनेसे अजीर्ण अपने आप हट जाता है। गीली कमर पट्टी पेटमें एकत्रित दूषित पदार्थों और उत्तापको रोम-कूपोंको खोल कर बाहर कर देती है एवं उससे पेड़ू खूनको खींच कर अपने विभिन्न यन्त्रोंको मजबूत कर लेता है। यही कारण है कि इससे कब्जियत और अजीर्ण दोनों दूर हो जाते हैं।

पाकस्थली और लिवरके ऊपर इसे बांधनेसे दोनों यन्त्र साफ हो जाते हैं और इनके काम करनेकी शक्ति बढ़ जाती है।

जिनकी पाकस्थली और आंतें फूल उठती हैं एवं जिनकी आंतोंकी हालत अत्यन्त शोचनीय हो गई हो, उन्हें इस पट्टीसे विशेष फायदा पहुंचता है। ऐसी हालतमें कपड़ेको खूब ठण्डे पानीमें डुबो और खूब निचोड़ कर प्रयोग करना आवश्यक है। इसे ज्यादा फ्लालेनसे नहीं ढकना चाहिये। पट्टीको दो तीन घण्टे व्यवहार करनेके लिये प्रत्येक घण्टे बाद बदलते रहना चाहिये। ढाकाके इस्लामिया कालिजके प्रिंसपल मि० अब्दुल हाकिम, एम० ए०, बहुत दिनोंसे पेटके कई रोगोंसे कष्ट पा रहे थे। आखिर कार उनकी ऐसी हालत हो गई कि वे कुछ भी हजम नहीं कर सकते थे। उनका पेट हमेशा फूला रहता था। इससे उनको हृदयकी धड़कन, श्वास-

कष्ट एवं शिर दर्द इत्यादि रोगोंने आ घेरा। अब क्या था, वे जीवनसे एकबारगी निराश हो गये। उनकी इस हालतमें मैंने उन्हें एक गीली चादरकी लपेट (wet-sheet pack) दी और बादमें गीली कमर-पट्टीकी व्यवस्था की। इस पट्टीके सात दिन तक व्यवहार करनेके बाद उनका पेट अपनी स्वाभाविक हालतमें आ गया और वे सब तरहका साधारण पथ्य ग्रहण करने लगे। इसके बाद जल-चिकित्सा द्वारा उनको कई अन्य रोगोंमें भी विशेष फायदा हुआ।

एलोपैथिक चिकित्सासे आंतोंके घाव (duodenal ulcer) साधारणतः अच्छे नहीं होते। इस रोगसे लोग पन्द्रह-बीस वर्षतक दुख पाते हैं। किन्तु जल-चिकित्सा एवं खास कर इस पट्टीसे ये जल्दी आराम हो जाते हैं। खिदिरपुरके दुर्गामोहन मुखोपाध्याय बहुत दिनोंसे आंतोंके घाव और पेटके विभिन्न रोगोंसे तकलीफ पा रहे थे। अतः उन्होंने बहुतोंसे इलाज कराया। किन्तु इससे कुछ भी फायदा नहीं हुआ। वे जीवनसे पूर्ण निराश हो चुके थे। मैंने कई दिन गीली चादरकी लपेट इत्यादिसे उनके सारे शरीरका इलाज किया। बादमें हर एक रातको गीली कमर पट्टीकी व्यवस्था कर खास पथ्यकी व्यवस्था की। इस इलाजको तीन महीने तक जारी रखनेके बाद उनकी आंतें अपने स्वाभाविक रूपमें आ गईं। दुर्गा बाबूको और भी कितने ही भयानक रोग थे। उनका हृदय बहुत कमजोर था। हमेशा ही उन्हें जुकाम हो जाया करता था। बीच-बीच में उनके गलेसे खून निकला करता था। उनकी छातीकी दशा अत्यन्त शोचनीय थी। उन्हें इस बातका अन्देशा था कि उन्हें यक्ष्मा रोग हो गया है। अम्ल रोगसे भी वे बड़ा दुख पा रहे थे एवं उन्हें और भी कई रोग थे। तीन महीने बाद विभिन्न प्रकारकी जल-चिकित्सासे उनका हृदय मजबूत हो गया। छातीकी खराबियां भी दूर हो गईं। मामूली तौरसे उनका शरीर एक साधारण आदमीकी तरह स्वस्थ हो गया।

आंतोंकी सूजन जो बार बार (recurring appendicitis) लौट आती है, उसमें भी यह विशेष लाभ पहुंचाता है। इस अवस्थामें इसका प्रयोग पेड़ूके निम्न भागमें करना और बार बार बदलते रहना चाहिये।

गर्भावस्थामें इस पट्टीका व्यवहार करनेसे गर्भिणीके गर्भ संचार सम्बन्धी बहुतसे रोग इससे दूर हो जाते हैं। स्त्रियोंके गर्भ सम्बन्धी जिस किसी भी रोगमें यह अपना फायदा दिखाये बिना नहीं रहता।

सब प्रकारके पुराने मेरुदण्डके दर्दोंमें यह विशेष रूपसे फायदा पहुंचाता है। पेड़ूके अन्दर जहां कहीं भी घाव, फोड़ा या फुन्सी हो या स्नायविक दुर्बलता हो अथवा सख्त अपचके रोगोंमें भी यह लाभ पहुंचाता है।

पेट साफ करनेमें इस पट्टीका विशेष उपयोगी होने पर भी अगर रोगीको बुखार हो तो, इसका कभी भी प्रयोग नहीं करना चाहिये। रोगीको बुखार रहने पर कमर पट्टीके बदले, सबल रोगीको कटिस्नान एवं सबल और दुर्बलको दोनों प्रकारके रोगियोंको पेड़ूमें कादा-मिट्टीकी उष्णकारी पट्टीका प्रयोग कराना आवश्यक है।

[२]

कमजोर रोगीके उत्तापका इलाज

गीली चादरकी लपेट (wet-sheet pack)

गीली चादरकी लपेटको वाष्प-स्नानका छोटा रूप कहा जा सकता है। तीन चार पुराने रोंयेदार कम्बलोंको खाटके ऊपर डाल कर गीली चादरकी लपेट लेनी होती है। घरमें अगर तीन चार कम्बल न हों, तो

दो लिहाफोंके ऊपर एक रोंयेदार कम्बल डाल कर भी काम चल सकता है। कम्बल बिछा कर उसके ऊपर ठण्डे पानीसे भींगी एक बिछानेकी चादर फैला कर बिछा देनी होती है। चादरको खूब ज्यादा निचोड़ लेना चाहिये। रोगीके इस चादरपर सो जानेपर जिधर उसकी पीठ हो उसके ठीक नीचे रोगीके बगलसे पेड़ूके आखिर तक जैसे ढक दिया जाय, इसतरह एक और गीले कपड़ेका टुकड़ा चादरके ऊपर बिछा देना चाहिये। चादर पर लिटानेके पहले खूब अच्छी तरह सिर, मुख और गर्दनको धो डालना जरूरी है। इसके बाद जितना आसानीसे सहा जा सके उतने गरम पानी के एक गिलासमें नीबू के रसकी कुछ बूंदें डाल उसे पीकर रोगीको चादरके ऊपर आकर लेट जाना चाहिये।
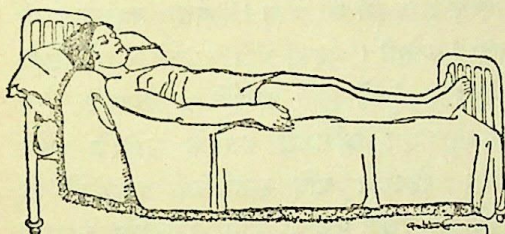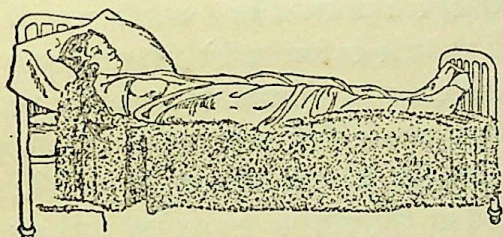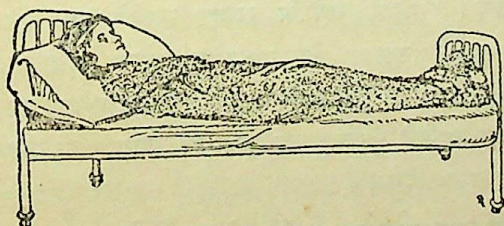
गीली चादरकी लपेट (Wet-sheet pack)

रोगीको चादरके ऊपर सुला कर पहले चादरके ऊपरका हल्के कपड़े के टुकड़ेसे रोगीकी बगलसे पेड़ूके आखिर तक अच्छी तरह जरूर ढक

देना चाहिये। इसके बाद रोगीके दोनों हाथोंको लम्बा फैला कर शरीरके पास रख देना चाहिये। फिर इसके बाद रोगीके गलेसे लेकर सारे शरीरको इस प्रकार ढक देना चाहिये कि जिससे उसके सारे शरीरका हर एक हिस्सा ठण्डी चादरके सम्पर्कमें आ जाय। ऐसा करनेसे रोगी को कभी भी ठण्ड नहीं लगने पावेगी। इसी लिये चादरसे ढकते समय चादरको दोनों पैरों और हाथोंके बीचमें खुली जगहोंपर भीतरको मोड़ देना चाहिये। चादरसे ढकते समय कौशलसे रोगीके शरीरके अन्य कपड़ोंको हटा देना चाहिये। रोगीको यदि स्नायविक कमजोरी हो अथवा वह बहुत कमजोर हो, तो उसके एक या दोनों हाथोंको चादरके बाहर (किन्तु कम्बलके भीतर) रखा जा सकता है। चादरको मोड़ देने पर रोगीको एक कम्बलसे इस प्रकार ढक देना चाहिये कि चादर चारों तरफसे कम्बलसे अच्छी तरह ढक जाय। रोगीको एक कम्बल ओढ़ा कर उसके पैरोंके नीचे एक एक गरम पानीकी थैली (hot water bag) या दो गरम पानीके बोतलें अथवा ये दोनों ही रख देने जरूरी हैं। इसके बाद दूसरे दो कम्बलों या लिहाफोंसे एक एक कर रोगीके गले तक सब बदन ढक देना चाहिये। रोगीको लपेटके अन्दर रखनेके बाद ही ठण्डे पानीसे भींगे एक कपड़ेसे उसका सिर जरूर ढक देना चाहिये। जितने समय तक रोगी इसके अन्दर रहे उतने समय तक यह गमछा या कपड़ा उसके सिरपर रहना चाहिये। अगर यह गरम हो जाय, तो उसे बीच बीच में बदलते रहना चाहिये।

इस लपेटका उपयोग साधारणतया ४५ मिनटसे एक घण्टे तक करना चाहिये। जाड़ेके दिनोंमें इसे एक घण्टेसे कम समय तकके लिये बिना काम नहीं निकलता। गीली चादरकी लपेटमें वाष्प-स्नानकी तरह धड़ाधड़ पसीना नहीं आता है। लपेटके भीतर इससे जो पसीना निकलता है, वह प्रायः दिखाई नहीं (insensible perspiration) देता है। अगर पसीना ज्यादा लाना हो, तो हर एक दस मिनटके बाद रोगीको आधा गिलास

गरम पानी पिलाना उचित है। अगर भीतरमें हल्की चादर देकर बाहरके कम्बलोंकी संख्या बढ़ा दी जाय, तो खूब पसीना निकल सकता है।

लपेटका काम पूरा हो जाने पर रोगीके कम्बल आदि हटा देने चाहिये। कमजोर रोगीके मामूली गरम पानीमें एवं सबल रोगीको साधारण पानीमें डुबोये और निचोड़े हुए तौलियेसे अंग प्रत्यंग एक एक कर अच्छी तरह पोंछ डालने चाहिये। इसके बाद कुछ गीले तौलिये को रोगीके शरीरके विभिन्न अंशों पर रख तब तक रगड़ते रहना चाहिये, जब तक शरीर स्वभाविक दशामें न आ जाय और इस तरह उसकी गर्मी अलग न हो जाय। इससे पसीनेके साथ सभी विष दूर हो जाते हैं और सारे शरीरमें जीवनी शक्ति उद्दीप्त होती है। शरीर पोंछ लेनेके बाद ही रोगीको अवश्य ही १० से १५ मिनट तक हिपबाथ देना चाहिये। स्टीम-बाथ आदि सब तरहके गरम स्नानोंके बाद हिप-बाथका प्रयोग करना जरूरी है। इसके बाद रोगीको उसके शरीरकी अवस्थाके अनुसार ही पूर्ण-स्नान (full bath) या स्पञ्ज-बाथ कराना चाहिये। शरीरमें ठण्डी हवा न लगने देनेके लिये उसे घरके अन्दर ही स्नान कराना चाहिये। वे रोगी जो हिपबाथ लेनेमें असमर्थ हैं, उनके पेड़ूमें दश मिनट या उतने समयतक जबतक कि उन्हें आराम मालूम दे, एक भींगा गमछा धर उसे बार बार बदलते रहें। स्टीमबाथ लेनेके बाद जिन जिन नियमोंका अनुसरण करना होता है, उन सभी नियमोंका पालन गीली चादरकी लपेटमें भी करना होता है। क्योंकि गीली चादरको लपेट स्टीम-बाथका केवल भेद मात्र है, इसी लिये लपेट लेनेके पहले पेड़ूको खूब अच्छी तरह साफ कर लेना जरूरी है, एवं इसके लेनेके बाद कई दिनों तक प्रत्येक बार नींबूके रसकी कई बूंदोंके साथ खूब पानी पीना चाहिये।

गीली चादरकी लपेटकी उपयोगिता

यदि यह लपेट ठण्डे पानीमें भिगाकर ली जाती है, तो भी यह ठण्डी नहीं है। भींगी चादर दो तीन मिनट तक ही ठण्डी रहती है, किन्तु बाद ही में यह शरीरको गर्मीसे गरम हो उठती है। उस समय खून चमड़े की आखिरी पर्त तक दौरा करने लगता है। इससे रोगीके सारे शरीर के रोम-कूप खुल जाते हैं एवं इस तरह खुले हुए हजारहों रास्तोंसे शरीरके दूषित पदार्थ गलकर देहसे बाहर निकल आते हैं।

स्टीमबाथसे जो काम होते हैं, वे सारे इस लपेट से भी हो जाते हैं। किन्तु यह लपेट स्टीम-बाथसे भी ज्यादा अच्छी है। शरीरको अत्यन्त गरम न कर ठण्डी ही अवस्थामें इसके अन्दर रखकर उससे पसीना बाहर करनेकी जो यह प्रणाली है, वह जल-चिकित्साके संसारमें अतुलनीय है। दुर्बल तथा सबल सभी प्रकारके रोगियोंको समान रूपसे इसका प्रयोग कराया जा सकता है।

जब कभी मनमें हो कि कोई बीमारी आ घेरनेवाली है, तो शरीरकी इस अवस्थामें पेड़ूको साफ कर केवल एक गीली चादर की लपेट ले लेनेसे शरीरमें उस रोगका विस्तार होना एक तरहसे असम्भव हो जाता है। इससे यह नहीं समझ लेना चाहिये कि बीमारी दबा दी गई है। इस लपेटसे शरीरमें जमा हुए विजातीय पदार्थ एवं उनके भीतर बढ़े हुए जीवाणु और उनका विष पहले चमड़ेके रास्ते एवं बादको मल और मूत्रके साथ बाहर हो जाते हैं। इसी लिये प्रकृतिको उनके आक्रमणसे मुक्त होनेके लिये रोगको और सहारा लेनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। रोग होनेसे भी उससे जल्दी ही छुटकारा मिल जाता है।

शरीरमें विषाक्त पदार्थोंके जमा होनेसे ही ज्यादातर ज्वर आदि रोगोंसे रोगियोंकी मृत्यु हो जाया करती है। शरीरमें जमा हुआ विष उसके मर्मस्थानों (vital centres) और शरीरके दूसरे यंत्रोंको सड़ा

देता है या उन्हें नष्ट कर देता है। इस लिये रोग होते ही बिना किसी प्रकारकी देरीके गीली चादरकी लपेट द्वारा शरीरको विजातीय और विषाक्त पदार्थोंसे मुक्त कर देनेसे रोगीकी मृत्यु होनी कठिन हो जाती है।

मामूली बुखार आदि रोगोंमें बाहरी चमड़ा बहुत ही संकुचित और सख्त हो जाता है। इस लिये शरीरके अन्दरकी गरमी बाहर नहीं होने पाती एवं शरीरका भीतरी भाग बहुत ही गरम हो जाता है। गीली चादरकी नम गर्मी रोम-कूपोंको खोल देती है एवं इन खुले हुए रास्तोंसे काफी गरमी बाहर निकल आती है, जिससे बुखार अपने ही आप कम हो जाता है।

डाक्टर लोग दवाइयोंसे बुखार कम करते हैं। किन्तु बहुधा दवासे बुखार इसी लिये कम हो जाता है कि उससे हृत्पिंडकी क्रिया, श्वास-प्रश्वास, सफेद और लाल कण एवं शरीरके समस्त यंत्र मन्द पड़ जाते हैं। अर्थात् प्रकृति शरीरके विषको नष्ट करनेकी जो कोशिश करती है, उसकी इस शुभ चेष्टाको दबा देनेसे ही बुखार कम हो जाता है। किन्तु गीली चादरकी लपेट बिलकुल ही स्वाभाविक ढंगसे रोमकूपोंको खोल देती है, जिससे विषाक्त चीजें बाहर हो जाती हैं और बुखार छू मंतर हो जाता है।

एक बार जब मैं देशसे कलकत्ते आनेवाला था, तब मेरे भानजेको बड़े जोरका बुखार चढ़ आया। दूसरे ही दिन मेरे कलकत्ता जाने की बात थी। किन्तु मेरी बहन इस हालतमें किसी भी प्रकार मेरे जानेके लिये राजी नहीं हुईं। मैंने तब उनसे कहा, तुम्हारे बेटेको अच्छा कर ही मैं जाऊंगा। उसी समय मैंने लड़केका पेट साफ करने के लिये शहदके साथ एक पिचकारी दी। इसके एक घण्टे बाद फिर गीली चादरकी एक लपेट दी। इसके बाद शरीरको ठण्डे पानीसे कई बार पोंछ डाला। इसके फलस्वरूप बुखार कम होने लगा और

दूसरे दिन तो बुखारका नामोनिशान नहीं था। अब मैं कलकत्ता चला आया। इसी तरह गीली चादरकी लपेटसे मैंने कई बार विभिन्न प्रकार के बुखारोंको दूर किया है।

इस लपेट द्वारा शरीरसे इतना विष निकल आता है कि लपेट खोलते समय उसके अन्दरसे बड़ी तेज गन्ध आती है। जो लोग तम्बाकूका सेवन करते हैं, उनको देर तक लपेटके अन्दर रखनेसे चादरके भीतरसे ठीक-ठीक तम्बाकूकी-सी बदबू आती है। जिन लोगोंके शरीरके अन्दर बहुतसे दूषित पदार्थ रहते हैं, अनेक समय उनके शरीरसे निकले हुए विषसे चादर बहुत कुछ पीले रङ्गकी हो जाती है।

पुरानी कब्जियत दूर करनेके लिये यह एक अचरजकी चीज है। कटि-स्नान आदिके साथ बीच-बीच में भींगी चादरकी लपेट लेने एवं आहारको नियंत्रित करनेसे कितनी भी पुरानी कब्जियत क्यों न हो दूर हो जाती है।

छातीके सभी प्रकारके रोगोंमें यह विशेष लाभदायक होता है। खास कर खांसीके साथ पुराने ब्राँकाइटिश एवं पुरानी प्लूरिसीकी बीमारी में यह बहुत ही फायदेमन्द हैं। कलकत्तेके उच्च सहकारी इनकमटैक्स आफिसर मि० समसुद्दीन अहमद एक लम्बे अर्सेसे पुराने ब्रांकाइटिश से कष्ट पा रहे थे। उन्हें मामूली कारणोंसे सर्दी लग जाती थी और यह सारे साल जारी रहती थी। उन्हें एक बार यह लपेट देनेसे देखा गया कि उनकी छाती अपनी स्वभाविक अवस्थामें आ गई और उस पर कहीं भी ब्राँकाइटिशका नामोनिशान नहीं था। इसके सिवा उन्हें हमेशा रहनेवाली कब्जियत, अम्लरोग, हौलदिली वगैरह बीमारियाँ भी थीं। कुछ समय तक जल-चिकित्सा जारी रखनेपर उन्हें इन सभी रोगोंसे छुटकारा मिल गया।

श्वासके रोगीको तन्दुरुस्त और रोगमुक्त करनेके लिये इसके समान और बहुत ही कम इलाज हैं। केशव सेन स्ट्रीटमें रहनेवाले ब्रजनाथ

महाशयका चेहरा देखकर कोई भी नहीं कहता था कि वे बचेंगे। श्वासरोग उनका दैनिक मित्र बन गया था। उनका सारा शरीर अस्थिपंजर मात्र था। उन्हें एक दिन भींगी चादरकी लपेट देनेसे देखा गया कि उसका खिंचाव कम हो गया और छातीमें श्वासका लेशमात्र भी न रह गया। उन्हें पेटका अफरना, पित्त, कब्जियत, अनिद्रा वगैरह कितने ही रोग थे। इसके बाद दो महीना और जल-चिकित्सा जारी रखनेसे वे मौतके घाटसे लौट आये।

उदरामयके रोगमें (intestinal catarrh) एवं प्लीहा, यकृत और मस्तिष्कके रक्ताधिक्यमें भीतरी यंत्रसे खूनको चमड़ेमें खींचकर क्षण मात्रमें यह रोग तथा रक्ताधिक्यको दूर कर देता है। पुराने उदरामयके रोगियोंको इस लपेटका प्रयोग महीनेमें दो वार कराया जा सकता है। किन्तु रोगीके शरीरमें काफी मांस न हो, तो २० या २५ मिनट बाद शरीर गरम होते ही इस लपेटको हटा देना होता है।

पांडु रोगमें (jaundice) यह चमड़ेकी चिलक तथा उत्तेजनामें जादू मंत्रका असर करता है। क्योंकि यह शरीरका काफी विष बाहर कर देता है, जिससे रोगी तन्दुरुस्त हो जाता है।

स्वप्नदोषको दूर करनेके लिये इस लपेटके समान और कोई दूसरी चीज नहीं है। बहुबाजार स्ट्रीटके Mr. E. Pereira नामक एक साहब किसी अंग्रेजी पत्रमें मेरे एक लेखको पढ़ कर मेरे पास इलाज करानेके लिये आये। उनको हफ्तेमें दो तीन दिन एवं किसी-किसी रातको दो तीन बार तक स्वप्नदोष हो जाया करता था। उनका शरीर सूख कर काठ हो गया था। मैंने हफ्तेमें उनको दो भींगी चादरकी लपेटें दी एवं वे रोज घरमें हिपबाथ लेने लगे। इस प्रकार इलाजसे तीन हफ्तेके भीतर ही उनको आराम हो गया। और भी कितने ही रोगियोंको जिनमें से कई बहुत समयसे उत्तेजक कविराजी दवाइयोंका प्रयोग करते थे, या कई दूसरे कारणोंसे इस बीमारीसे कष्ट पा रहे थे, मैंने अच्छा किया है। इस

रोगमें भींगी चादरकी लपेटके बाद शीतल घर्षण (cold friction) करनेसे जल्दी फायदा होता है।

इससे किन किन रोगोंमें फायदा पहुंचता है, उनकी फेहरिस्त देना फजूल है। शरीरमें बिभिन्न जातीय दूषित पदार्थोंका जमा होना ही रोगका असली कारण है। इससे शरीरके दूषित पदार्थ बाहर हो जाते हैं। यही कारण है कि इसका ठीक ठीक प्रयोग करनेसे रोगी सभी प्रकारके रोगोंसे छुटकारा पा जाता है।

इससे मलेरिया, इनफ्लूएंजा, टाइफाइड, सब तरहके बुखार, सर्दी, खांसी, कूकर-खांसी (whooping cough), ब्रांकाटिश, न्यूमोनिया, यक्ष्मा, और फुसफुसकी सभी बीमारियां, भयानक फोड़े, पीठके फोड़े, निकसारी, चेचक, आंव, पेटकी खराबियां, वात, गनोरिया, उपदंश, हिष्टोरिया, अंतड़ियोंकी सूजनका रोग (appendicitis), डिप्थिरिया और प्लेग आदि नयी बीमारियां (acute disease) छूट जाती हैं।

यह पुरानी बीमारियोंमें (chronic disease) में भी समान रूप से फायदा पहुंचाता है, क्योंकि सभी रोगोंका मूल कारण एक ही है। अजीर्ण (dyspepsia) अनिद्रा, स्नायविक दुर्बलता, यकृतका फोड़ा, मृगी रोग (epilepsy), पाकस्थलीके घाव (gastric ulcer), हृदयकी सब तरहकी बीमारियां, पागलपन एवं पक्षाघात इससे आराम हो जाते हैं (Henry Lindlahr, M. D.—Practice of Natural Therapeutics, P. 86-89)।

छोटे छोटे रोगोंमें मामूली तौरसे एक बार लपेट लेनेसे आराम हो जाता है। किन्तु पुराने रोगोंमें इसका प्रयोग बार बार करना जरूरी है। पूरे समयके लिये लपेटका प्रयोग करनेपर, मामूली तौरसे महीनेमें तीन बार इसका प्रयोग करना काफी है। किन्तु सांघातिक रोगोंमें

आवश्यकता होने पर इसका हफ्तेमें दो बार भी प्रयोग किया जा सकता है।

लपेट लेनेमें सावधानी

रोगीको गीली चादर पर सुलानेके पहले यह खास कर अच्छी तरह देख लेना जरूरी है कि उसका शरीर गरम है कि नहीं। अगर रोगीके शरीरमें ठण्ढ अथवा कंपकंपी हो या रोगी बच्चा, बहुत बुड्ढा अथवा बहुत कमजोर हो, तो उसके शरीरको एक बार गरम कर लेनेके बाद लपेटका प्रयोग करना ठीक है। इसलिये रोगीकी रीढ़की हड्डीके ऊपर और उसकी ऊपरकी ओर सारी पीठको दस पन्द्रह मिनट तक गरम कर अथवा उसे एक कुर्सीके भीतर ४ से ७ मिनटका वाष्प-स्नान दे अथवा सिरपर गीला गमछा दे उसे कुछ समयतक घुमा कर शरीरके गरम होनेपर तुरन्त ही रोगीको चादरके ऊपर सुला देना चाहिये। कहनेका तात्पर्य यह है कि रोगीको चादर पर सुलानेके पहले उसका शरीर इस प्रकार गरम हो जाना चाहिये कि चादर पर सोनेमें उसे आराम मालूम हो। किन्तु रोगीको अगर बुखार हो या तन्दुरुस्त शरीर अगर ठण्डा न हो तो शरीरको गरम करना जरूरी नहीं होता है।

रोगीके किसी अंगमें अगर सूजन हो, तो इस लपेटके व्यवहारमें कई प्रकारकी सावधानियोंका अवलम्बन करना आवश्यक है। इस हालतमें लपेटके नीचे पीड़ित अंगके ऊपर एक और पट्टी देनी चाहिये। यह पट्टी शरीरकी गर्मी एवं पीड़ित यंत्रके फैलावके अनुसार २ से ८ तहकी और ६ से १२ वर्ग इञ्च तक हो सकती है। शरीरकी गर्मी जितनी ही ज्यादा हो इस पट्टीको उतनी ही अधिक बार लपेटना चाहिये। फुसफुस, लिवर, प्लीहा, पाकस्थली, मूत्राशय, अन्त्रपुच्छ (appendix) अथवा

औरतोंके गर्भाशयके रोगों आदिमें इस प्रकारके आक्रान्त अंगोंके ऊपर बड़ी लपेटके नीचे एक और दूसरी पट्टी देनी आवश्यक है।

कितने ही रोगोंकी खास खास हालतोंमें इस लपेटका इस्तेमाल कभी भी नहीं करना चाहिये। चेचक आदि निकलने वाले रोगोंमें दानोंके अच्छी तरह बाहर निकल जाने पर ही लपेटका व्यवहार किया जाना चाहिये। शरीर पर अत्यधिक फोड़े फुन्सियां हों, तो इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। हृदय रोगकी चरम अवस्थामें, अत्यधिक स्नायविक दुर्बलतामें, कृशताके साथ बहुमूत्र रोगमें एवं बहुत ही कमजोर रोगीको कभी भी बहुत समयके लिये गीली चादरकी लपेट (sweating wet-sheet pack) का व्यवहार कराना उचित नहीं है।

[३]

दुर्बल रोगीका स्नान

सबल और दुर्बल सभी रोगियोंके लिये स्नान बहुत जरूरी है। सबल रोगियोंके लिये जो पद्धति काममें लाई जाती है, वह कमजोर रोगियोंके लिये नहीं है। जो रोगी बिस्तरेपर पड़ गये हैं, जिनमें जीवनी-शक्ति कम है या जो पानी छूनेमें डरते हैं, उन्हें ठण्डे पानीके पूर्ण-स्नानका प्रयोग नहीं करना चाहिये। इन सभी रोगियोंको पूर्ण-स्नानके बदले हल्के 'स्पञ्ज-बाथ' (mild sponge bath) या तौलियेका स्नान (towel bath) का ही प्रयोग कराना चाहिये। कमजोर रोगी इन हल्के स्नानों से ही पूर्ण-स्नानोंका लाभ उठाते हैं।

रोगी अगर बहुत कमजोर हो तो बिछौने पर सुलाकर ही उसे हल्के तौलियेके स्नानका प्रयोग कराना चाहिये। एक मौमजामेके ऊपर

चादर बिछाकर उसके ऊपर रोगीको गले तक कम्बलसे ढकी हालतमें सुलाकर पहले उसके सिर, मुख और गर्दनको अच्छी तरह ठण्डे पानीसे धो डालना चाहिये। इसके बाद हर एक बार रोगीके शरीरका एक एक हिस्सा खोलकर, ठण्डे पानीसे गीली चादरसे ५ सेकण्ड तक पोंछकर, आखिरमें इतने ही समय तक उसे खाली हाथों मल देना जरूरी होता है। इसके बाद ५ से १० सेकेण्डतक सूखे तौलियेसे इस जगहको पोंछ कम्बलसे ढककर फिर शरीरके दूसरे हिस्सोंको भी इस प्रकार पोंछना चाहिये। पहले रोगीका एक हाथ, इसके बाद उसका दूसरा हाथ, आखिरमें एक-एक कर पेड़ू, छाती, पैर और जांघोंके पीछेकी ओरको पोंछना चाहिये। तौलियेके स्नानका प्रयोग करते समय रोगीके गुदा-द्वार और जननेन्द्रियके ऊपरी हिस्से जिस प्रकार अच्छी तरह पोंछे जाँय, ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये। इस प्रकार एक बार सारा शरीर पोंछ लेने पर, दूसरी बार भी इसी पद्धतिका अनुसरण किया जा सकता है। अगर रोगीके हाथ पैर ठण्डे हों, तो तौलियेको खूब अच्छी तरह निचोड़ लेना आवश्यक है।

कमजोर रोगीको ठण्डी मालिशका (cold friction) प्रयोग कराया जा सकता है। रोगीका सिर, मुख और गर्दन ठण्डे पानीसे धो लेने पर, उसे एक कम्बलसे गले तक ढक देना चाहिये। इसके बाद कम्बलके नीचेमें रोगीके शरीरका एक हिस्सा ठण्डे पानीमें गीले एक तौलियेसे ढक, तबतक इसके ऊपर मालिश करते रहना चाहिये, जबतककि यह तौलिया गरम न हो उठे। इसके बाद इसे हटाकर, इसी हिस्सेपर एक दूसरा सूखा तौलिया फैलाकर फिर उसपर तबतक मालिश करते रहना चाहिये जब तक कि इस जगहपर ललाई न आ जाय। इसके बाद इस जगहको कम्बल-से ढककर फिर शरीरके दूसरे हिस्से पर हाथ लगाना चाहिये। इस बातको अच्छी तरह याद रखें कि तौलियेसे शरीरको रगड़ना नहीं होता है, बल्कि रोगीके शरीरके ऊपर तौलियेको रखकर उसके ऊपर मालिश करनी होती है।

किन्तु रोगी अगर छोटा बच्चा या बहुत कमजोर हो, तो पहले उसका सिर धोकर तीमारदारको अपने दोनों हाथ पानीमें डुबोकर उनसे रोगीकी सारी छाती पर तीन चार बार जल्दी जल्दी मालिश कर देनी चाहिये। इसके बाद एक सूखे कपड़ेको उसकी छाती पर रख इस प्रकार रगड़ना चाहिये कि छाती गरम और लाल हो जाय। इसी प्रकार एक-एक कर शरीरके सभी अंगोंको पोंछ देना चाहिये। इसको गीले हाथोंकी मालिश (wet hand rubbing) कहते हैं।

जरूरत पड़नेपर इन सभी स्नानोंका एक ही साथ बार-बार प्रयोग किया जा सकता है। बुखार न रहने पर रोगीको इस प्रकार तीन बार दिनमें स्नान अवश्य करना चाहिये। किन्तु जोरके बुखारको कम करनेके लिये इन सभी हल्के स्नानोंको प्रायः बन्द न कर लम्बे समय तक जारी रखना चाहिये।

इन सभी स्नानोंमें भी धीरे-धीरे कम गरम पानीका व्यवहार करना चाहिये एवं धीरे-धीरे रोगीके स्नानका समय भी बढ़ाते जाना चाहिये। तौलिया-स्नानमें पहले रोगीको ठण्डे पानीसे (६५°) स्नान करा, पानी की गर्मी प्रत्येक दिन दो एक डिग्री कम करते हुए आखिरकार ठण्डे पानीमें (४०°) स्नान कराना जरूरी है। पहले तौलियेको खूब ज्यादा निचोड़ कर प्रायः शुष्क कर लेना उचित है। इसके बाद तौलियेको धीरे-धीरे खूब कम निचोड़ते जाना चाहिये एवं बादमें काफी पानीके साथ तौलियेका व्यवहार किया जा सकता है।

इन सभी स्नानोंके प्रयोग करते समय भी यह अच्छी तरह देख लेना जरूरी है कि स्नानके वक्त शरीर ठण्डा तो नहीं है। अगर शरीर इस समय गरम न रहे, तो रोगीकी रीढ़पर कुछ समय सेंक देकर शरीरको गरम कर लेनेके बाद रोगीको स्नान कराना चाहिये।

ये सभी स्नान कमजोर रोगीके लिये उपयुक्त होनेपर भी कई रोगोंमें ये विशेष लाभदायक होते हैं। बहुमूत्र रोग, स्वाभाविक ढङ्गसे शरीरका

कम गरम रहना (in subnormal temperature), सूतिका ज्वर, पुराना आंव, मलेरिया बुखार, अचेत नींद (coma), प्लेग, डेगूं बुखार, इन्फ्लुएञ्जा, कुष्टरोग, अत्यधिक कृशता, रिकेट (rickets), पुरानी सूत्र ग्रन्थिकी सूजन (chronic nephritis), हिस्टीरिया, रक्तका अभाव, यक्ष्मा आदि सब तरहके क्षय रोग, बुखारके बाद अच्छे हो जानेपर, अजीर्ण (बदहजमी), पुराना वात रोग, पाकस्थलीके घाव, हृत्पिण्डकी कमजोरी, न्यूरेथेनिया, गांठोंके वातमें एवं बुढ़ापे और बचपनमें ये सभी स्नान विशेषकर फायदेमन्द हैं।

[४]

सिजबाथ

रोगसे छुटकारा पानेके लिये शरीरको विजातीय पदार्थोंसे मुक्त करना जिस प्रकार आवश्यक है, शरीरकी जीवन शक्तिको भी उसी प्रकार बढ़ाना प्रयोजनीय है। इसी लिये कमजोर रोगियोंके लिये सिज-बाथ अत्यन्त उपकारी है। क्योंकि इससे जीवनी-शक्ति अत्यन्त उद्दीप्त होती है एवं जीवनी-शक्तिके सबल होनेसे शरीरमें रोगका रहना असम्भव हो जाता है।

एक प्रकारसे सिज-बाथका अर्थ है लिङ्ग-स्नान। एक निर्जन घरमें एक बर्त्तनमें सेर दो सेर पानी लेकर उसमें एक कपड़ा भिंगोकर इसके पानीसे लगातार लिङ्ग-मुण्डके चमड़ेको मामूली तौरसे रगड़ रगड़ कर धो डालना होता है। पानी जितना ही ठण्डा हो उतना ही अच्छा है। किन्तु यह इतना ठण्डा नहीं होना चाहिये कि वह हाथसे छुआ तक न जाय। बरफका प्रयोग सिज-बाथमें भूलकर भी नहीं करना चाहिये। सिज-बाथमें पानी इस प्रकार लिङ्ग-मुण्ड पर देना होता है कि जिससे वह

लिङ्ग-मुण्डके मांसको छूने न पावे। लिङ्गके बाहरी चमड़ेको खींचकर बायें हाथकी दो अंगुलियोंसे इस प्रकार पकड़े रहना होता है कि जिससे लिङ्ग-मुण्डका मांस भीतरमें रहे एवं ऊपरका चमड़ा दोनों अंगुलियोंके बीचमें हो। इसके बाहर चमड़ेके ऊपर ही कपड़ेकी सहायतासे पानी लेकर पानी सहित कपड़ेको लगातार ऊपर नीचे घुमाते हुए धोते रहना चाहिये। इस कामको इस प्रकार सावधानीके साथ करते रहना चाहिये कि जिससे किसी अवस्थामें कहीं भी जोरकी रगड़ न लगने पावे। कपड़ेको पानीमें डुबोकर एक बारमें जितना पानी आवे, उतने ही से एक बार धोना चाहिये। घरके भीतर जहांपर पानीके बाहर जानेकी सुराख हो, वहीं पर एक जल-चौकीके ऊपर पैर फैलाकर बैठ जानेसे अच्छी तरह सिज-बाथ लिया जा सकता है। इस पर भी पैर और शरीरका ऊपरी भाग सूखे रखे जा सकते हैं। किन्तु अगर शरीरका पिछला भाग (buttocks) पानीसे भींग जाय, तो कोई हर्जकी बात नहीं।

रोगी जो बिस्तरेसे नहीं उठ सकते हैं, उन्हें बिछौनेके भीतर ही एक बर्तन रखकर और एक दूसरे बर्तनसे पानी लेकर सिज-बाथ दिया जा सकता है। बिछौनेको भींगनेसे बचानेके लिये नीचेमें एक मोमजामा डाल देना चाहिये।

मामूली तौरसे १५ मिनटसे लेकर आध घण्टे तक सिजबाथ लेना ठीक होता है। बच्चोंके लिये १०।१५ मिनट काफी हैं। जरूरत पड़नेपर यह दिनमें तीन बार भी लिया जा सकता है।

मुसलमानोंके लिये सिज-बाथ लेनेकी विधि

सिज-बाथमें जिस चमड़ेके ऊपर पानीके प्रयोग करनेकी विधि है, मुसलमान लोग उस चमड़ेको काट फेंकते हैं। किन्तु ये लोग भी दूसरे तरीकेसे सिज-बाथ लेनेके समान ही फायदे उठा सकते हैं। जननेन्द्रियके

नीचेकी ओर जुड़े हुए मुखकी तरह जो चमड़ा है, मुसलमान लोग इसी चमड़ेके ऊपर मामूली सिज-बाथकी तरह कपड़ेमें पानी लेकर धीरे धीरे रगड़ें तो इसीसे सिज-बाथका काम निकल जायगा।

स्त्रियोंके लिये सिजबाथ

सिज-बाथसे सबसे अधिक फायदा स्त्रियोंको होता है ; प्रायः सभी स्त्री-रोगोंके लिये सिजबाथकी व्यवस्था करनी चाहिये।

स्त्रियां पानी लेकर केवल जननेन्द्रियके बाहरी हिस्सेके दोनों ओर धीरे-धीरे धोवें। पानी कभी भी भीतर न जाने दिया जाय। हमेशा इस बातका ध्यान रहना चाहिये कि कभी भी जोरकी रगड़ न दी जाय (Louis kuhne)।

सिजबाथसे लाभ

सिज-बाथकी उपादेयताके सम्बन्धमें लूई कुने कहते हैं, हमारे शरीरके और किसी भी स्थानमें इतने अधिक स्नायु शेष नहीं होते हैं। केवल लिङ्ग-मुण्ड पर पानीका प्रयोग करनेसे ही समस्त स्नायु ठण्डे किये जा सकते हैं। इसी स्थानको सारे जीवन-रूपी वृक्षकी जड़ कहा जा सकता है। इस स्थानको पानीके द्वारा धोनेसे केवल शरीरके अन्दरकी दूषित गर्मी ही नष्ट नहीं होती, बल्कि इससे सारी स्नायु-मण्डली संजीवित होती है। एक ही वाक्यमें यों कहिये कि इससे शरीरके अणुओंसे लेकर परमाणुओं तकमें जीवनी शक्ति उद्दीप्त हो उठती है (Louis Kuhne—The New Science of Healing, P. 113)।

दरअसल स्नायु हम लोगोंके शरीरके बादशाह हैं। स्नायु-मण्डलीको संजीवित कर लेनेसे ही उनके द्वारा सारा शरीर संजीवित हो जाता है। हमलोगोंके सारे स्नायु मुख्यतया तीन हिस्सोंमें बंटे हुए हैं—सिर, मेरु रज्जु और स्नायु-तन्तु। सिर और मेरु-रज्जुसे अगनित स्नायु-तन्तु बाहर

होकर शरीरकी विभिन्न जगहोंको चले गये हैं। शरीरके अन्दर कोई भी ऐसी जगह नहीं है, जहां स्नायु-तन्तु न हों।

ये स्नायु दो प्रकारके होते हैं। एक प्रकारके स्नायु सब तरहकी अनुभूतियोंको मस्तिष्कके पास ले जाते हैं। उन्हें संज्ञावाही (sensory nerves) कहते हैं। दूसरे प्रकारके तन्तु मस्तिष्ककी आज्ञाको ले जाया करते हैं। इन्हें चेष्टा-वाही (motor nerves) कहते हैं।

इन स्नायुओंका काम बहुत कुछ टेलिग्राफके तारोंके समान है। कहीं भी शरीर पर चोट आ जानेसे संज्ञावाही स्नायु मस्तिष्कको तार करते हैं, तो हम दर्द मालूम करते हैं। मस्तिष्क भी उसी समय चेष्टावाही स्नायुओंके भीतरसे हुक्म भेजता है। तब हम मस्तिष्कके हुक्मके मुताबिक ही शरीरके हिस्सेको हटा लेते हैं, या हमला करते हैं। हम लोगोंके स्नायु इस प्रकार प्रत्यक्ष या परोक्ष भावसे हमारे शरीरके सभी यन्त्रोंको चलाते रहते हैं। स्नायुओंके कारण ही हमारे शरीरकी पाकस्थली हजम कर सकती है, आँतोंसे मल बाहर निकल आता है, मूत्र-ग्रन्थि, फुसफुस, हृदय, एवं शरीरका हर एक पुर्जा अपने अपने कामको पूरा करता है। हमलोगोंकी चिन्ता यहां तक कि स्मरणशक्तिका काम भी स्नायु-मण्डल के ही कामका एक हिस्सा है। इसलिये सिज-बाथसे स्नायु-मण्डलीको शीतल करनेसे, उसकी प्रतिक्रियासे शरीरके सभी स्नायु इस प्रकार उद्दीप्त हो उठते हैं कि शरीरमें किसी भी प्रकारके रोगका रहना मुश्किल हो जाता है।

उन सभी रोगियोंको जिनकी कि उत्थान शक्ति गायब हो गई है, सिजबाथ सबसे ज्यादा फायदा पहुंचाता। ऐसे सभी रोगियोंको दिनमें तीन बार सिज-बाथ देना जरूरी है।

जिन्हें नींद न आती हो, दिनमें वे हिप-बाथ लेकर सोनेके पहले सिजबाथ लें एवं बरामदेमें तेज चालसे घूमें, तो रात्रिमें जागनेके कारण उत्पन्न हुई यन्त्रणाओंसे छुटकारा पा जायेंगे।

किसी भी प्रकारकी मेहनतके बाद शरीर खूब गरम हो गया हो तो सिज-बाथ जादू मन्त्रकी तरह सारे शरीरको ठण्डा कर देता है। आध घण्टा सिज-बाथ लेनेसे दारुण श्वास कष्ट भी धीमा पड़ जाता है। न्यूमोनिया, डिप्थिरिया, कैंसर आदि रोगोंमें दारुण श्वास-कष्ट बहुत ही कम समयमें बन्द हो जाता है। २० मिनटके सिज-बाथके बाद तो बहुधा रोगीको अपने ही आप नींद आ जाती है।

एक दिन एक बुड्ढे रोगीकी खटियाके पास जाकर देखा कि धोंकनी-से हवा देते वक्त जैसी आवाज होती है, उसकी नाकके भीतर सांससे भी वैसी ही आवाज आ रही है। उसी वक्त मैंने उसके लिये सिज-बाथका बन्दोवस्त किया। ये सज्जन बड़ी ही तकलीफ पा रहे थे। उसी समय उन्होंने सिज-बाथ लेना शुरू किया। पन्द्रह मिनट बाद मैंने उनके घरमें फिर जाकर देखा, तो श्वास अपने स्वाभाविक रूपमें आ गया था।

रोगी अगर हिप-बाथ लेनेमें समर्थ हो, तो उसे अलग तरीकेसे सिजबाथ न देनेसे भी काम चल जाता है। क्योंकि हिप-बाथमें सिज-बाथ के सभी गुण मौजूद हैं। यही कारण है कि आजकल सिज-बाथ एक तरहसे उठ गया है एवं संसारके विभिन्न देशोंमें सिज-बाथ कहनेसे लोग हिप-बाथ ही समझते हैं। हिप-बाथमें मेरुदण्डको डुबोकर रख लेनेसे सिज-बाथसे जो-जो फायदे होते हैं, वे सभी उसमें मौजूद रहते हैं। किन्तु रोगीमें अगर हिप-बाथ लेनेकी समर्थ न हो तो उसे जरूर ही सिज-बाथ देना चाहिये।

—००—

नवम अध्याय
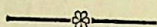
रोग-चिकित्सामें पानीके दूसरे उपयोग

[१]

मनुष्य मात्रके ज्यादातर रोग स्टीम-बाथ और हिप-बाथ आदिसे सारे शरीरकी साधारण चिकित्सा (general treatment) द्वारा आराम हो जाते हैं। किन्तु हर एक समय सारे शरीरका इलाज जरूरी नहीं होता। बहुतेरे मौकोंपर सिर्फ खास अस्वस्थ अंगके इलाज द्वारा हो रोगी चंगा हो जाता है और अनेक मौकोंपर सारे शरीरके इलाज कर लेने पर भी विभिन्न प्रकारसे आक्रान्त अलग अलग अंगोंके लिये विभिन्न प्रकारकी चिकित्सा जरूरी होती है।

शीतल पट्टी (COLD COMPRESS)

जल-किचिकित्सामें शीतल पट्टीका व्यवहार खूब ज्यादा होता है। भींगे कपड़ेको खुला रखकर गरम होनेके पहले ही बदल देनेको शीतल पट्टी कहते हैं। जरूरतके मुताबिक दो से पांच मिनटके बीच-बीच में इसको बदलते रहनेसे काम चल जाता है। हमेशा खूब बड़ी शीतल-पट्टीका ही व्यवहार करना चाहिये। शरीरके जिस हिस्सेके ऊपर इस क्रियाको करनेके लिये पट्टीका प्रयोग करना हो, उस हिस्सेके पीड़ायुक्त स्थानको चारों तरफ बहुत दूर तक पट्टी द्वारा ढक देना जरूरी है। अगर शरीरके

जिस किसी भी भागमें शीतल-पट्टीकी जरूरत हो और वह पानीमें डुबोया जा सकता है, तो उस हिस्सेको पानीमें डुबो रखनेसे भी शीतल-पट्टीका काम निकल सकता है।

अलग अलग रोगोंमें शरीरके अलग अलग स्थानोंपर इस पट्टीका व्यवहार किया जा सकता है। स्नायु और धमनी आदि द्वारा बाहरके चमड़ेके साथ हमारे भीतरी यंत्रोंका संयोग रहता है। इसीलिये अलग अलग यंत्रोंके रोगोंमें इस यंत्रके ऊपरके चमड़े पर शीतल-पट्टीका प्रयोग कर इसका असर (reflex effect) बढ़ाया जा सकता है।

जोरके बुखारके समय, रोगीके मुख, सिर और शरीरपर बहुत समय तक शीतल-पट्टीका प्रयोग करनेसे बुखार जल्द कम हो जाता है, सिर दर्द और खूनकी अधिकता कम हो जाती है एवं आसानीसे रोगीको नींद आ जाती है। बुखारकी हालतमें रोगीका सिर और सारा शरीर इस पट्टीसे ढका रहना जरूरी है।

बुखारके रोगीके निम्न-पेट (पेड़ू) में आध घण्टेसे लेकर एक घण्टे तक शीतल-पट्टीका प्रयोग करनेसे दो डिग्री तक बुखारको कम कराया जा सकता है। बुखारकी हालतमें दिनमें तीन चार बार इस पट्टीका प्रयोग करना जरूरी है। बुखार कम करनेके लिये शीतल पट्टीके व्यवहार करनेके समान और कोई चीज नहीं है। बुखारके शुरूसे लेकर आखिर तक इसको जारी रखना चाहिये।

जोरके बुखारमें मेरुदण्डके ऊपर शीतल पट्टीका प्रयोग करनेसे भी बुखार बहुत कम हो जाता है।

उदरामयमें (diarrhoea) जिस समय पेट गरम रहता है, उस समय पेड़ूमें गीले गमछेकी तह करके शीतल पट्टीका प्रयोग करनेसे परिमित दस्तोंके बाद दस्त अपने ही आप बन्द हो जाते हैं। किन्तु लम्बे समय के लिये इस पट्टीका व्यवहार करना हो तो हर एक तीन घण्टेके बीच-

बीच में पेड़ू के ऊपर थोड़े समयके लिये गरम सेंक देनेके बाद फिर शीतल पट्टीका व्यवहार करना आवश्यक है।

मुख एवं ऊर्ध्व मेरुदण्डके ऊपर एक साथ ही शीतल पट्टीका प्रयोग करनेसे नाककी श्लेष्मिक झिल्लियां संकुचित हो जाती है एवं इससे नाकसे खूनका गिरना बन्द हो जाता है।

मुख और गर्दनके ऊपर लम्बे समय तक शीतल पट्टीका प्रयोग करनेसे मस्तिष्ककी धमनियां (vessels) संकुचित होती हैं एवं इसके फलस्वरूप उसके रक्तकी अधिकता नष्ट हो जाती है।

हृदयकी धड़कनमें (palpitation of the heart) हृत्पिण्डके ऊपर दिनमें दो बार आध घण्टेके लिये शीतल पट्टी रखनेसे बहुत ही फायदा पहुंचता है। पहले ५ मिनटके लिये पट्टीको रख कर फिर धीरे-धीरे समय बढ़ाते आना चाहिये। पट्टी निकाल लेनेके बाद इस स्थानको मल कर लाल और गरम कर देना जरूरी होता है। या गरम पानीमें भिगोये हुए कपड़ेसे इस स्थानको पोंछ कर गरम कर दिया जा सकता है।

शरीरकी सब प्रकारकी भीतरी और बाहरी सूजनोंमें (inflamation) शीतल पट्टी जादूका काम करती है। सूजनकी पहली हालतमें लम्बे समय तक शीतल पट्टीका प्रयोग करके दो तीन घण्टेके बाद बीच-बीचमें ६ से १० मिनटके लिये गरम सेंक देनी जरूरी होती है। सूजनकी गति एवं जीवाणुओंकी बाढ़को रोकनेके लिये शीतल पट्टीके समान और कोई दूसरी चीज नहीं है।

आगसे जल जानेसे उत्पन्न सभी दुख और दर्द शीतल पट्टीसे आश्चर्यजनक रूपमें दब जाते हैं। कुछ लोगोंका ख्याल है कि आगसे जली हुई जगहपर पानी देनेसे फफोले पड़ जाते हैं। किन्तु फफोले तभी पड़ते हैं, जब उसपर थोड़े समयतक पानी दिया जाता है।

आगसे किसी भी स्थानके जल जानेपर तुरन्त ही उस स्थानको पानीमें डुबो देना चाहिये। पानीमें डुबोते ही दर्द आधेसे भी कम हो जाता है एवं धीरे-धीरे और भी कम होते आता है। जब दर्द बिलकुल जता रहे, तब पानीमें से जले हुए स्थानको बाहर निकाल लेना चाहिये और उसके ऊपर घनी जल पट्टी या खूब ज्यादा ठण्डी कादो मिट्टी थपथपा दें। इससे बारह घण्टेके भीतर ही फफोले या घाव दूर हो जायेंगे एवं घाव आदिका कोई भी चिन्ह नहीं रह जायगा। एक समय छपरामें पूड़ी बनाते समय मेरी छोटी बहन श्रीमती सावित्री देवीके हाथ पर कड़ाई उलट जानेसे खौलता हुआ घी गिर पड़ा। उन्होंने उसी समय हाथ पानीसे भरी हुई बाल्टीमें डुबो दिया एवं करीब एक घण्टे तक उसे इसी प्रकार रखा, इसके बाद जब उन्होंने हाथ बाहर निकाला तो देखा गया कि उसमें फफोले आदिका नामोनिशान भी न था।

अगर शरीरका कोई ऐसा हिस्सा जल जाय कि उसे पानीमें नहीं डुबोया जा सकता हो, तो उस जगह पर आध इञ्च गहरी ठण्डी कादो मिट्टीका लेप कर देनेसे पानीमें डुबोये रखनेका जैसा काम होता है। मिट्टी जब कभी भी गरम हो उठे उसे तुरत बदल देना जरूरी है।

अगर कपड़ोंपर आग लग जानेसे सारा शरीर झुलस जाय, तो उसी समय बिना किसी देरीके रोगीको हौजमें गले पानी तक डुबोकर रखना चाहिये। देहाती लोग ऐसी हालतमें नदी या पोखरेमें उतर सकते हैं। जरूरतके मुताबिक एक दिन या इससे भी ज्यादा समयतक रोगी पानीके अन्दर रखा जा सकता है। इससे न्यूमोनिया आदि होनेका भय नहीं रहता है और आगके फफोलोंके कारण रोगीकी मृत्यु हो जानी असम्भव हो जाती है। उस समय यह खास तौरसे देखते रहना चाहिये कि रोगीके दोनों कंधे पानीके अन्दर रहें। एक बार मेरे छोटे भाई साहबको वाध्य होकर ढाकाके मिटफोर्ड अस्पतालमें रहना पड़ा। इसी बीच वहां उसी समयका जला हुआ एक रोगी लाया गया, उसका

सारा शरीर आगसे झुलस कर काला पड़ गया था एवं कहीं कहीं पर बड़े बड़े फफोले पड़ कर ऊपरको उभड़ आये थे। अस्पतालके डाक्टर साहबने उसे तुरन्त ही गले गले पानीमें डुबोकर नदीके अन्दर रख दिया। वह २४ घण्टेतक इसी हालतमें रहा। एक दिन बाद उसे पानीसे निकाला गया। इस समय देखनेसे मालूम हुआ कि उसके शरीरपर एक भी फफोला न था, कहीं कोई घाव भी न था और न किसी प्रकारका दर्द ही था।

आजकल घाव आदिके इलाजमें संसारमें सब जगह जल पट्टीका ही व्यवहार हो रहा है। घावके ऊपर बैण्डेज, प्लास्टर और मलहम आदि रखकर उस जगहको अब प्रायः और गहरा नहीं किया जाता है। आजकल अस्त्रके आघातको सुखानेके लिये यूरोपमें केवल शीतल जल-पट्टीका ही व्यवहार किया जाता है। इससे बड़े से बड़े अस्त्राघात थोड़े ही समयमें अच्छे हो जाते हैं।

चोट लगी हुई जगहसे जब बहुत खून निकल रहा हो, तब एक बड़े पानीके बर्तनमें उसे डुबो दें। दर्द और खून निकलना बन्द हो जाय, तो वहां पर एक मोटी पट्टी बांध दें। अगर चोट आई हुई जगहको पानीमें डुबोनेकी सुविधा न हो तो कई कपड़ोंको ठण्डे पानीमें भिगोकर वहां पर रख देनेसे भी काम चल सकता है। घाव जितना ही बड़ा हो गीला कपड़ा उतना ही बड़ा और मोटा होना चाहिये।

जल पट्टीके प्रयोगसे कुचली हुई जगहमें भी विशेष फायदा पहुंचता हैं।

यशोहर जिलेका नरेन्द्र विश्वास नामका एक लड़का कलकत्तेके किसी एक प्रेसमें काम करता था। एक दिन मशीन चलाते समय असावधानीके कारण मशीनसे उसकी अंगुलियां दब गईं। अंगुलियोंके दोनों नाखून उसी समय फट गये और उन जगहोंसे खून बाहर निकलने लगा। प्रेसके एक भले आदमीने उसे पकड़ कर एक कपड़ेको मिथिलेटेड स्पिरिटमें छोड़

उसकी अंगुलियोंमें बांध दिया। उन्होंने उसे कह दिया कि इस पर जरा भी पानी न लगने देना। किन्तु इससे उसका दर्द कम नहीं हुआ बल्कि वह धीरे-धीरे और भी बढ़ने लगा। तब वह बुझे हुए दीपककी तरह उदास मुंह होकर मेरे पास आया। मैंने उसी वक्त उसके हाथकी पट्टी वगैरह खोलकर उसे पानीके एक बड़े बर्तनमें डुबो दिया। उसके हाथमें जो भयानक पीड़ा हो रही थी, ठण्डे पानीमें डुबोने मात्रसे ही वह आधी कम हो गई। तीन घण्टे तक इसी प्रकार उसने हाथको पानीमें डुबोये रखा। तब दर्द बिलकुल भी न रह गया। अब मैंने उसके हाथ पर एक गीला कपड़ा लपेट दिया और कह दिया कि इसे बार-बार पानी-से गीला करते रहना। दो दिनों तक इस कपड़ेको बार-बार पानीसे गीला कर अंगुलियों पर लपेटा रखा गया। इन्हीं दो दिनोंके भीतर ही उसके हाथकी यह भयानक चोट अच्छी तरह आराम हो गई। अंगु-लियोंके नाखून जिनके उखड़ जानेकी संभावना थी, वे भी अपने स्वाभा-विक रूपमें आ गये।

ठण्डे पानीके प्रयोगसे चोट पटकके सभी दर्द निश्चय ही जाते रहते हैं। अगर जल-पट्टी देनेके बाद भी दर्द बना रहे तो समझना चाहिये कि पानी काफी ठण्डा नहीं है। ऐसे मौकोंपर ज्यादातर ठण्डा पानी देनेसे दर्द जरूर ही कम हो जाता है।

लेकिन शीतल-पट्टीसे काफी फायदा होनेपर भी, इसका लगातार बहुत समय तक कभी भी इस्तेमाल नहीं करना चाहिये। इससे खूनका दौरा रुक जाता है एवं यह जगह सुन्न पड़ जाती है। इस बातको हमेशा ध्यानमें रखना चाहिये कि खून ही सब रोगोंको दूर करता है। इसलिये किसी भी जगहपर शीतल पट्टीका प्रयोग करनेसे प्रत्येक ३० मिनटसे लेकर आधे घण्टेके बीच-बीचमें ३ से लेकर ६ मिनटके लिये उसे हटाकर सूखी फ्लालेन द्वारा इस जगहको रगड़ कर लाल और गरम कर देना चाहिये। इससे भी अच्छा तो यह है कि अगर उसे दो तीन मिनट तक सेंक दिया

जाय। घाव आदिमें हमेशा ही ऐसा करना जरूरी होता है। सेंक देनेके बाद फिर शीतल-पट्टीका प्रयोग करना चाहिये। पहली हालतमें शीतल पट्टीको खूब जल्दी जल्दी बदलते रहना जरूरी होता है। इसके बाद दर्द वगैरह कम होने लग जाय, तब २० से ३० मिनटके बाद पट्टी बदलते रहनेसे सबसे ज्यादा फायदा पहुंचता है।

[२]

गरम लपेट (HEATING COMPRESS)

जलपट्टी ठण्डी और गरम दोनों प्रकारकी ही प्रयोग की जाती है। जिस समय इसको खुली रख कर जल्दी-जल्दी बदलते रहते हैं, उस समय इसको शीतल पट्टी कहते हैं। और इसीको फ्लालेनसे लपेट कर बहुत समय तक प्रयोग किया जाता है, तो इसको गरम लपेट कहते हैं। यह बात नहीं है कि इसमें गरम पानी देकर इसका प्रयोग किया जाता है। शीतल पट्टीको कुछ समय तक फ्लालेनसे ढक कर रख देनेसे ही वह अपने आप गरम हो उठती है। इसी लिये इसको गरम लपेट कहते हैं।

गरम लपेट बहुत कुछ भींगी चादरकी लपेटके ही समान है। भींगी चादरकी लपेट सारे शरीरके लिये व्यवहृत होती है, और यह गले, छाती, पेड़ू आदि अलग अलग जगहोंपर और छोटी बना कर काममें लाई जाती है। स्थान-भेदके अनुसार ही यह लपेट छातीकी लपेट (chest pack), धड़की लपेट (trunk pack), अथवा गलेकी लपेट (throat pack) कही जाती है।

छातीकी लपेट (CHEST PACK)

एक भींगे कपड़ेको बगलसे पंजरकी हड्डी तक छाती और पीठसे घुमा लाकर उसके ऊपर एक बड़ा फ्लालेन या शाल घुमा कर बांध देनेसे ही छातीकी लपेटका प्रयोग किया जाता है।

साधारणतः पानी बूंद बूंदकर न गिरने पावे इसलिये कपड़ेको निचोड़ लेना जरूरी होता है। रोगीको बुखार रहनेसे कपड़ेके अन्दर कुछ ज्यादा पानी रखना चाहिये एवं पानीका ठण्डा होना भी जरूरी है। रोगी बुड्ढा, बालक या कमजोर हो अथवा अगर उसका चमड़ा ठण्डा हो तो इस कपड़े को खूब निचोड़ कर ही इसका इस्तेमाल करना चाहिये या गरम पानीमें डुबोकर इसका प्रयोग करना चाहिये। जहाँ तक हो सके बारीक कपड़ेका व्यवहार करना जरूरी है। ऐसे कपड़ेको २ से ६ बार तक घुमाकर लपेटा जा सकता है। चमड़ा जितना ही अधिक गरम हो लपेटको उतना ही मोटी कर देना चाहिये। मामूली हालतमें फ्लालेनकी दो तहों द्वारा भींगे कपड़ेको ढक देना चाहिये। रोगीका चमड़ा बहुत ठण्डा हो तो फ्लालेनकी तीन चार तहोंसे उसे ढक दिया जा सकता है। ऊपरकी फ्लालेनका प्रयोग इस प्रकार किया जाना जरूरी है कि जिससे कपड़ेके साथ हवाका कोई संयोग न हो सके एवं भीतरमें एक प्रकारकी गर्मीका संचार हो। किन्तु इसके लिये बहुत ज्यादा फ्लालेन देकर इस प्रकार ढक देना ठीक नहीं है कि जिससे रोगीको तकलीफ मालूम हो एवं रोगीका सारा शरीर गरम हो उठे या लपेटके नीचे खूनका दौरा ही बन्द हो जाय। फ्लालेनको लपेट कर उसे कपड़ेके साथ सेफटीपिनसे अटका देना चाहिये या डोरीसे उसे अच्छी तरह बाँध देना चाहिये। लपेट नीचेको सरक न आये इसलिये उसे धड़के दोनों ओर कपड़ेसे बांध देना अच्छा होता है।

छातीकी लपेट लेने पर जाड़ेके दिनोंमें गले तक सारा शरीर सुजनी, कम्बल आदिसे ढक लेना जरूरी होता है। गर्मीके दिनोंमें शरीर पर एक मामूली चादर रख लेनेसे भी काम निकल जाता है। लपेट हटा लेनेके बाद दूसरी सभी लपेटोंके समान ही उस जगहको जल्दी हाथ गीले तौलियेसे रगड़कर ठण्डा कर लेना चाहिये। इसके बाद फिर कपड़े पहन कर शरीरके तापकी लौटा लाना चाहिये।

इस लपेटका प्रयोग साधारणतः डेढ़ घण्टे तक करना काफी है। अगर कपड़ा पहले ही सूख जाय तो लपेटको इससे पहले खोल देना उचित है। लपेट जितने समय तक गीली रहती है, उतने ही समय तक उससे फायदा पहुंचता है।

अनेक मौकोंपर ऐसा होता है कि तबियत भीतर ही भीतर भारी हो जाती है। डाक्टर लोग भी इसके कारणका ठीक-ठीक निदान नहीं कर सकते हैं। ऐसी हालतमें इस प्रकारकी एक लपेटसे बहुधा इसमें बहुत आराम पहुंचता है।

छातीके दोषयुक्त रोगोंमें इससे आश्चर्यजनक फायदा पहुंचता है।

सर्दी और सर्दीके बुखारको तो यह लपेट जादूकी तरह दूर करती है। जोरके नासिका स्रावमें साथ ही साथ बुखार भी रहे, तो केवल एक बार इस तरहकी लपेट ले लेनेसे सर्दी और बुखार दोनों दूर हो जाते हैं। किन्तु रोगीको कब्जियत होनेपर पहले उसका पेट जरूर साफ कर लेना चाहिये।

इनफ्लुएञ्जा रोगको दूर करनेके लिये यह अचूक दवा है। बहुतसे इन्फ्लुएञ्जाके रोगियोंको केवल एक बार छातीकी लपेट देकर एक दिनमें ही मैंने उनका बुखार दूर किया है।

ब्रांकाइटिश, ब्रांकोन्यूमोनिया और न्यूमोनिया रोगोंके शुरू होनेके पहले इस लपेटका प्रयोग करनेसे बहुत सी हालतोंमें उनका हमला व्यर्थ हो जाता है। रोगके समय भी कुछ थोड़ी लपेटोंसे भी फायदा पहुंचता है। वेलेस्ली स्क्वायरके एक खानदानी मुसलमान सज्जनके एक छोटे लड़केको बड़े जोरका ब्रांकाइटिश हुआ। उन्होंने उसका ऐलोपैथिक इलाज न कराकर मुझे बुलाया। मैंने जाकर बच्चेको एक घण्टेके लिये छातीकी लपेट दी। इसके बाद दो दिन तक उन्होंने खुद ही उसे लपेट दी। बच्चा इससे आराम हो गया।

पुराने ब्रांकाइटिश एवं प्लूरिसीमें इस लपेटसे बहुत ही फायदा पहुंचता है। इन सभी रोगोंमें ५ से ८ मिनट तक छाती पर खूब गरम सेंक देकर ही उसके ऊपर लपेट देनी जरूरी होती है। रोगीको अगर बुखार न हो, तो इन रोगोंमें एक साथ ही दो तीन घण्टेके लिये अवश्य ही इस पट्टीका प्रयोग किया जाना चाहिये।
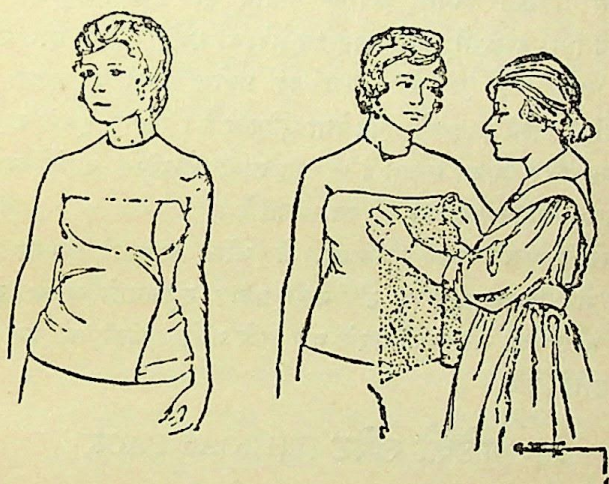
धड़की लपेट (Trunk pack)

[इस लपेटके कुछ छोटा हो जानेसे ही इसे छातीको लपेट कहते हैं]

क्षय रोगमें छातीकी लपेटके समान लाभदायक अन्य बहुत ही कम चीजें हैं। यह रोगीकी खांसी, बुखार और रातका पसीना कम कर देती है एवं शरीरमें सफेद कणोंको बढ़ा कर रोगको दूर करनेमें विशेष सहायता पहुंचती है। कलकत्तेके विभिन्न अंचलोंके बहुतसे मनुष्योंको, जिनमें से कई एकके कफमें खून निकलता, कई एकको हमेशा ही सर्दी रहती या कई एक सर्दीके साथ बुखारसे पीड़ित रहते, बीच-बीच में छातीकी लपेट देनेके फलस्वरूप उनके फुसफुस इस प्रकार मजबूत

हो गये कि उनके यक्ष्मा रोगसे आक्रान्त होनेकी सभी सम्भावनायें (predisposition) जाती रहीं।

छातीकी लपेट अगर तलपेट (पेड़ू) के नीचे तक फैला दी जाय, तो उसे धड़की लपेट (trunk pack) कहते हैं। जिन रोगियोंको भींगी चादरकी लपेट (wet-sheet pack) देनेमें किसी प्रकारकी असुविधा हो, उन्हें इस लपेटका प्रयोग करानेसे समान ही फायदा पहुंचता है। इसी लिये जिस हालतमें भींगी चादरकी लपेटका प्रयोग करना हो, उसी हालतमें धड़की लपेट (trunk pack) का प्रयोग किया जा सकता है। छोटे बच्चोंको गीली चादरकी लपेट देना मुश्किल है। किन्तु इसके बदलेमें उनको यह लपेट दी जा सकता है। यह छातीकी लपेटके बदलेमें समान रूपसे सफलतापूर्वक व्यवहार की जा सकती है।

शरीरके किसी यन्त्रमें सूजन हो, तो भींगी चादरकी लपेटका जिस प्रकार प्रयोग किया जाता है, ठीक उसी प्रकार सूजनवाले अंगके ऊपर लपेटके नीचे बड़ी और घनी करके एक दूसरे गीले कपड़ेकी तहें रख देनी जरूरी होती हैं।

गलेकी लपेट (THROAT PACK)

शरीरके तापके मुताबिक एक भींगे कपड़ेको दो से छः बार घुमा कर एवं उसके ऊपर फ्लालेन जड़ देनेसे गलेकी पट्टी दी जाती है। पूरी उम्र वालोंके लिये कपड़ेकी चौड़ाई ४ इञ्च होनी जरूरी है। गलेका घाव (pharyngitis), गलेकी सूजन, स्वरभंग, टौन्सिलकी सूजन, डिप्थिरिया एवं कुकुर-खांसी (whooping cough) आदिमें यह लपेट जादूका काम करती है।

एक बार स्वामी ज्ञानानन्द नामक एक संन्यासी महाशयके गलेमें दर्द हुआ एवं उनकी आवाज भी विकृत हो गई। उनके गलेका दर्द इतना बढ़ गया कि हाथसे गलेको छूने मात्रसे ही उन्हें तकलीफ होती थी

एवं उन्हें कुछ खिलाना भी कठिन हो गया था। मैंने उनके गलेके चारों तरफ एक लपेट बांध दी। शायद ठण्ड लग जानेकी वजहसे उनके गलेमें दर्द पैदा हुआ था। इसलिये जब ठण्डे पानीमें एक कपड़ेको डुबोकर मैं उसे उनके गलेके चारों तरफ लपेटने लगा, तो वे मन ही मन बहुत डरने लगे। अन्तमें जब इस पर फलालेन जड़ दी गई, तो उन्हें ढाढ़स बंधा। मैंने करीब डेढ़ घण्टे तक इस लपेटको रहने दिया। इस समयके बाद जब लपेट खोली गई, तो गलेमें दर्द न था, थूक निगलनेमें भी किसी प्रकारकी तकलीफ नहीं होती थी एवं गलेके भीतर भी किसी प्रकारकी जरा भी तकलीफ न थी।

ये सभी लपेटें ठण्डे पानीमें कपड़ा भिंगोकर दी जाती हैं। किन्तु पहली हालतमें कुछ मिनटों तक इनके ठण्डा रहने पर भी फ्लालेनसे ढकी रहनेके कारण दो एक मिनट बाद ही ये गरम हो उठने लगती हैं, तब ये गरम पैकमें बदल जाती हैं। इसीलिये इन्हें गरम लपेट (heating pack) कहते हैं। न्यूमोनिया आदि रोगोंमें बहुतसा रुपया पैसा खर्च कर ऐन्टीफ्लोजिस्टीनका व्यवहार करना होता है। एन्टीफ्लोजिस्टीन पहले कुछ ही समयतक गरम रहता है और इसके बाद यह ठण्डा हो जाता है। लेकिन इन सभी लपेटोंको जितनी देर तक गीला रखा जाय, ये उतनी ही देर तक गरम रहती हैं एवं गरम अवस्थामें ऐन्टीफ्लोजिस्टीनसे जो फायदे होते हैं, गीले रहने तक इनमें वे सभी फायदे मौजूद रहते हैं। इसके अतिरिक्त एन्टीफ्लोजिस्टीनमें जो दोष रहते हैं, इनमें वे जरा भी नहीं रहते हैं।

पैक देनेके बाद भीतरमें ताप संचित होने मात्रसे ही भीतरका रुका हुआ खून चमड़ेमें दौरा करने लगता है, रोम-कूप खुल जाते हैं, एवं फैले हुए रोम-कूपोंके भीतरसे होकर आक्रान्त अङ्गका विष बाहर निकल आता है। इस लिये कितने रोगोंमें इन सभी लपेटोंसे आराम पहुंचता है, यह बताना एक प्रकारसे मुश्किल है। आंशिक स्टीम-बाथ से जो काम

होते हैं, इन गरम लपेटोंसे कहीं आसान तरीकेसे वे सभी काम पूरे हो जाते हैं। आंशिक स्टीम-बाथ की (local steam bath) तरह इनका भी शरीरके जिस किसी हिस्सेमें प्रयोग किया जा सकता है।

[३]

भींगी चादरकी ठण्डी लपेट

(THE COOLING WET-SHEET PACK)

भींगी चादरकी लपेट द्वारा शरीरको गरम कर जिस प्रकार शरीरकी गरमी बढ़ाई जा सकती है, उसी प्रकार इसके विशेष प्रयोगसे जोरके बुखारके समय इच्छानुसार शरीरकी गरमी भी कम कर दी जा सकती है। इसी लपेटको भींगी चादरकी ठण्डी लपेट (the cooling wet-sheet pack) कहते हैं। रोगीके शरीरकी गरमीके बहुत ज्यादा बढ़ जानेपर एक कम्बलके ऊपर एक भींगी चादर बिछाकर उसके द्वारा रोगीके गले तक सारा शरीर ढक देना होता है। इस चादरको बहुत ज्यादा पानीसे गीला रखना जरूरी होता है। जरूरत पड़ने पर दो चादरोंका भी प्रयोग किया जा सकता है। इसके बाद केवल मात्र एक कम्बलके द्वारा रोगीको ढक कर कम्बलके ऊपरसे रोगीके सारे शरीरपर हल्की तौरसे मालिश कर देनी चाहिये। कुछ ही समयके बाद चादर गरम हो उठेगी। उस समय कम्बलको थोड़ी देरके लिये हटा कर चादर और शरीर पर ठण्डा पानी छिड़क कर, शरीर और चादरको ठण्डा कर फिर उसी समय रोगीको कम्बलसे ढक देना चाहिये। रोगीका बुखार जितना ही अधिक हो उतनी ही अधिक बार ऐसा करना चाहिये। एक ही साथ तीनसे लेकर पांच बार तक इसका प्रयोग किया जा सकता है। पहली बार रोगीको इस लपेटमें पांच छः मिनटके लिये रखकर दूसरी बार उसे पांच मिनट अधिक समयके लिये

रखना चाहिये। इसी प्रकार पहली लपेटके बादकी लपेट धीरे-धीरे पांच मिनट अधिक समयतक जारी रखकर, आखिरी लपेटको आधे घण्टेके लिये जारी रखना चाहिये। पहली बार लपेटमें ठण्डे पानीका (६०° से ६५°) प्रयोग करनेसे रोगीकी जितनी गरमी कम हो जाय, बादमें उतने ही कम ठण्डे पानीका व्यवहार करना जरूरी होता है।

इसके द्वारा रोगीके शरीरकी गर्मी इच्छानुसार जितनी डिग्री कम करनेकी इच्छा हो, उतनी डिग्री कम की जा सकती है। किन्तु बुखारको कभी भी जबर्दस्ती नहीं रोकना चाहिये। अगर रोगीके शरीरकी गर्मी १०४° हो, तो वह १०२° तक कम की जा सकती है। १०२° होनेसे वह इसकी अपेक्षा और दो डिग्री कम की जा सकती है (Lindlahr, M. D.—Practice of Natural Therapeutics, P. 52, 80, 84 and 148)।

ठण्डे पानीके स्नानसे जो फायदे होते हैं, भींगी चादरकी लपेटके (cooling wet-sheet pack) लेनेसे भी वे सभी फायदे हासिल किये जा सकते हैं। इसलिये रोगीको टबमें स्नान करानेके बदले हमेशा रोगीको इस लपेटका प्रयोग कराया जा सकता है। टाइफाइड, मलेरिया, डेंगू, इनफ्लुएन्जा और नये ब्रांकाइटिश आदि ज्वर, इरिसिप्लास और प्लेग आदिमें इसका विशेष रूपसे प्रयोग किया जा सकता है।

[४]

गरम-ठण्डी पट्टी

(THE ALTERNATE COMPRESS)

किसी अंगसे दूषित पदार्थको हटानेके लिये पर्याय-क्रमसे गरम और ठण्डे पानीके प्रयोगके समान और कोई चीज नहीं है। किसी

अंगमें जब गरम सेंकका प्रयोग करना होता है, तब उस अंगमें खून लाने और ले जानेवाली सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म नालियां फैल जाती हैं, क्योंकि गर्मी फैलाती है। इस रास्तेमें तब खून दौरा करने लगता है। खून जब आने लगता है तभी यह शरीरके गठनका नया मसाला और जीवाणुओंके साथ युद्ध करनेके लिये सफेद कणोंको ले आता है। फिर उस समय इस अंगमें ठण्ढे पानीके प्रयोगसे रोगीकी खून लाने तथा ले जानेवाली नालियां संकुचित हो जाती हैं और खून दौड़ने लगता है। दौरानके समय खून आक्रान्त अंगके दूषित और विषाक्त पदार्थको लेकर चला जाता है एवं शरीरकी अलग-अलग मोरियोंसे उसे बाहर कर देता है। इसी भावसे अंगको एक बार गरम और एक बार ठण्डा करनेसे उस अंगमें एक पम्पका काम होता है। इसी लिये दूषित अंग थोड़े ही समयमें निर्दोष हो जाता है।

जब किसी आक्रान्त अंगमें पर्याय-क्रमसे गरम सेंक और शीतल पट्टी का प्रयोग करना होता है, उस समय इसको गरम-ठण्डी पट्टी (एकान्तर पट्टी) कहते हैं। गरम और शीतल पट्टीके भीतर गर्मीसें काफी पार्थक्य होना प्रयोजनीय है। पानी जितना ही गरम और ठण्डा होता है, प्रयोगमें उतना ही फायदा पहुंचाता है। यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये कि, बहुत गरमके बाद बहुत ठण्डेका प्रयोग करनेसे उस जगहपर कोई भी जीवाणु जीवित नहीं रह सकते हैं। लेकिन पानी इतना गरम नहीं होना चाहिये कि, उससे शरीर ही जल जाय। गरम पानीके प्रयोग करनेके बाद तुरन्त ही ठण्ढे पानीका प्रयोग करना चाहिये। ऐसा करनेसे ही फायदा होना सम्भव है।

मामूली तौरसे ५ मिनटके लिये गरम सेंक देनेपर उसके खतम होनेके पहले ही ५ मिनटके लिये शीतल पट्टीका प्रयोग करना होता है। खास-खास हालतोंमें थोड़े समयके लिये भी गरम और ठण्डेका प्रयोग किया जा सकता है। किन्तु गरम और ठण्डेका प्रयोग प्रायः बराबर

समयके लिये ही किया जाना चाहिये। यदि ऐसा न किया जाय, तो गरमका प्रयोग ठण्डेकी अपेक्षा ज्यादा समयके लिये किया जाना जरूरी है। हमेशा गरमीके साथ गरम-ठण्डी पट्टी शुरू कर देनी चाहिये।

जिस समय शरीरका कोई हिस्सा पक जाय एवं ऐसी जगहपर पीव पैदा होनेकी जैसी हालत पैदा हो जाय, उस समय गरम-ठण्डी पट्टीके प्रयोगसे वेदना और प्रदाह दोनों नष्ट हो जाते हैं।

शय्याक्षतकी अवस्थामें गरम-ठण्डी पट्टीसे शय्याक्षत प्रायः हमेशाके लिये दूर हो जाते हैं।

शरीरके जो कोई अंग सुन्न हो गये हों, उन अंगोंमें इसका प्रयोग करनेसे काफी फायदा पहुंचता है।

छाती और पेड़ू के शोथ एवं पुरानी प्लूरिसीमें यह खास कर फायदे-मन्द होता है।

अफीम या किसी दूसरे विषके खा लेनेसे रोगीकी नाड़ियोंका स्पन्दन और श्वास प्रश्वासकी संख्या जब बहुत कम हो जाती है, तो उस समय मेरुदण्डके ऊपर गरम-ठण्डी पट्टीका प्रयोग करनेसे शीघ्र ही नाड़ियां स्वाभाविक हो जाती हैं। शराब पीने तथा विषाक्त गेसके कारण पैदा हुई वेहोशीमें यह विशेष लाभदायक होती है। पानीमें डूबे हुए रोगीको भी इसका प्रयोग करानेसे आशातीत लाभ होता है। ऐसी हालतमें साधारण तौरसे २० सेकेण्ड तक गरम जलमें भिंगोये हुए फ्लालेनसे मेरुदण्डको पोंछ कर फिर इसके बाद इतने ही समयके लिये ठण्डे पानीमें डुबोये हुए कपड़ेसे मेरुदण्डको पोंछ देना चाहिये। आवश्यकतानुसार दस पन्द्रह मिनटके लिये कई बार इसका प्रयोग किया जा सकता है।

कमजोर हृदयको मजबूत बनानेमें गरम-ठण्डी पट्टी जादूका काम करती है। एक बार पंचानन चक्रवर्त्ती नामके एक सज्जन चुनारसे मेरे पास इलाज करानेके लिये आये थे। कई प्रकारके रोगोंके अतिरिक्त उनका हृदय वहुत ही कमजोर था। प्रत्येक मिनटमें उनके हृदयका स्पन्दन

केवल पचास बार होता था। मैंने उनको भींगी चादरकी एक लपेट देकर उनके मेरुदण्डके ऊपर १५ मिनटके लिये दिनमें एक बार करके गरम-ठण्डी पट्टीकी व्यवस्था कर दी। सात दिन बाद ही देखा कि उनके हृदयकी धड़कन ७२ हो गई एवं उनका हृदय बहुत अच्छा हो गया है। इसी प्रकार इस पट्टीके द्वारा बहुतसे कमजोर रोगियोंका हृदय मैंने अच्छा किया है। स्वाभाविक रूपसे जल-चिकित्साकी विभिन्न पद्धतियों द्वारा हृदयके विभिन्न रोग इस तरह जल्दी और निर्दोष रूपसे अच्छे हो जाते हैं कि इनको दवासे इस प्रकार अच्छा करना बिलकुल असम्भव है। किन्तु हृद्रोगका इलाज बहुत होशियारीसे करना चाहिये।

समय-समयपर शरीरके विभिन्न स्थानोंपर पांचसे दस मिनटके लिये गरम सेंक देकर, फिर इसके बाद २० से ४० सेकेण्डके लिये शीतल पट्टी का प्रयोग करना होता है। इसको उत्ताप-बहुल गरम-ठण्डी पट्टी (revulsive compress) कहते हैं। जरूरत पड़नेपर इसका प्रयोग एकसे अधिक बार किया जा सकता है।

सब प्रकारके स्नायु-शूल एवं सब तरहकी वेदनामें उत्ताप-बहुल गरम-ठण्डी पट्टीका प्रयोग बहुत लाभदायक होता है। अगर वेदनाके साथ-साथ सूजन (inflamation) हो, तो उत्ताप-बहुल पट्टीका प्रयोग जरूर करना चाहिये।

तरुण साइटिका, पाकस्थली-प्रदाह (gastritis), स्नायु-प्रदाह एवं आंख और दांतके दर्दमें यह बहुत फायदेमन्द है।

जाड़ा और कंपकंपी रहनेपर बुखारवाले रोगीके मेरुदण्ड या तलपेटपर इस पट्टीका प्रयोग करनेसे जाड़ा और कंपकंपी नष्ट हो जाती हैं एवं बहुत मौकोंमें पसीना आकर बुखार रोगीको छोड़ देता है।

लिवरके ऊपर इस पट्टीका प्रयोग करनेसे पित्तका निकलना बढ़ जाता है। इसलिये कब्जियतमें यह विशेष फायदेमन्द होती है। इस पट्टीके

कारण लिबरर्क, विष आदि नष्ट हो जाते हैं और सब तरहकी काम करनेकी शक्ति बढ़ जाती है।

तलपेटमें (abdomen) इसका प्रयोग करनेसे आंतोंकी परिपाक और मल बाहर करनेकी क्षमता एवं क्लोम यन्त्र (pancreas) और प्लीहा की काम करनेकी ताकत काफी बढ़ जाती है। इसलिये शरीरको दोषमुक्त करनेके साथ-साथ हर एक पुराने रोगमें रोगीके लिवरके ऊपर और तलपेट पर कमसे कम ७ दिन उत्ताप-बहुल गरम-ठण्डी पट्टीका प्रयोग अवश्य करना चाहिये।

अनेक मौकोंपर तलपेटपर इस पट्टीका प्रयोग करनेके थोड़े ही समय बाद मलका जोर होता है एवं रोगीका पेट साफ हो जाता है।

आमाशयके लिये यह पट्टी बहुत ही लाभदायक है। तलपेटके ऊपर थोड़े समयके लिये उत्ताप बहुल पट्टीका प्रयोग करनेके बाद भींगी कमर पट्टी (wet girdle) का प्रयोग करनेसे अत्यन्त कठिन आमाशय भी आसानीसे आराम हो जाता है। बालीगंजके यतीशचन्द्र बन्दोपाध्याय महाशयके एक लड़केको 'वेसली डिसेन्ट्री' हो गई थी। मैंने उसके तलपेटमें दिनमें तीन बार उत्ताप बहुल गरम-ठण्डी पट्टी देकर इसके बाद बार-बार बदल-बदल कर भींगी कमर पट्टीका प्रयोग करनेके लिये कहा। इससे तीन दिनमें ही उसका मल स्वाभाविक ढंगपर आ गया और बुखार भी कम हो आया।

प्लीहाके बढ़ जानेपर भी गरम और ठण्डी पट्टीका प्रयोग करनेसे आश्चर्यजनक लाभ होता है। हाजरा रोडके जगन्नाथ विश्वास महाशय का प्लीहा बहुत बढ़ गया था। उन्हें हमेशा ही बुखार हो आया करता था। उनका यह बुखार और प्लीहा बहुत दिन तक इलाज करानेपर भी अच्छे नहीं हुए। इसके पहले उनके और भी छः भाई इसी रोगसे जवानी में ही एक एक करके जाते रहे। मैंने उनके प्लीहापर कुछ दिन तक गरम और ठण्डी पट्टियां दीं एवं स्नानके पहले पांच छः मिनटके लिये स्टीम-

बाथ देकर हिपबाथके बाद स्नान करनेके लिये कहा। बीच-बीच में उनको भींगी चादरको लपेट भी दी। पन्द्रह बीस दिनके भीतर ही उनका प्लीहा छोटा हो गया एवं महीने डेढ़ महीने बाद वे चंगे हो गये।

पेटके अन्दर जो फोड़ा (ट्यूमर) हो जाया करता है, ठण्डी और गरम पट्टियोंके प्रयोगसे वह आराम किया जा सकता है। मुर्शिदाबाद जिलेके भजहरि विश्वास नामक एक शिक्षक महाशय मलेरिया बुखारका इलाज करानेके लिये मेरे पास आये। उनके पेटके अन्दर एक बड़ा फोड़ा हो गया था। उनको बीच-बीचमें भींगी चादरकी लपेट, स्टीमबाथ और भींगी कमरपट्टी आदिके साथ पेटके ऊपर गरम और ठण्डी पट्टी देनेसे धीरे-धीरे डेढ़ महीनेके अन्दर उनका फोड़ा बिलकुल गायब हो गया एवं उनका बुखार और मलेरिया भी जाता रहा।

शरीरके विभिन्न स्थानोंमें गरम और ठण्डे पानीकी एकान्तर पट्टी के प्रयोग करनेसे जो फायदा होता है, शरीरके आक्रान्त अंगपर गरम और ठण्डे पानीकी धार देनेसे भी वही फायदा होता है। लिवर और प्लीहाके बढ़ जानेसे, शरीरके किसी जोड़के सख्त होनेपर, किसी मांस-पेशीके सुन्न (in mascular paralysis) हो जानेपर, खूनकी कमीके कारण किसी अंगपर सूजनके उठनेपर, वात रोगके कारण किसी अंगके सख्त होनेपर, पैरके पुराने घावमें, चमड़ेके मोटे होकर उसपर किसी चर्मरोगके पैदा होनेपर एवं पुराने बुखार आदिसे पैदा हुए शय्याक्षत में इसका प्रयोग करनेसे आश्चर्यजनक फायदा नजर आता है। मैंने एक पंजाबी सज्जनको देखा कि मलेरिया बुखारके कारण उनका प्लीहा और लिवर बहुत बढ़ गये थे। इसी प्रकार गरम और ठण्डे पानीकी धार दिनमें दो बार देनेसे ही उनका प्लीहा और यकृत स्वाभाविक आकारमें आ गये।

अगर सम्भव हो तो आक्रान्त अंगको बदल-बदल कर गरम और ठण्डे पानीके अन्दर डुबो कर रखनेसे भी ऐसा ही फायदा होता है।

मेरी अंगुलीपर भयानक दर्दके साथ एक फोड़ा सा हुआ। इस फोड़ेके कारण हाथकी हालत ऐसी हो गई कि ऐसा मालूम होने लगा मानो हाथका वजन एक सेर बढ़ गया हो। दर्द भी इतना बढ़ आया, कि यह मेरे लिये असह्य हो उठा। मैंने तब एक बर्तनमें गरम पानी ढाल कर हाथको उसमें तीन मिनट तक डुबो कर रखा। इसके बाद हाथको निकाल कर फिर एक ठण्डे पानीके बर्तनमें २० सेकण्ड तक रखा और इसके बाद बदल-बदल कर ठण्डे और गरम पानीमें रखते गया। १५ मिनट तक लगातार ऐसा ही करते रहनेपर मेरी अंगुलीका दर्द एकदम जाता रहा।

यह जो दर्द दूर हुआ, क्यों हुआ? गरम पानी पाकर एक बार खून आया और फिर ठण्डा पाकर प्रचुर दूषित पदार्थ लेकर लौट गया, यही दर्द कम होनेका कारण है।

एक अंगुलीके लिये जो बात सत्य है, सारे शरीरके लिये भी वह सत्य है। इसी लिये हिपबाथ या स्नानके पहले स्टीम-बाथ लेकर, धूपमें घूम कर, कसरत कर या मालिश कर खूनको चमड़े तक खींच कर ही स्नान (बाथ) करना होता है। इससे सारे शरीरमें एक प्रकारके पम्पका काम होता है एवं शरीरसे सारे विजातीय पदार्थ इससे बाहर हो जाते हैं।

[५]

बरफका व्यवहार

बहुत ज्यादा गर्मी जिस प्रकार त्याज्य है, उसी प्रकार अत्यधिक ठण्डेसे भी दूर ही रहना जरूरी है। फिर भी समय-समयपर जब ठण्डे पानीसे जल्दी फायदा नहीं होता है, तो वाध्य होकर बरफकी सहायता लेनी पड़ती है। किन्तु हमेशा ही पद्धतिके अनुसार विशेष सावधानीके

साथ बरफका प्रयोग करना जरूरी होता है। अगर सावधानीसे काम न लिया गया, तो फायदेके बदले नुकसान होनेकी सम्भावना रहती है।

नंगे चमड़ेपर कभी भी बरफ या बरफकी थैली (ice bag) का प्रयोग नहीं करना चाहिये। शरीरके किसी भी स्थानपर बरफ या बरफकी थैली (ice bag) का प्रयोग करनेके पहले हमेशा ही प्रयोगकी जगहपर एक जल पट्टी (cold compress) बिछा कर उसके ऊपर बरफ या बरफकी थैलीका प्रयोग करना होता है। अथवा फ्लालेनके एक टुकड़ेके ऊपर बरफकी थैली रखी जा सकती है। अगर बरफके पानीमें डुबो कर शीतल पट्टी देनी हो, तो खुले चमड़ेके ऊपर उसका प्रयोग किया जा सकता है। इससे 'आइस बैग' के ही समान फायदा पहुंचता है। ऐसी अवस्थामें कई एक मिनटोंके बाद पट्टीको बदल देना जरूरी होता है। अगर पट्टी बदलनेकी इच्छा न हो तो बीच-बीचकी तहोंमें बरफके टुकड़े रख देनेसे पट्टी बहुत समय तक ठण्डी रहती है। बरफ और बरफकी थैलीकी अपेक्षा बरफके पानीमें भींगी हुई पट्टी हमेशा ज्यादा फायदेमन्द होती है।

घावसे खूनका बहना बन्द करनेके लिये बरफके पानीकी शीतल पट्टी के समान बहुत कम चीजें हैं। जिस समय मामूली शीतल पट्टीसे खून का बहना बन्द न हो, तो उस समय बरफके पानीकी शीतल पट्टीका प्रयोग करनेसे वह तुरन्त ही बन्द हो जाता है। किन्तु शीतल पट्टीके ही समान इसका बड़ा होना जरूरी है। सन्नस रोगमें मस्तिष्कके भीतर जब कोई धमनी फट जाती है, तो उस समय सिरके ऊपर बरफकी थैलीका प्रयोग करनेसे अनेक मौकोंपर रोगीकी प्राण-रक्षा हो सकती है। पाकस्थलीसे खूनकी कै होनेपर छोटे-छोटे बरफके टुकड़ोंको निगलनेसे बहुत फायदा पहुंचता है। मूत्रयन्त्र (kidney) से खून निकलनेपर पीछेके हिस्सेमें कमरके ऊपर बरफकी पट्टीका प्रयोग जरूर करना चाहिये। आंतोंसे खून निकलनेपर तलपेटके ऊपर बरफकी थैली रखनेसे

विशेष लाभ होता है। जरायुसे बहुत ज्यादा खून निकलनेपर मूत्रद्वार और गुदा-द्वारके बीच भागमें (perineum) एवं जंघोंके भीतरी भागमें बरफके पानीसे भींगी शीतल पट्टीका प्रयोग करनेसे जरायु सिकुड़ जाती है एवं खूनका निकलना भी बन्द हो जाता है।

इससे सिरके खूनकी अधिकता आसानीसे दूर हो जाती है। तेज बुखारके समय रोगीके सिर, गर्दन और मुखके ऊपर बरफकी पट्टीका प्रयोग करनेसे रोगीको बहुत आराम मिलता है। उचित समयके लिये सिर पर बरफकी पट्टीका प्रयोग करनेसे पागल मनुष्यकी उत्तेजना भी कम हो जाती है। लेकिन हमेशा ही बड़ी सावधानीसे सिरपर बरफ देनी जरूरी होती है। सिरपर बहुत अधिक ठण्डका प्रयोग करनेसे सिरकी ओर खूनका दौरा बन्द हो जाता है एवं हृत्पिण्डके काममें रुकावट पैदा हो जाती है। इससे हृत्पिण्डकी पेशियाँ समय समय पर बहुत खराब हो जाया करती हैं।

मामूली सूजनके रोगमें इस पट्टीका इस्तेमाल करनेसे बहुत फायदा पहुंचता है। सिरकी सूजनमें बरफकी पट्टी वेहद फायदा पहुंचाती है। सूजन वाले घावमें भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। अर्श रोगमें गुदा-द्वारपर क्षत और सूजन होनेपर बरफकी पट्टी अत्यधिक लाभ पहुंचाती है।

हिष्टीरिया और अंग नृत्य-रोगमें (chorea) अंगोंकी मरोड़ जब किसी प्रकार कम नहीं होती है, तो मेरुदण्डपर बरफकी थैलीका प्रयोग करनेसे यह गायब हो जाती है।

पाकस्थली या उसकी ठीक विपरीत तरफ मेरुदण्डके ऊपरमें बरफकी थैली रखनेसे प्रायः ही कै वन्द हो जाया करती हैं। पाकस्थलीके कैंसरों के कारण जो असह्य पीड़ा होती है, वह भी इससे कम हो जाती है।

मेरुदण्डके ऊपर बरफकी थैली रखनेसे धनुषटङ्कार, समुद्र-यात्राकी

मिचली (sea sickness) एवं सिर और मेरुदंडकी झिल्लीकी सूजनमें (cerebro-spinal meningitis) विशेष फायदा पहुंचता है।

इरिसीप्लासको बढ़नेसे रोकनेके लिये बरफकी पट्टीके समान और कोई चीज नहीं है।

अहिफेन और दूसरे विषोंके खा लेनेके बाद जब रोगीके नाड़ियोंकी गति लोप हो जाती है एवं श्वास कष्ट पैदा हो जाता है, तो उस समय नाककी श्लेष्मिक झिल्ली एवं ठोठों पर बरफका प्रयोग करनेसे रोगीकी अवस्था अनेक समय स्वाभाविक हो जाती है; क्योंकि इन जगहोंपर ठण्डका प्रयोग करनेसे श्वास प्रश्वासका केन्द्र उत्तेजना पाता है।

स्नायु-शूलमें बरफ की थैलीका प्रयोग करनेसे बहुत मौकोंपर काफी फायदा पहुंचता है।

गाँव और देहात आदि स्थानोंमें जहां बरफ नहीं मिल सकती हो, वहां बरफके बदले खूब ठंडी कादा मिट्टी या खूब ठण्डे पानीमें भींगे एक कपड़ेको चमड़ेके ऊपर व्यवहारमें लाया जा सकता है।

[६]

कुल्ली

गलेके ऊपरकी किसी भी प्रकारकी पीड़ामें कुल्लीसे काफी फायदा पहुंचता है। कानकी पीड़ामें, दांतके दर्दमें, मुख या जीभके घावमें, सब तरहके सिर दर्दमें एवं सिर और माथेकी किसी भी प्रकारकी पीड़ामें ठण्डे पानीकी कुल्ली करनेसे काफी फायदा पहुंचता है। पानी जबतक गरम न हो जाय तबतक उसे मुंहमें रख कर कुल्ली करनी चाहिये। इसके बाद जब वह गरम हो जाय, तो उसे कुल्ली कर फेंक दें और फिर मुंहमें नया ठण्डा पानीले लेना चाहिये। हर एक समय मुंहके अन्दरही एकसे डेढ़ मिनट तक कुल्लियां करते रहना काफी है। किन्तु

जब तक दर्द बिलकुल कम न हो जाय तबतक मुंहमें कुल्ली करते रहना चाहिये। अगर मुंहके अन्दर घाव आदि हों, तो कुल्ली न कर ठण्डे पानीको मुंहमें कुछ समय तक रखनेके बाद फेंक देनेसे काम चल सकता है।

पहले हमेशा ही मेरे मुंहमें घाव हो जाया करते थे। मैं इनसे बहुत दुख पाता था। आखिर मुंहमें एकबार घाव होने पर मैंने मुंहमें पानी लेकर कुछ समय तक रखनेके बाद फेंक देने लगा। ऐसाही करनेपर मैंने देखा कि ठण्डा पानी मुंहमें लेते ही मुंहका दर्द जाता रहता है। मुंहमें घाव थे, इसलिये मैं कुछ कुल्ली नहीं कर सकता था। किन्तु दिनमें सात आठ बार तीन चार मिनट तक मुंहमें पानी रखनेसे घाव दूर हो गये। इसके बाद भी दो एक बार इसी तरह घाव हुए। वे भी इसी प्रकार दूर हो गये। सबसे अचरजकी बात तो यह है कि इस प्रकार दूर हो जानेपर इसके बाद फिर मुहमें घाव नहीं हुए।

और एक बार कुछ ही दिन पहले खाते खाते मेरे मुंहमें एक सख्त कंकड़से घाव हो गया। यह घाव इतना सख्त लगा कि इससे मेरे सामनेका एक दांत अलग हो गया। दांतमें भयानक दर्द होने लगा। मै तब ऊपरके दांतसे नीचेके दाँतको दबाकर उठ आया। किन्तु दर्द किसी भी प्रकार कम न हुआ। तब मैंने मुंहमें कुछ समय तक पानी लेकर फेंकना शुरू किया। इसी प्रकार ऊपरके दांतसे नीचेके दांतको दबाकर रखनेसे केवल दो दिनतक कई बार मुंहमें ठण्डा पानी लेकर छोड़ते रहनेसे दांत पहलेकी तरह सख्त हो गया और सारा दर्द तीन दिनके अन्दर ही गायब हो गया।

—oo—

दशम अध्याय
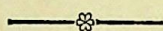
रोगोंमें मिट्टीका प्रयोग

[१]

बीमारियोंमें जिस प्रकार जलसे लाभ पहुंचता है, उसी प्रकार बहुधा मिट्टी और कादासे भी उतना ही फायदा होता है। किसी किसी समय तो जब जलपट्टीके द्वारा पूरा लाभ नहीं होता तो उस समय कादा मिट्टीका प्रयोग अधिक उपकारी सिद्ध हुआ है। रोगके समय जो उत्ताप शरीरमें बढ़ जाता है, तथा शरीरके विषको अपनेमें खींच लेनेकी मिट्टीमें बहुत अधिक क्षमता होती है। शायद इतनी ताकत और किसी भी पदार्थ में नहीं। इसीसे विभिन्न प्रकारसे मिट्टीका शरीरपर प्रयोग कर अनेक रोग दूर किये जा सकते हैं।

जमीनपर सोना

खाली जमीनपर सोनेसे शरीरका अधिकांश भाग मिट्टीके संसर्गमें आता है। इसीलिये कई बीमारियोंमें तो मिट्टी पर सोनेसे ही बड़ा लाभ होता है।

सूतकमें खासकर मां बापके मरने पर धरतीपर सोनेकी व्यवस्था हिन्दू शास्त्रोंमें है। क्रोध और शोकके समय हमलोगोंके शरीरमें एक प्रकारके विषकी सृष्टि होती है। पृथ्वीपर सोनेसे वह विष मिट्टी द्वारा

खींच लिया जाता है। शायद इसी कारण आर्य ऋषियोंने ऐसी व्यवस्था की हो।

जिसके शरीरमें अत्यन्त गर्मी हो, उसे प्रति दिन कुछ समय तक खाली जमीन पर लेटनेसे काफी लाभ होता है।

कितने आदमियोंको रातमें नींद नहीं आती। यदि बड़ी मेहनतके बाद कहीं नींद आ भी गई, तो अर्धतन्द्रा सी रहती है और तरह तरहके दुःस्वप्न दिखाई देते हैं। ऐसे आदमी यदि बहुत ही हल्का बिस्तर बिछा धरतीपर सोयें, तो थोड़े ही दिनोंमें उनका अनिद्रा रोग दूर हो जायगा।

बहुत लोगोंकी यह धारणा है कि, धरतीपर सोनेसे ठण्डक लगती है, पर यह भूल है। कुछ दिन जमीनपर सोनेसे फुसफुस काफी मजबूत हो जाता है और तब सर्दी या खांसी पास भी नहीं फटक सकती। जिनके गलेसे रक्त निकलता हो, नियमित रूपसे जमीनपर सोनेसे उनका यह रक्त गिरना बन्द हो जायगा। जिन्हें प्लूरिसि या यक्ष्मा आदि रोग हों, उन्हें जमीन पर सोनेसे आश्चर्यजनक लाभ हो सकता है।

अजीर्ण, आंव तथा बहुमूत्र रोगमें भूमि-शयन बहुत ही लाभप्रद होता है।

जिन लोगोंको हृदयका कोई भी रोग हो, यदि वे नियमित रूपसे जमीनपर सोयें, तो नाड़ीकी चंचलता कम हो जायगी और क्रमशः सांस धीरे-धीरे लम्बी होने लगेगी, जिससे रोग दूर हो जायगा। इसी कारण यदि सम्भव हो, तो सभीको जमीनपर सोना चाहिये। जमीनपर सोनेसे आदमी दीर्घायु होता है—इसमें तो सन्देह ही नहीं।

कितने ही बच्चे बहुत रोया करते हैं। यदि कुछ दिन उन्हें जमीनपर सुलाया जाय, तो आश्चर्यजनक रीतिसे आप देखेंगे कि वे शान्त स्वभावके हो जायंगे। किन्तु ६।७ महीने तक के बच्चेको भूल कर भी जमीनपर नहीं सुलाना चाहिये।

रातके भूमिशयनसे हाजमा शक्ति बहुत ही बढ़ जाती है। इससे जीवनी शक्तिकी भी वृद्धि होती है और प्रायः सभी प्रकारके रोग अपने आप दूर होते हैं (Adolph Just—Return to Nature, P. 88-102)।

किन्तु जमीनपर सोनेसे पहले अच्छी तरहसे इसकी परीक्षा कर लेनी आवश्यक है, मिट्टी नम या भिंगी नहीं होनी चाहिये। बिल्कुल सूखी टनटनी जमीनपर ही केवल सोना चाहिये। ऐसी कड़ी, सूखी और चिकनी मिट्टीपर बिना कुछ बिछाये भी सोया जा सकता है। यदि आप चाहें तो उसपर एक कम्बल बिछा सकते हैं।

जो व्यक्ति पहले पहल जमीनपर सोनेका अभ्यास करे, उसे पहले ही दिन काफी देर तक जमीनपर नहीं सोना चाहिये। पहले दिन ५।७ मिनट से अभ्यास कर क्रमशः बढ़ाते बढ़ाते जितनी देर तक इच्छा हो सोया जा सकता है। कुछ दिन मात्रके अभ्यासके बादसे ही आदमी सारी रात जमीनपर सो सकता है। जो आदमी कोई हल्का बिस्तर बिछाकर जमीनपर सोयेगा, वह तो पहले दिनसे ही सारी रात धरतीपर सो सकता है। धरतीपर सोना कहनेमें तो अत्यन्त साधारण गरीबीका बिछौना मालूम पड़ता है, किन्तु यह स्वच्छ कीमती गुलगुले पलंगसे हजारगुना अधिक लाभप्रद है।

[२]

नंगे पांव टहलनेसे लाभ

जिन लोगोंको जमीनपर सोनेकी सुबिधा प्राप्त न हो, वे नंगे पांव टहल कर धरतीपर सोनेके लाभको कुछ अंशमें प्राप्त कर सकते हैं। पैरमें गर्म मोजा पहननेसे जिस समय पैरमें गर्मी हो, उसी समय मोजा निकाल नंगे पैर जमीनपर टहलना होता है। टहलना समाप्त करनेके बाद भी

तुरत ही मोजा पहन कर फिर पैरोंको गर्म कर लेना आवश्यक होता है। साधारणतः ४५ मिनटसे लेकर १ घण्टेतक इस प्रकार टहलना काफी होता है। शुरू-शुरूमें और भी कम समय देनेसे काम चलेगा। क्रमशः जैसे-जैसे अभ्यास हो, समय बढ़ाया जा सकता है। पर टहलनेका लाभ सबसे अधिक तब होता है, जबकि घास ओसकी बूंदोंसे भींगी हो। जाड़ेके मौसमके बाद जबकि घासपर ओस नहीं हो, तो वर्षासे भींगी घासपर टहला जा सकता है।

इससे सिरदर्द, गलेकी पीड़ा, पुरानी सर्दी, पैर और सिरका ठण्डा रहना आदि रोग आसानीसे चंगे हो जाते हैं (Sebastian Kneipp—My Water-Cure, P. 20-21)।

एक प्रसिद्ध अध्यापकने मुझे एक दिन बतलाया कि, उन्हें लड़कपनसे ही सर्दी थी। यह रोग उनकी वंश परम्परासे चलो आ रहा था। दवादारूसे परेशान आकर उन्होंने नंगे पांव मैदानमें टहलना शुरू किया और यह दुसाध्य रोग सदाके लिये छूट गया।

नंगे पांव घूमना हमेशा लाभ पहुंचाता है, पर साफ-सुथरी जगहमें ही टहलनेसे लाभ होता है। जहां मलमूत्रादि हो, वहां हरगिज नंगे पैर नहीं टहलना चाहिये।

हमारे यहां प्रायः छोटे छोटे बच्चोंको हमेशा गोदीमें या बिस्तरेपर रखनेकी प्रथा सी चल पड़ी है। इससे बच्चेकी बड़ी खराबी होती है, यदि उन्हें साफ-सुथरी और सूखी जमीनपर खेलनेके लिये छोड़ दिया जाय, तो उन्हें अधिकांश वे रोग होंगे ही नहीं, जोकि प्रायः बच्चोंको होते रहते हैं। धूल-मिट्टी शरीरमें मलकर बच्चोंको खेलने देनेसे उनके मां बाप देखेंगे, कि बच्चेका स्वास्थ्य किस प्रकार आश्चर्यजनक रीतिसे सुधर रहा है। पर उस समय सदा इस बातका ध्यान रखना चाहिये जिससे कि वे जहां कहींकी मिट्टी लेकर मुंहमें न डालें

[३]

मिट्टीकी पुल्टिश

प्राकृतिक चिकित्सामें पुल्टिश या कम्प्रेसके रूपमें सबसे अधिक प्रयोग मिट्टीका होता है। लपेट (pack) आदिमें जो काम पानी करता है, मिट्टीका भी व्यवहार ठीक उसी प्रकार होता है। पर मिट्टी पानीकी अपेक्षा अधिक फायदा पहुंचाती है।

एडल्फ जूस्टने कहा है, " Many a local trouble will flee from an earth compress as if by magic—मिट्टी छापने से अनेकों स्थानके दर्द छूमन्त्रकी तरह गायब हो जाते हैं" (Return to nature, P. 123)।

विभिन्न अंगोंके दर्दमें विभिन्न स्थानोंपर मिट्टीकी पुलटिश बांध कर आरोग्यलाभ किया जाता है। इस प्रकारकी चिकित्साके लिये जिस मिट्टीका प्रयोग किया जाता है, वह जरा सावधानीसे इकट्ठी करनी चाहिये। मिट्टी उस स्थानसे लानी चाहिये जहां मलमूत्र आदि किसी प्रकारकी गंदगी न हो। मिट्टी निखालिस धुसरी या निखालिस चिकनी भी नहीं होनी चाहिये। मिट्टी सदा नयी होनी चाहिये। तीन भाग धुसरी और एक भाग चिकनी हो तो अच्छा है। यदि मिट्टी लाकर एक ही बार घरमें जमा की जाये, तो उसे धूपमें खूब सुखा लेना चाहिये। नहीं तो एक दिनकी लायी मिट्टी सात दिनसे अधिक काम नहीं आ सकती। पुलटिश बांधते समय मिट्टीको अच्छी तरह पीस छान कर मक्खनकी तरह कर लेनी चाहिये। मिट्टीको छान कर पहले एक भींगे कपड़े पर आधी इञ्चसे कुछ ज्यादा ऊंचा करके समतल कर लेना चाहिये। फिर धीरे-धीरे इस कपड़ेको एक हाथपर उठा लेना चाहिये और इसे रोगीके निर्दिष्ट स्थानपर उलट कर इस तरह रखना चाहिये कि शरीरके चमड़ेपर

मिट्टी पड़े और मिट्टीके ऊपर कपड़ा रहे। मिट्टीको पहले ही कपड़ेपर इस प्रकार सजाना चाहिये कि वह कपड़ेसे बाहर न निकलने पावे और शरीर पर मिट्टी रखनेपर मिट्टी सभी जगह समान भावसे आधी इञ्च ऊंची रहे। पानीकी पट्टी ही की तरह मिट्टीकी पुलटिश भी इच्छानुसार ठण्डी या गरम काममें लाई जा सकती है।

मिट्टीकी ठण्डी पुल्टिश

जब मिट्टीकी ठण्डी पुलटिश बांधकर बराबर इसे बदलते जाते हैं तो यह ठण्डे जलकी पट्टीका काम करती है। ठण्डी पट्टीकी तरह इसे खुला रखना होता है या जरूरत होनेपर एक भींगे कपड़ेसे इसे बांधा जा सकता है। जब ठण्डी पट्टीसे लाभ नहीं होता हो, तो मिट्टीकी पुल्टिशका प्रयोग करना चाहिये। किसी किसी समय पहले ही मिट्टीकी पुल्टिशका इस्तेमाल किया जा सकता है। यदि यह पट्टी काफी देरतक बांधनी हो, तो बीच-बीच में कुछ मिनटोंके लिये उस स्थानके सेंक लेना चाहिये।

आगसे जलते ही गीली मिट्टीकी पोल्टिश बांध देनेसे उस स्थानपर फफोला नहीं उठ सकता। यदि कभी फफोला पड़े, तो मिट्टीकी पुल्टिश बांधनेसे रात भरमें वह बैठ जाता है।

एक बार कालीघाटमें शान्ति घोषाल नामक एक युवकका ठाकुरजीके सामने आरती करते समय धुनीकी आगमें पैर पड़ गया। आरतीकी धुनमें पहले तो उसे जलनेके दर्दका उतना कुछ भान नहीं हुआ। आरती समाप्त होनेपर उसने देखा कि, उसके पैरमें कुछ जगह फफोले पड़ गये हैं। मैंने उसके पैरमें काफी गीली मिट्टी बांध दी। उसे उसी प्रकार बांधे वह सो गया। दूसरे दिन सबेरे देखा गया कि, उसके पैरमें फफोलोंके चिन्ह भी नहीं हैं।

आगसे जला हुआ स्थान पानीकी पट्टीसे प्रायः जल्दी अच्छा नहीं होता, पर वहां गीली मिट्टीकी पुल्टिश रामबाणका काम करती है।

दस्तकी बीमारी तथा हैजेमें यदि पेट गरम रहे, तो मिट्टीकी पुल्टिश जादूका काम करती है। हवड़ा जिलेमें वासन्ती कुमार चक्रवर्ती नामक एक आदमीको हैजा हो गया। उसे ५।६ बार कै तथा १०।१२ दस्त हुईं। अन्तमें दस्तके साथ खाली पानी आने लगा तथा हाथ-पैरमें ऐंठन आने लगी। रातके एक बजेसे लेकर सुबह तक उसकी यही अवस्था रही। जब हालत अत्यन्त खतरनाक हो गई, तो मुझे खबर मिली। मैंने जानेके साथ ही और कुछ न कर, पहले गीली मिट्टी लाकर उसके पेड़ूपर पुल्टिश बांध दी। पेट उस समय इतना गर्म था कि, बर्फके समान ठण्डी मिट्टी करीब २० मिनटमें आगके समान गरम हो गयी। मैंने बार बार मिट्टी बदलनी शुरू की। पहली बार मिट्टी देनेके बाद एक बार और दस्त आया, पर कै तो छू मन्त्रकी तरह उसी समय बन्द हो गयी। किन्तु इसके पहले ही हाथ पैरमें ऐंठन शुरू हो गई थी। इससे उसे भयानक कष्ट होता था। उसके हाथ पैर ऐंठ कर अकड़से जाते थे। साधारण दवादारू होनेपर प्रायः यह दो तीन दिन तक चलती है, किन्तु धूप निकलते ही उसके बिस्तरेको बाहर लाकर उसे धूपमें इस प्रकार सुलाया कि जिससे धूप केवल उसके पैर और हाथपर पड़े। इसके बाद कपड़ेसे उसके हाथ पैर ढक दिये। वह जाड़ेका दिन था। करीब घण्टे भर तक हाथ पैर उसी प्रकार धूपमें रहे। इसीसे उसकी मरोड़ (ऐंठन) जाती रही। उस दिन उसे केवल नींबूका रस और जल पिलाकर रक्खा। दो दिन बाद ही वह स्वस्थ हो गया।

प्रायः सभी प्रकारके दर्दमें यह अत्यन्त गुणकारी है। पेड़ूपर मिट्टीकी पुल्टिश बांधनेसे करीब आध घण्टेके भीतर कठिनसे कठिन शूल-दर्द अच्छा हो जाता है।

पेड़ू पर मिट्टीकी पुल्टिश नाभिके चार पांच अंगुल ऊपरसे लेकर सारे पेड़ू तक देनी चाहिये। किन्तु पुल्टिशको खूब बड़ा करके देना उचित नहीं।

मिट्टीकी गरम पुल्टिश

मिट्टीकी ठण्डी पुल्टिशको ऊपरसें फ्लालेनसे कसकर बांध देनेको ही गरम पुल्टिश कहते हैं। एक फ्लालेनके कपड़ेकी कई तह करके पुल्टिशके ऊपर उसे इस प्रकार ढक देना होता है, जिससे कि मिट्टीकी सभी ओर फ्लालेन करीब एक इञ्च बाहर रहे। इसके बाद एक कपड़ेसे उसे इस तरह कस कर बांध दें, जिससे कि हवाका आना-जाना बन्द रहे। पर इतना नहीं कस देना चाहिये कि, जिससे रक्तका ही चलन उस अंशमें बन्द हो जाये। जबतक मिट्टी भींगी रहती है तभीतक उससे लाभ होता है, सूख जानेसे कम्प्रेसकी उपयोगिता खतम हो जाती है। मिट्टीकी पुल्टिशको हटानेके बाद प्रत्येक बार न बहुत गरम और न अधिक ठण्डे पानीसे भींगे एक रूमालसे रगड़कर उस स्थानको धो लेना चाहिये। पानीसे इस प्रकार धो चुकनेके बाद उस स्थानको कुछ देरके लिये गरम कपड़े आदिसे ढककर उसे जरा गरम कर लेना आवश्यक है।

मिट्टीकी पुल्टिश काफी देर तक रक्खी जा सकती है और आवश्यकतानुसार दिनमें कई बार बदली भी जा सकती है। कठिन और नये (acute) रोगोंके उठानके समय पहले इसे बार-बार बदलना चाहिये। रातमें इसे सारी रात रक्खा जा सकता है।

हाथ, पांव, गर्दन, गला, छाती, जननेन्द्रिय, मूत्राशय, जिगर, प्लीहा और पेड़ू आदि के ऊपर इसका बेखटके प्रयोग किया जा सकता है।

पेड़ूके दोषोंको दूर करनेके लिये और निर्दोष उपायसे कब्जियत दूर करनेके लिये पेड़ूपर मिट्टीकी गरम पुल्टिश आश्चर्यजनक काम करती है।

चूंकि पेड़ूकी दूषित अवस्था ही अधिकांश रोगोंकी सृष्टिका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कारण होती है, इस कारण अधिकांश रोगोंमें इसका प्रयोग बहुत लाभकारी सिद्ध होता है। इसके प्रयोगसे साधारण स्वास्थ्य भी बहुत कुछ सुधरता है। किन्तु पेड़ूके गरम रहने ही पर केवल इस पुल्टिश का व्यवहार करना चाहिये।

बुखारकी अवस्थामें रोगीके कोष्ट परिष्कार करने और ज्वर उतारनेमें इससे बढ़कर उपादेय और कुछ नहीं है। डेंगू, इन्फ्लुएञ्जा आदि जो कोई भी बुखार क्यों न हो, मिट्टीकी गरम पुल्टिशसे रोगीको काफी फायदा होता है। यह रोगीके शरीरका अधिकांश रोग, ताप और दूषित पदार्थ खींच लेती है। पेड़ू ठण्डा होकर उचित मात्रामें कोष्ट परिष्कार हो जाता है। फलस्वरूप ज्वर स्वयं उतर जाता है।

टायफायड (मोतीझरा या मियादी बुखार) आदि ज्वरोंमें भी इससे थोड़े ही दिनोंमें पेटका दोष नष्ट हो जाता है। फलस्वरूप ज्वर भी शीघ्र दूर हो जाते हैं। मेरे भतीजे श्री सव्यसाची मुखोपाध्यायको एक बार टायफायड हुआ। उसके ज्वरके आरम्भके समय मैं कलकत्तेमें था। सव्यसाची मेरी मांके साथ देशमें था। स्थानीय सभी अच्छे अच्छे डाक्टरोंसे मांने रोगीका इलाज कराया, पर उन सबके उपचारसे कुछ भी लाभ नहीं हुआ। इसी समय मैं घर गया। उस समय रोगीके पेटकी अवस्था अत्यन्त खराब थी। बार-बार पैखाना होता था और मलसे बड़ी भयानक दुर्गन्ध आती थी। ज्वर उस समय १०५ डिग्री था। अपने दो जल चिकित्सक मित्रोंकी सलाहसे मैंने पहले ही पेड़ूपर भींगी मिट्टी छाप दी। पेड़ू इतना गर्म था कि, भींगी मिट्टीकी पट्टी १५।२० मिनटमें ही बिल्कुल गरम हो उठी। इससे ज्वर बहुत कम हो गया। इसके बाद रात भर उसके पेटपर मिट्टीकी पट्टी बांधने लगा। इससे बहुत ही थोड़े समयमें पेटके निचले भागका सारा विकार बाहर हो गया और पाखाना स्वाभाविक ढंगसे होने लगा। इस मिट्टी

की पट्टीके इस्तेमालसे रोगीको इस प्रकार स्वास्थकर पाखाना होने लगा कि उसे देख कोई भी नहीं कह सकता कि यह टायफायडके रोगीका मल है। इसके पहले उसका पेट फूला हुआ था। मिट्टीकी पोल्टिशसे पेटका फूलना भी जादूकी तरह गायब हो गया। अब ज्वर रह गया। ज्वर जब खूब रहता, उस समय भींगे कपड़ेकी पट्टी पेड़ूपर बांधता और उसे तीन-तीन, चार-चार मिनटके बाद बदलता जाता। पेड़ूपर आध घण्टे जल पट्टी बांधनेसे ही करीब दो डिग्री बुखार नीचे आ जाता। इसके अलावा सिर धुला दिया जाता और हर रोज कई बार ठण्डे पानीसे शरीर रगड़ कर पोंछ दिया जाता। रोगी कुछ खाना नहीं चाहता था, जलमें नींबूका रस मिलाकर एक-एक घण्टे बाद उसे आधा गिलास करके काफी जल पिलाया जाता और पथ्यमें विशेषकर कमला नींबूका रस दिया जाता। रोगकी प्रारम्भिक अवस्थामें रोगी अचेत नींदकी (coma) तरह दीखता। उसकी दोनों आंखें हमेशा अर्धसुप्त रहतीं। बहुत पुकारनेपर सिर हिला कर जरा-सी भर आंख खोलता। परन्तु उपरोक्त चिकित्साके केवल ४।५ दिन होनेके बाद ही इस प्रकारकी सुषुप्ति जाती रही और इसके ३।४ दिन बाद तो वह बिस्तरेपर उठकर स्वयं बैठने लगा। तब उसे कटिस्नान कराना शुरू किया। रोगीको जलमें बैठा कर उसके पेड़ू (नाभिके नीचे) को बहुत हल्के धीरे-धीरे हाथसे सहला दिया जाता। कभी भूल कर भी जोरसे रगड़ा नहीं जाता। तीन दिन कटिस्नान क्रम-निम्न तापमें कराया जाता। इस प्रकार कई दिनकी चिकित्साके बाद उसका ज्वर उतर गया और थोड़े ही दिनोंमें वह बिलकुल स्वस्थ हो गया।

विभिन्न प्रकारके घावों (फूंका पकला) में मिट्टीकी गरम पुलटिशसे ही आराम हो सकता है। नये घावोंमें जिस प्रकार जलकी पट्टी लाभदायक है, उसी प्रकार पुराने घावोंमें मिट्टीकी पुलटिश सर्वोत्कृष्ट है। साधारण घाव उसके द्वारा दो तीन दिनमें ही अच्छा हो जाता है।

किन्तु घावपर और घावके चारों ओर कुछ दूरतक आधी इञ्च मोटी मिट्टीकी पुलटिश होनी चाहिये। मिट्टी हमेशा घावपर इस प्रकार रखनी चाहिये कि घाव और मिट्टीके बीचमें और कुछ कपड़ा वगैरह न होवे। यानी मिट्टीको सीधे घावपर छाप देना चाहिये। घावपर मिट्टी के प्रयोग करनेके पहले उसे एक मिट्टीके कोरे बर्तनमें एक घण्टा पका लेना अधिक अच्छा होता है। घावपर एक बार चढ़ाई हुई मिट्टी दो तीन घण्टेसे अधिक नहीं रहने देनी चाहिये। इस प्रकार मिट्टी का प्रयोग करनेसे भारीसे भारी भयानक घाव भी आसानीसे आराम हो जाता है। एक बार मेरी छोटी बहनकी ननदके पांवमें हड्डी कीड़ेने काट दिया। उससे पैरमें एक घाव हो गया और घाव बढ़ते-बढ़ते अन्तमें रुपयेके बराबर हो गया। शुरूसे ही डाक्टरी दवा शुरू हुई। फिर दूसरी विधिकी दवाइयोंका भी उपचार हुआ, पर तीन महीनेतक कुछ भी फायदा नहीं हुआ। अन्तमें मेरी बहन कुछ ताजी कादो मिट्टी पका करके उसके पैरमें बांधने लगी। आश्चर्यका विषय यह था कि, मिट्टी बांधनेके बाद ही यह घाव सूख गया।

फुन्सी, फोड़ा, जहरवात (carbuncle) आदि बिना नश्तर दिये केवल मिट्टी छाप कर ही अच्छे किये जा सकते हैं। मिट्टीकी पुलटिशके बीच बीच में दिनमें दो बार दस मिनटके लिये घावपर गरम सेंक देना चाहिये।

कान बहने और कान फूलनेमें भी इससे आश्चर्यजनक लाभ होता है। एक कपड़ेके टुकड़ेसे कानका छेद बन्द करके कानके चारों ओर काफी कादो मिट्टी छाप देनी चाहिये और फिर उसे फलालेनसे अच्छी तरह बांध दें। प्रत्येक बार दो तीन घण्टेके बाद पुलटिश बदल देनी चाहिये और फिर दस मिनट तक उसे सेंक देना चाहिये।

जल-चिकित्साकी अन्यान्य विधियोंके साथ साथ मिट्टीकी गरम पट्टीका व्यवहार करनेसे बाघी, उपदंश, हड़फोड़ घाव (gangrene), वात, विसर्प (erysipelas) और कैंसर आदि अच्छे हो सकते हैं।

विभिन्न प्रकारके चर्म रोग, बिच्छूके काटने, स्फीति या हड्डी टूटनेपर भी मिट्टीकी पुलटिश बहुत लाभ पहुंचाती है।

किसी भी प्रकारकी जलनमें यह रामबाणका काम करती है। एक बार हमारी बैठकमें एक टूटी चौकी खड़ी की हुई रखी थी। इसमें से एक पुरानी कांटी निकली हुई थी। एक नया नौकर आया, उसका पैर उस पिरेकपर पड़ा और वह करीब एक इञ्च पैरमें धंस गयी। पिरेकको लोगोंने जोर लगा कर उसके पैरसे खींच लिया, पर उससे उसे वेहद दर्द होने लगा। उस दिन मुझे इस घटनाकी कोई खबर नहीं मिली। दूसरे दिन जब मैं बाहर जाने लगा, तब देखा कि वह बरामदेमें पैर बाँधे बैठा है। मैंने पास जाकर उसका पैर देखा। घावके चारों ओर जरासा दबाने मात्रसे घावके मुखसे बजबज करके पीव बाहर निकल आया। उसका पैर भी काफी सूज गया था। एक महाशय वहीं बैठे थे, उन्होंने कहा इसे तुरत अस्पताल भेज दिया जाय। मैंने उसे अस्पताल नहीं जाने दिया। तुरत कादा मिट्टी लाकर उसके पैरमें ऊपर नीचे चारों ओर एक कपड़ेके सहारे पट्टी बांध दी। दर्दके मारे बिचारा सारी रात सो नहीं सका था। आध घण्टे बाद जब मैं उधर आया, तो देखा कि मिट्टीकी शीतलतासे आराम पाकर इसी बीच वह विचारा गहरी नींदमें सो गया था। करीब १२ बजे उसकी नींद खुली। तब एक बार फिर मैंने मिट्टी बदल दी। रातमें सोनेके पहले एक बार स्वयं उसने पट्टी बदल ली। दूसरे दिन बिस्तरसे उठनेमें मुझे देर हो गयी थी। जब मेरी नींद खुली, तो मुझे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि, बैठकमें वही नौकर झाड़ू दे रहा है। मैंने आश्चर्यके साथ पूछा, "तुम्हारा घाव कैसा है?" वह अपने घायल पैरको उठा कर घावको जोर-जोरसे दबा कर बोला, "अब तो कुछ भी नहीं है—अच्छा हो गया।"

घावके स्थानमें जो कुछ दूषित पदार्थ होता है, मिट्टीकी पुलटिश उसें खींच लेती है। इसी कारण जब मिट्टीकी पुलटिश खोल ली जाती

है, तब उसमें से एक प्रकारकी दुर्गन्ध निकलती है। मिट्टीकी पुलटिश जो विजातीय द्रव्यको खींच लेती है, यह उसीकी दुर्गन्ध होती है और इसी प्रकारसे विजातीय द्रव्यके उस स्थानसे हट जानेके कारण रोग आरोग्य हो जाता है।

यदि ठीक समयपर मिट्टीकी पुलटिशका प्रयोग किया जाय, तो चीर-फाड़ करनेकी आवश्यकता ही नहीं पड़ती। अनेक बार तो मिट्टीकी पुलटिश ही चीर-फाड़का काम करती है। मैमनसिंह जिलेका विधुभूषण नाहा नामक एक १७ वर्षका लड़का एक बार कलकत्ते आया। देशमें बांस चीरते समय एक बांसकी खैंकि उसके पैरमें गड़ गयी। उसे उसी समय उसने पकड़ कर निकाल फेंका, पर इससे घाव सूखा नहीं। वह बार-बार दवाई लगाकर घाव सुखाता था, पर घाव फिर हो जाता था। उसके पैरमें दर्द भी खूब रहता था और चलनेमें उसे कष्ट होता था। एक आदमीने उसके पैरकी यह हालत देखकर उसे बतलाया था कि, उसके पांवमें बांसका टुकड़ा रह गया है। उसे चीर कर निकलवाना होगा। कलकत्ते आकर वह घाव चिरानेको तैयार हुआ। किन्तु पैरमें किस जगह बांसका टुकड़ा है, उसे निकालनेके लिये डाक्टर लोग कितना काटेंगे, और इस कारण परदेशमें उसे कितने दिन कष्ट भोगना और बिछौनेपर पड़ा रहना होगा आदि सोच कर वह डर गया। मैंने उसे आश्वासन दिया और कुछ मिट्टी लाकर उसके पैरपर दे फ्लालेनसे उसे अच्छी तरह बांध दिया। दो तीन रात इस मिट्टीको उसने इसी प्रकार रखा। रोज सुबह शाम उस घावको दिखानेके लिये वह मेरे पास आता था। एक दिन मैंने देखा कि, एक बांसके टुकड़ेका सिरा घावमें झलकता है। मानो वह टुकड़ा कह रहा हो, "मुझे बाहर खींच लो।" उस लड़केने ही अपने नाखूनसे उस टुकड़ेको बाहर खींच लिया। मैंने देखा कि वह टुकड़ा $\frac{3}{4}$ इञ्चसे भी बड़ा था। दूसरे दिन भी रातके समय उसका पैर फिर पहलेकी तरह मिट्टीसे बांध दिया। दूसरे दिन यह देख कर आश्चर्य हुआ कि एक और

बांसका टुकड़ा उसी प्रकार मुंह किये घावमें चमक रहा है। इसे भी निकाल फेंका गया। यह भी उतना ही बड़ा था। इसके बाद तीन चार दिन मिट्टीकी पुलटिश लगानेसे घाव बिल्कुल सूख गया। इसके बाद फिर वहां घाव नहीं हुआ।

अन्य रोगोंमें भी मिट्टीके कम्प्रेससे बड़ा लाभ होता है। सिर दर्दमें गर्दनपर मिट्टीका कम्प्रेस देनेसे अत्यन्त लाभ होता है। साधारण अवस्थामें गर्दनपर गमछा रखनेसे भी लाभ होता है।

बिजली मारनेसे या सांपके काटनेसे जिसके होश हवाश गायब हो गये हों उसके सिरके भागको छोड़ गर्दनतक सारे शरीरमें मिट्टी छाप देने पर काफी समयमें आराम हो जाता है। इस प्रकारके उपचारसे सचमुचही कितनोंको आरोग्य लाभ हुआ है (Adolph Just—Return to Nature, P. 120-126)।

[४]

अन्यान्य स्थानोंमें मिट्टीका व्यवहार

हम लोगोंको अपने शरीरके चमड़ेको सदा साफ रखना चाहिये। किन्तु चमड़ेको साफ रखनेके लिये हम लोग जिन साबुनोंको काममें लाते हैं उनमें प्रायः चर्बी और एल्कालिन् आदि दूषित पदार्थ रहते हैं। इसी कारण जो लोग अधिक साबुनका व्यवहार करते हैं, उनके चमड़ेकी मुलायमियत नष्ट हो जाती है। किन्तु शरीरमें साबुन मलनेसे जो लाभ होता है, कादों मिट्टीके लगानेसे भी वही काम हो सकता है। बीच-बीच में कादो मल कर स्नान करनेसे रोमकूपका बाहिरी भाग अत्यन्त साफ हो जाता है, किन्तु जो मिट्टीका उपयोग नहीं करना चाहें, उन्हें

साबुन लगाना ही उचित है। कारण किसी भी हालतमें रोमकूपोंको साफ रखना आवश्यक है।

शौचसे आकर हम लोग केवल आधे मिनटमें ही मिट्टी और जलसे हाथ मल कर सारी बदबू और गन्दगी मिटा डालते हैं। गोली मिट्टीसे इसी प्रकार सारे शरीरको मल डालनेसे चमड़ेका सारा विकार और गंदगी दूर हो जायगी।

जिन लोगोंके सिरमें रूसी बैठ गयी हो, उन्हें बीच-बीच में कादो मिट्टीसे सिर अवश्य धोना चाहिये। इससे सिरकी सफाई होगी और रूसी भी धीरे-धीरे दूर हो जायेगी। क्योंकि साफ सिरमें रूसी रह ही नहीं सकती। पर मिट्टी नोनिया नहीं होनी चाहिये। नोनिया मिट्टी को काममें लानेसे बाल गिरनेका भय रहता है।

दांतके दर्दमें धुसरी मिट्टीके समान और कोई भी गुणकारी दवा नहीं है। दांतका ऐसा कोई भी रोग नहीं, जो इस मिट्टीसे रोज दांत धोनेपर अच्छा न हो जाये। दांतका हिलना, मसूड़ोंका फूलना, दांत दर्द आदि सब केवल मिट्टीसे दांत मलनेसे आराम हो जाते हैं। पहले दोनों वक्त दांत मलना आवश्यक है। जिसमें रातमें सोनेके पहले एक बार तो अवश्य दांत मलना चाहिये। कुछ दिन बाद अन्तमें एक बार मलनेसे भी काम चल जायगा।

लड़कपनमें मेरे दांत बड़े खराब थे। दांत दर्दसे मैंने बहुत कष्ट झेला है। मेरा यह कष्ट आश्चर्यजनक रीतिसे अच्छा हो गया।

एक दिन मैं नदीके किनारे बैठ कर मुंह धो रहा था। तब क्या देखा कि, एक वृद्ध पुरुष तुरत मुंह धोकर उठे। उनकी उमर ५५ वर्षसे कम नहीं होगी, पर उनके दांत पत्थरकी तरह चकचक कर रहे थे। मैंने कौतुकसे पूछा, "आपकी इतनी उम्र हुई, फिर भी आपके दांत इतने कैसे चमकते हैं?" उन्होंने जवाब दिया, "मेरे दांत भी पहले खूब

खराब थे। दांत दर्द होता, मसूड़े फूलते, फूले हुए स्थानको दबानेसे बदबूदार पदार्थ बाहर निकलता, ठण्डा जल मुखमें भी नहीं रख सकता था, दांत रगड़नेसे खून निकलता आदि आदि कष्ट थे। अन्तमें एक आदमीकी सलाह मान कर धुसरी मिट्टीसे दांत मलना शुरू किया। सात-आठ दिन दांत इस प्रकार धोनेके बादसे ही सारे कष्ट न मालूम कहां विलीन हो गये।"

उस वृद्धने जो कुछ अपने रोगके बारेमें बतलाया था, वे प्रायः सभी कष्ट मुझे भी थे। मैंने उसी दिनसे मिट्टीका व्यवहार आरम्भ किया और थोड़े ही दिनोंमें मेरे सारे रोग काफूर हो गये। अब मुझे कभी स्वप्नमें भी किसी प्रकारका दाँत-कष्ट नहीं होता।

पर केवल दांतोंको साफ रखने ही से दाँतोंके कष्ट दूर नहीं होते। पेट साफ रखनेसे ही दांत अच्छे रह सकते हैं। सभी रोग प्रायः एक ही कारणसे उत्पन्न होते हैं और संसारमें केवल एक रोग है, यही इसोसे (unity of disease) प्रमाणित होता है।

—०ο—

एकादश अध्याय

—※—
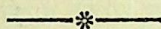
बीमारीमें सावधानीकी आवश्यकता

[१]

जिस प्रकार घरमें आग लगनेपर, आग कैसा विकराल रूप धारण करने जा रही है, यह देखनेके लिये ठहरनेकी आवश्यकता नहीं होती, ठीक उसी प्रकार शरीरमें रोग उत्पन्न होनेपर, रोगके निदानके लिये तबतक ठहरना कि इसका क्या रूप होगा उचित नहीं। खासकर ज्वर और पेटके रोगोंमें तो कभी भी इन्तजारी करना ठीक नहीं। ज्वरकी हालतमें जबतक यह देखनेके लिये ठहरा जायगा कि यह क्या रूप धारण करने जा रहा है, तबतक रोगका विष सिर, फुसफुस, हृदय आदि अङ्गोंपर आक्रमण कर सकता है।

प्राकृतिक चिकित्सामें रोगका निर्णय करनेके लिये ठहरनेकी अधिक जरूरत नहीं। शरीरमें जमा हुए विष (chemical poisons), रोगके कीटाणुओंसे उत्पन्न विष (toxins) अथवा दोनोंसे साथ ही साथ विष उत्पन्न होनेके ही कारण शरीरमें रोग पैदा होते हैं। अतएव रोग शुरू होते ही जरा भी देरी किये बिना ही शरीरके उस विकारको दूर करनेकी चेष्टा करनी चाहिये। शरीरमें दूषित पदार्थका रहना ही रोग है। इसलिये शरीरसे इस विकारको निकाल फेंकनेकी चेष्टा ही एकमात्र रोगका सच्चा इलाज है। ऐसा करनेसे अधिकांश रोग अपने आप अच्छे हो जाते हैं। इसी कारण बहुत बीमारियोंमें

केवल स्टीम-बाथ (वाष्प-स्नान), हिपबाथ आदिसे ही शरीर निरोग किया जा सकता है।

सभी प्रकारके पुराने रोगोंमें वाष्प-स्नान, हिपबाथ आदि द्वारा शरीरकी साधारण चिकित्सा करनेके बाद उस अंग विशेषकी चिकित्सा करनी चाहिये। नये रोगोंमें भी शरीरकी साधारण चिकित्सा करनेके बाद रोगके विशेष लक्षण पर ध्यान देनेसे यह आसानीसे आराम होता है।

प्राकृतिक चिकित्सामें सदा रोगीके शरीरकी चिकित्सा की जाती है रोगकी नहीं। किसी रोगीको दर्द होनेपर हम दवाईका इस्तेमाल कर उसे दबा सकते हैं। इससे दर्द मिटता है सही, पर रोगी अच्छा नहीं होता। रोगी शीघ्र ही और भी कड़े दर्द या दूसरे रोगका शिकार होता है। परन्तु वाष्प-स्नान आदिसे शरीर निर्दोष कर लिया जाय, तो रोग अपने आप अच्छा होने लगेगा।

यदि सम्भव हो तो सभी रोगोंमें रोगीके समूचे शरीरकी साधारण चिकित्सा (general treatment) करनी उचित है। कारण रोग होना ही बतलाता है कि शरीरमें विजातीय द्रव्योंका संग्रह हुआ है। विभिन्न रोग तो शरीरके विजातीय पदार्थोंके विभिन्न प्रकाशमात्र हैं। इस लिये प्रायः सभी रोगोंमें वाष्प-स्नान, हिपबाथ या स्नान, चाहे भींगे कपड़े से शरीर पोंछना आदि द्वारा शरीर नीरोग करना उचित है। इनसे रोग कभी भी बढ़ नहीं सकता, वह शीघ्र अच्छा होता है, तथा चंगा होनेपर फिर किसी दूसरे प्रकारके रोगका शिकार हो जानेकी सम्भावना कम रहती है। चूंकि जल-चिकित्सामें एक पैसेका भी खर्च नहीं है, इसलिये रोग होनेपर इस प्रकार सारे शरीरकी साधारण चिकित्सा आसानीसे की जा सकती है।

कभी-कभी प्रायः हैजा, चेचक, प्लेग आदि संक्रामक बीमारियोंका व्यापक प्रकोप हो जाता है। विशेष प्रकारकी आबोहवामें विशेष प्रकारके

रोगके कीटाणु वृद्धि पाते हैं। किन्तु, यदि देशमें इन रोगोंके आरम्भ होते ही प्राकृतिक प्रणालीसे शरीरको निर्दोष कर लिया जाय और कुछ दिन हिपबाथ और दोनों वक्त पूर्ण स्नान किया जाय, तो किसी भी रोगके कीटाणु शरीरपर अपना प्रभाव नहीं पैदा कर सकते। महामारी के निवारण और अपनेको स्वस्थ रखनेका यही प्राकृतिक तथा सर्वश्रेष्ठ उपाय है।

तौभी सभी रोगोंमें सारे शरीरकी चिकित्सा करनेकी आवश्यकता नहीं होती। बहुत रोगोंमें केवल आक्रान्त अंग विशेषकी चिकित्सा करने ही से काम चल सकता है।

प्रकृति शरीरके विभिन्न भागोंमें संचित विजातीय द्रव्यको विभिन्न उपायोंसे बाहर निकाल देती है। इसी कारण सभी चिकित्साका उद्देश्य यद्यपि केवल विजातीय द्रव्यको देहसे निकालना है, तौभी प्रकृति जिस प्रकारसे रोग प्रकाश करती है, उसमें ही नजर रख विभिन्न पद्धतिसे विजातीय द्रव्यको दूर करनेकी चेष्टा करनी उचित होती है।

रोगीके शरीरकी अवस्थापर भी विचार करना आवश्यक होता है। किसी भी प्रक्रियाके शुरू करनेके पहले यह जान लेना आवश्यक है कि, रोगीकी मौजूदा हालतमें यह चल सकती है या नहीं और रोगी उसे बर्दाश्त कर सकेगा या नहीं। जिस प्रकार ज्वर यदि एक सौ तीन, चार या पांच डिग्री हो, तो स्टीम-बाथ देना उचित नहीं; उसी प्रकार यदि शरीरकी गर्मी ९५ डिग्रीसे कम हो, तो हिपबाथ देना ठीक नहीं।

इसी कारण रोगके विभिन्न प्रकाश तथा विभिन्न अवस्थामें लपेट, बैंडेज, जलपट्टी आदि रोगके विष खींच लेनेकी विभिन्न पद्धतियोंका अनुसरण करना चाहिये।

[२]

किन्तु बाथ (स्नान) आदि हमेशा ठीक पद्धतिसे लेना आवश्यक होता है। ऐसा न करनेसे लाभके बदले हानि होनेकी सम्भावना रहती है।

हिपबाथ या पूर्ण-स्नान आदि सभी प्रकारके ठण्डे स्नान (cold bath) करते समय इस बातका ख्याल रखना आवश्यक है कि, शरीर गर्म है या नहीं। ठण्डे पानीके स्पर्शसे खून भीतर चला जाता है। खून जिस समय चमड़ेमें न हो, यानी जिस समय शरीर गर्म न हो, उस समय ठण्डा स्नान नहीं करना चाहिये। इस अवस्थामें स्नान करके बहुतोंने जिन्दगी भरके लिये अपने शरीरको नष्ट कर दिया है। इसी कारण शरीर जब गरम हो, शरीरका प्रत्येक रक्त बिन्दु ठण्डे जलके स्पर्शको चाहता हो, उस समय ठण्डे जलमें बाथ (स्नान) लेनेसे बहुत ही लाभ होता है। यदि शरीर गर्म हो, उस समय ठण्डे जलसे स्नान करनेसे किसी भी प्रकारका अनिष्ट नहीं होता। यहांतक कि शरीर यदि पसीनेसे तर हो, तौ भी नुकसान नहीं हो सकता। फिनलैंडके रहनेवाले पसीनेसे तर होकर बर्फपर लोट जाते हैं; पर इससे उनका कुछ भी अनिष्ट नहीं होता (J. H. Kellogg, M. D.—The Home-book of Modern Medicine, P. 634)।

यदि स्नान करते समय शरीर गर्म न रहे, तब शरीरको अच्छी तरह गर्म कर लेनेके बाद स्नान करना चाहिये। इसी लिये स्वस्थ शरीरमें थोड़ी देरतक हल्की कसरत कर शरीर गर्म करनेके बाद स्नान किया जा सकता है। कमजोर रोगी तीनसे छः मिनट तक वाष्प स्नान करनेके बाद यदि हिपबाथ ले, तो अत्यन्त लाभ होगा। या रोगीके सिरको छायामें रख कर या सिरपर भींगी तौलिया रख ५ से १५ मिनट तक धूप खिला कर शरीरमें गर्मी पहुंचानेके बाद स्नान कराया जा

सकता है। जिस समय धूप न रहे, उस समय सारे शरीरमें धीरे-धीरे मालिश द्वारा गर्मी पहुंचा कर काम चलाया जा सकता है। यदि रोगी बिस्तरपर पड़ा रहने लायक हो गया हो, तो मेरुदण्ड या पेड़ूमें १५ मिनट तक सेंकनेके बाद उसे कटि-स्नान कराया जाय। किन्तु शरीरको एक बार गर्म करके उसे ठण्डा होनेके पहले ही जबकि वह गर्म ही रहे, रोगीको बाथ देना चाहिये। गर्मीके दिनोंमें शरीर जबकि स्वभावतः ही गर्म हो, तब उसे किसी प्रकारसे गर्मी पहुंचानेकी आवश्यकता नहीं। स्वस्थ मनुष्य तो शरीर ठण्डा न रहने मात्रकी हालतमें स्नान कर सकता है। बुखारकी हालतमें भी रोगीके शरीरको गर्मी पहुंचानेकी आवश्यकता नहीं रहती। ज्वरसे उसके शरीरमें पहले ही से पर्याप्त गर्मी रहती है। किन्तु ज्वरकी शान्त अवस्थामें यानी जबकि रोगीको जड़ैया आयी हो, उस समय उसे हिपबाथ या पूर्ण-स्नान आदि ठण्डे स्नानकी व्यवस्था हरगिज नहीं करनी चाहिये।

स्नानके पहले जिस प्रकार शरीरको गर्म कर लेना आवश्यक होता है, ठीक उसी प्रकार स्नान करनेके बाद तुरन्त ही फिर ठण्डे चमड़ेमें गर्मी वापस कर लेनी आवश्यक है। स्नानके बाद शरीरको कभी भी ठण्डी अवस्थामें रहने देना उचित नहीं। अनेकों बार स्नानके बाद रोगीपर स्नानके बुरा फल होनेका मात्र यही कारण है। इसी कारण स्नानके बाद तुरत ही सूखी तौलिया या स्वच्छ कपड़ेसे रोगीके शरीरको खूब अच्छी तरह शीघ्र पोंछ डालना चाहिये। इसके बाद ही उसके सारे शरीरको रगड़-रगड़ कर गर्म कर लेना चाहिये। इसके बाद रोगीको बिस्तरेपर सुला गर्दन तक कम्बलसे ढक कर गर्मी वापस कर लेनी चाहिये। यदि स्नानके बाद रोगीको शीत या कम्प पैदा हो, तो रोगीको एक ग्लास गर्म जल पिलाया जा सकता है।

किन्तु रोगीका शरीर बहुत ज्यादा या काफी देर तक गर्म करना भी उचित नहीं। ऐसा करनेसे स्नानका सारा फल जाता रहेगा।

मोटी तौरपर हिपबाथ, पूर्ण-स्नान आदि सभी प्रकारके ठण्डे स्नानों (cold bath) के बाद ही चमड़ेकी गर्मी वापस कर लेनी चाहिये। अतः आवश्यकतासे न अधिक और न कम गर्मी पहुंचानी चाहिये।
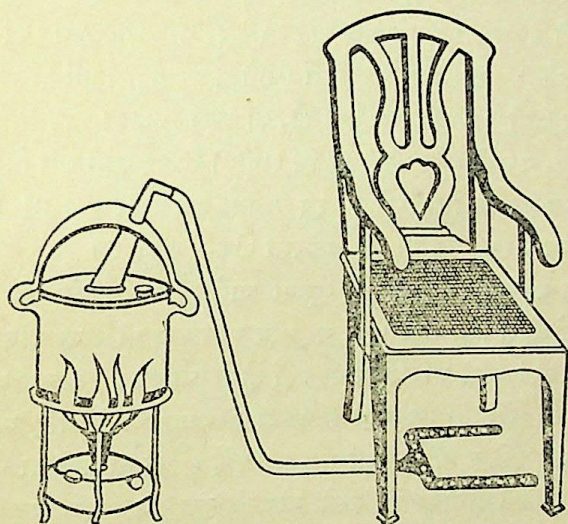
वाष्प-स्नान (Steam-bath P. 41)

स्नानके पहले और पीछे इस प्रकार शरीरको गर्म कर लेनेसे शरीर का रक्त बार-बार चमड़ेमें आता और बार-बार भीतर चला जाता है। शरीरका रक्त इस प्रकार शरीरमें चक्कर लगा सारे शरीरमें देह गठनकी सामग्री और पुष्टि पहुंचा देता है और भीतरसे वापस आते वक्त वहाँके दूषित पदार्थको लाकर शरीरके नालोंकी राह बाहर निकाल बहाता है। खूनके इस प्रकार आने-जानेसे भीतरकी यन्त्रोंके भीतर भी एक प्रकारके पम्पका सा काम होता है। इसी प्रकार उचित विधिसे स्नान करनेसे सभी यन्त्र भी उत्तेजना प्राप्त करते हैं।

इसी प्रकार गर्म स्नानके बाद कभी भी पसीनेकी हालतमें रोगीको नहीं छोड़ना चाहिये। इस अवस्थामें गर्मीकी प्रतिक्रियाके फलस्वरूप रोगीको ठण्ड लग जानेका भय रहता है। इसलिये स्टीम-बाथ आदिके पीछे हिपबाथ वगैरहसे रोगीको शीतल कर लेना उचित है।

सभी प्रकारके गर्म स्नानके बाद गर्मीको धीरे-धीरे कम कर लेना आवश्यक है। इस अवस्थामें सर्दी लगनेका डर नहीं रहता।

जब कभी भी कोई बाथ देना हो, तो इस बातका ख्याल रखना चाहिये कि, उसकी गर्मी इतनी हो कि रोगीको कष्टप्रद न हो और चिकित्सा होते समय उसे आराम मिले। हर क्रियामें इस प्रकार आराम मिलने पर ही यह समझना होगा कि चिकित्सा ठीक-ठीक हुई है।

इस बातको कभी भी नहीं भूलना चाहिये कि, काफी गर्म स्नान केवल भोजनके तीन घण्टे पहले या तीन घण्टे बाद ही लेना होता है। इस नियमकी कभी भी अवहेलना नहीं होनी चाहिये। किन्तु आंशिक बाथ जैसे, सेंक, गरम पट्टी (heating compress) आदि भोजनसे घण्टा भर पहले या पीछे लिया जा सकता है। हल्का सेंक या पेड़ूको छोड़कर अन्य स्थानोंका पैक हल्के भोजनके कुछ समय ही बाद लेनेसे भी कोई नुकसान नहीं होता। ठण्डा स्नान भी भोजनके बाद तीन घण्टेके अन्दर नहीं करना चाहिये, तथा ऐसे स्नानमें चमड़ेमें गर्मी आ जानेके पहले भोजन भी नहीं करना चाहिये।

ये सब बाथ ऐसे स्थानमें बैठकर लेने चाहिये कि, जहां हवाका झोंका नहीं हो। रोगीके शरीरमें कभी भी हवाका झोंका लगना ठीक नहीं। पर दरवाजे और जंगलोंको एकदम बन्द करके भी नहीं स्नान करना चाहिये। घरके एक दो जंगले स्नान करते समय खुले रहने चाहिये।

अत्यन्त बच्चा, वृद्ध या कमजोर रोगीकी कभी भी अधिक गर्म या अधिक शीतल चिकित्सा नहीं करनी चाहिये। ऐसे रोगीको वाष्प-स्नान के बदले भींगी चादरका पैक या उसके स्थानपर मध्य शरीरका पैक

तथा हिपबाथके स्थानपर आवश्यकतानुसार सिजबाथ या भींगी कमर पट्टी देनी उचित है। शरीरको शीतल करनेके लिये सिजबाथ और कोष्ठ-शुद्धिके लिये भींगी कमर पट्टीका इस्तेमाल किया जा सकता है।

चाहे किसी भी प्रकारका बाथ क्यों न लिया जाय, जल जितना सम्भव हो, स्वच्छ होना चाहिये। एक बार काममें लाये हुए पानीको फिर व्यवहारमें नहीं लाना चाहिये।

कपड़े-लत्ते साबुनसे खूब धोकर या गरम पानीमें खौला कर फिर दुबारा काममें लाने चाहिये। इसी कारण रोगीके लिये कपड़ोंके दो तीन जोड़े रूमालादिके टुकड़े रखने चाहिये। फ्लालेनको कभी भी गर्म पानीमें खौलाना नहीं होता है। एक आदमीका व्यवहार किया हुआ फ्लालेन यदि दूसरेके काममें लाना हो, तो उसे पहले २४ घण्टे पानीमें भिगा कर रीठा आदिसे खूब धोकर व्यवहार करना चाहिये।

ठीक पद्धतिसे यदि चिकित्सा की जाय, तो जल-चिकित्सासे रोगीका कभी भी अनिष्ट नहीं होता। किन्तु यदि कुछ खराबी हो, तो भी समझना चाहिये कि, चिकित्सा ठीकसे नहीं हुई है। अतएव तुरत उस पद्धतिको बदल देना चाहिये।

यदि पैक या बाथ आदि कभी रोगीको असुविधाजनक मालूम हो, तौभी तुरत उसे फिलहाल बन्द रखना उचित है (F. E. Bilz—The Natural Method of Healing, P. 67)।

एक ही साथ अनेकों प्रक्रियायें शुरू करके रोगीको चंचल करना भी ठीक नहीं। एक प्रक्रियाका प्रभाव समाप्त होनेके बाद रोगीको कुछ मौका देनेके पीछे दूसरा कुछ करना उचित है। साधारण तौरपर दिनमें दो-तीन प्रयोग ही काफी होते हैं। मनमें सदा यह याद रखियेगा कि, प्रकृतिकी क्षमतासे अधिक काम नहीं कराया जा सकता।

पहले छोटे-छोटे उपायोंसे रोग दूर करनेका प्रयत्न करना

चाहिये। यदि उनसे रोग न छूटे तभी बड़े उपायोंका अवलम्बन करना चाहिये।

अनेकों बार रोगीकी अनेकों छिपी-सी बीमारियां जल-चिकित्साके समय प्रकट होने लगती हैं। पर, इससे डरना नहीं चाहिये और नियमानुसार जल-चिकित्सा जारी रखनी चाहिये। शीघ्र ही सभी रोग अपने लक्षण दिखा बाहर हो जायंगे। इसी कारण जल-चिकित्साके बाद रोगी सब तरहसे पूर्ण स्वस्थ हो जाता है। बालीगंजमें एक लड़केको निकसारी हुई। उसके अचानक बन्द होनेपर उसे आंव पड़ गया। मैंने जब आमाशयकी चिकित्सा की, तो फिर निकसारी हो गई। पर फिर दो दिन बाद आमाशयके साथ-साथ वह चली गई।

रोगीके शरीरकी गर्मीकी हमेशा दो-दो तीन-तीन घण्टे बाद परीक्षा करनी चाहिये। पर, यदि रोगी सोया हो, तो उसे उठा कर कभी भी थर्मामीटर नहीं लगाना चाहिये। यदि घरमें थर्मामीटर न हो, तो केवल नाड़ियोंकी गतिको गिन कर भी शरीरकी गर्मीका पता लगाया जा सकता है। स्वस्थ बच्चेकी नाड़ी मिनटमें १४० बार चलती है, बालककी १२० बार, युवककी ७५ तथा बुढ़ेकी ७०।८० बार स्पन्दित होती है। स्वाभाविक ९८ डिग्रीसे अधिक प्रत्येक डिग्रीके लिये १० बार अधिक स्पन्दन होता है। युवकोंको ९९ डिग्री ज्वर होनेसे उनकी नाड़ी मिनटमें ८५ बार चलती है।

रोगीको सदा विश्राम देना चाहिये तथा ऐसा काम करना चाहिये, जिससे रोगी उत्तेजित न होने पावे। बहुत रोगोंमें तो केवल आराम से ही लाभ होता है। शरीर जब शान्त रहता है, तभी प्रकृति अपने संस्कारका काम करती है। डाइरिया तो बिना खाये सो जाने ही से अच्छा हो जाता है। रोगीको नींदसे कभी भी जगाना उचित नहीं।

दवा खानेको ही अधिकांश लोग चिकित्सा समझते हैं, पर प्रधान

चिकित्सा है रोगीकी सुश्रुषा। अच्छी सुश्रुषा होनेपर रोग सहज ही में अच्छा हो जाता है।

हाँ, यह भी देखना चाहिये कि, रोगी भी फांकी देकर आराम होनेसे मुख न मोड़े। प्रकृतिके नियमकी अवहेलना करने ही से रोग होता है। उपवास वगैरहसे उसी पापके प्रायश्चित करनेपर ही रोगसे छुटकारा मिलता है। दवा खाकर, ओझाको बुला कर और तंत्रमंत्र आदिसे प्रकृतिके शासनको कभी धोखा-धड़ी नहीं दी जा सकती।

[३]

जिस प्रणालीसे पुरुष रोगीकी चिकित्सा की जाती है, स्त्रियोंकी चिकित्सा उन्हीं मूल आधारोंपर होनी चाहिये। भगवानने स्त्रियोंका गठन सन्तान धारण करनेकी उपयोगिताके कारण पुरुषोंसे कुछ भिन्न-सा बनाया है। इसी कारण उनको कुछ विशेष रोग भी होते हैं। पर जिन मूल कारणोंसे शरीरकी अन्यान्य बीमारियां होती हैं, वे ही कारण गर्भाशय सम्बन्धी रोगोंको भी उत्पन्न करते हैं। स्त्रियोंके जरायु आदिमें रोग होनेपर समझना चाहिये कि, उनके शरीरमें विजातीय पदार्थ संचित हो गया है। इसलिये स्टीम-बाथ (वाष्प-स्नान), हिपबाथ और तलपटमें मिट्टीकी पुलटिश आदि द्वारा उस विजातीय पदार्थको दूर निकाल देना ही स्त्री-रोगकी प्रधान चिकित्सा है।

स्त्रियोंके मासिकमें कमी, मासिकके समय दर्दका होना, अधिक रक्तश्राव, गर्भावस्थामें उदरामय, प्रसवमें पीड़ा, गर्भकी हालतमें जी मिचलाना आदि रोगोंमें दिनमें दो बार हिपबाथ लेनेसे जादूकी तरह आराम होता है। इसके साथ-साथ रोज कमसे कम दो घण्टेके लिये एक बार पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी बांधनेसे बड़ा ही फायदा होता है।

स्त्रियोंके सूतिका रोगमें, डिम्बाशयकी जलनमें, मासिक होनेमें बिलम्ब होनेपर बीच-बीच में भींगी कमरपट्टी (wet girdle) और मिट्टीके बेण्डेजके साथ-साथ सिजबाथ, हिपबाथ और पूर्ण-स्नान सब रोगोंको दूर करते हैं।

जिन स्त्रियोंको प्रायः गर्भपात होता हो, उन्हें नियमित रूपसे हिपबाथ लेने, भींगी कमर पट्टीका इस्तेमाल करने और रोज नियमानुसार स्नान करनेसे इस विकट रोगसे छुटकारा मिल सकता है।

गर्भकी हालतमें यदि रक्त स्राव हो, तो केवल पेड़ूपर मिट्टीकी पुलटिश बांधनेसे ही रक्त बन्द हो जायगा। कभी-कभी तो १ ग्लास ठण्डा जल पीनेसे भी यह रुक जाता है।

जरायुकी जलनमें स्त्रियोंको बहुत ज्यादा कष्ट होता है। इस रोग में नियमित भावसे हिपबाथ, सिजबाथ और पेड़ूपर मिट्टीके बैण्डेजके साथ-साथ यदि दर्दके स्थानपर बारी-बारीसे गरम और ठण्डे जलसे कम्प्रेसका प्रयोग किया जाय, तो बहुत फायदा होता है।

गर्भकी हालतमें बहुत स्त्रियोंको शूलका दर्द होता है। इस रोगका मूल कारण कोष्ठ बद्धता ही है। अतः नियमित रूपसे यदि हिपबाथ और भींगी कमर पट्टीका उपयोग किया जाय, यह शूल कभी नहीं होगा और होनेपर शीघ्र आराम हो जायगा।

स्त्रियोंके प्रायः सभी रोगोंमें भींगी कमर पट्टी (wet girdle) से आश्चर्यजनक लाभ होता है। क्योंकि वह पेड़ूस्थित सभी विजातीय पदार्थोंको खींच लेता है। केवल इसी पैकसे (लपेट) प्रायः सभी स्त्री-रोग अच्छे किये जा सकते हैं। जहां इसके व्यवहार करनेपर भी शीघ्रतासे आरोग्य नहीं होता है, वहां पेट गरम रहनेपर भींगे कपड़ेकी जगह कादा मिट्टीके बैण्डेजका व्यवहार लाभदायक होता है।

[४]

बच्चोंकी चिकित्सा भी वयस्क पुरुषोंकी ही तरह होनी चाहिये। अंतड़ियों तथा बृहद्‌यन्त्रको साफ और दोषरहित करके, पसीना पैदा कर तथा स्नानादिसे शरीरकी अधिक गर्मीको कम करके एवं जीवनी शक्तिको बढ़ा कर वयस्कोंकी भांति ही बच्चोंकी भी चिकित्सा करनी चाहिये।

बच्चोंके प्रायः सभी रोगोंमें उनकी बड़ी अंतड़ीको साफ कराना चाहिये। पानकी डंठीको नारियलके तेलमें डुबोकर बच्चेके मलद्वारमें प्रवेश करा देनेसे ही बच्चेको दस्त आ जाती है। यदि इससे दस्त न हो, तो थोड़े पानीमें मधु मिलाकर पिचकारीसे भीतर प्रवेश करा देनेसे ही कुपित मल बाहर चला आता है।

दस्त साफ करानेमें मधु ग्लिसरिनसे हजार गुना बढ़ कर होता है, किन्तु पेड़ूपर बैण्डेज बांधना ही कोष्ट-परिष्कार करनेके लिये सर्वोत्तम औषधि है। रोज घण्टे भरके लिये दिनमें दो बार पेड़ूपर बैंडेज (wet girdle) बांधनेसे बच्चोंके पेटका सारा विकार बाहर निकल जाता है और अन्तड़ियां तथा बड़ी आंत दोषरहित हो जाते हैं।

बच्चेकी बड़ी आंतके साफ हो जानेपर उसे कुछ आराम देनेके बाद, उसके शरीरसे पसीना निकाल देना चाहिये। मध्यकायकी पैक (Trunk pack, P. 129) के द्वारा पसीना निकालना बच्चोंके लिये लाभदायक होता है। बच्चेकी दस्त साफ कराकर इस पैकके देनेसे बच्चोंकी सर्दी, ज्वर, खांसी, कुकुर-खांसी, ब्रांकाइटीश यहांतक कि न्यूमोनिया भी शीघ्र आराम हो जाते हैं।

किन्तु बच्चोंको स्नान करानेमें बहुत सावधान रहना चाहिये।

सात वर्षसे कमके बच्चोंमें गर्मी पैदा करनेकी बहुत कम शक्ति होती है। इसलिये कम ज्वरमें या साधारण रोगमें खूब ठण्डे जलसे

स्नान कराना उचित नहीं है। ठण्डे जलमें थोड़ा साधारण गरम जल डाल कर जलकी ठण्डकको नष्ट करके तब स्नान कराना चाहिये। पर याद रहे पानी गरम न होने पावे।

या ठण्डे जलमें बार-बार हाथ डुबो कर उसी हाथसे बच्चेके शरीरको रगड़-रगड़के गर्मी पहुंचानेसे बच्चेके शरीरका दूषित ताप बाहर हो जाता है और शरीर भी शीतल हो जाता है।

स्वाभाविक अवस्थामें प्रत्येक दिन बच्चेको ठण्डे जलमें स्नान कराना उचित है। ऐसा करनेसे जल्दी उन्हें ठण्डक नहीं लगती। सिर हमेशा ठण्डे पानीसे धोना आवश्यक है।

रोगकी हालतमें कमजोर तथा बूढ़े रोगियोंकी जिस प्रकार सावधानी रखनी चाहिये, ठीक उसी प्रकारकी सतर्कता बच्चोंके लिये भी आवश्यक है। कितना ठण्डा पानी काममें लानेसे बच्चेका शरीर फिर शीघ्र गरम हो सकेगा, इसे खूब समझ कर ही चिकित्सा करनी उचित है।

द्वादश अध्याय

खाद्य-चिकित्सा

[१]

अंग्रेजीमें एक कहावत है, We are made or unmade at the table—भोजनके आसनपर ही हमारे शरीरका गठन होता है और भोजनके ही आसनपर वह विनष्ट होता है।

यदि भोजनमें दोष न रहे, तो आसानीसे हमें कोई भी बीमारी हो ही नहीं सकती। भोजनके ही दोषके कारण हमारे शरीरमें विजातीय पदार्थ इकट्ठा होते हैं और उन्हींके सहारे शरीरमें रोग उत्पन्न होते हैं।

बीमार होनेपर लोग हम लोगोंके लिये दुखी होते हैं। पर रोग होनेपर दुःख न कर कृपा ही करनी चाहिये। क्योंकि प्रायः सभी रोग ही हमारी अपनी सृष्टि किये हुए हैं—हम लोग भोजनकी थालीपर बैठ कर रोगकी सृष्टि करते हैं।

जब भोजनके ही दोषसे प्रायः सभी रोग उत्पन्न होते हैं, तब प्रधानतया खान-पानमें ही सावधानी करके प्रायः सभी रोगोंसे छुटकारा पाया जा सकता है।

चुने हुए भोजन द्वारा शरीर गठित होनेसे, शरीरमें रोग निवारण करनेकी इतनी ज्यादा क्षमता आ जाती है कि कोई भी रोग शरीरपर आसानीसे अपना प्रभाव नहीं जमा सकता।

शरीर गठन और क्षय निवारण ही भोजनके प्रधान उद्देश्य हैं। जिन मूल तत्वोंसे हमारे शरीरका निर्माण हुआ है, उन्हीं पदार्थोंको भोजनके साथ ग्रहण करके हम दोनों उद्देश्योंकी पूर्ति कर सकते हैं। हमारे भोजनमें आमिष (protin), शर्करा (carohydrate), तेल (fat), लवण, जल और खाद्य-प्राण (vitamines) रहते हैं। इन्हीं सब खाद्य पदार्थोंको घुमा-फिरा कर खानेसे शरीर गठनके उपयुक्त और सर्वगुण संयुक्त (balanced food) भोजन होता है।

खाद्य-पदार्थोंके भीतर प्रोटिन या मांस जातीय खाद्य ही प्रधान है। क्योंकि मांस जातिके उपादानोंसे शरीरका प्रायः आधा भाग गठित हुआ है। हमारे शरीरके कोषसमूह (cell) मांस जातिके भोजनसे ही बनते हैं। दूध, छेना, मसूर आदिकी दाल, उरद, सेम, मांस, मछली, अण्डे आदि माँस जातिके प्रधान खाद्य हैं। किन्तु मांस जातिके उपादानोंको ग्रहण करनेके लिये, काफी मांस खाना चाहिये, ऐसी बात नहीं है। मांस खानेसे जिस प्रकार लाभ होता है, उसी प्रकार हानि भी काफी होती है। मांसके साथ हम पुष्टि ग्रहण करते हैं सही, पर साथ ही साथ विष भी ग्रहण करते जाते हैं। इसके अलावे माँससे कोष्ट-बद्धता होती है। मांस-मछलीमें जितना प्रोटीन है, उससे कहीं ज्यादा यह विभिन्न जातिकी वनस्पति और दूध आदिमें मौजूद है। चीना बादाम में इसका परिमाण ४२ प्रति शत, सोयाबीनमें ४०%, नारियलमें २५%, मसूरकी दालमें २५%, उड़दमें २५%, सेममें २५%, बकरेके मांसमें २५%, मूंगकी दालमें २३%, छेनामें २१%, मछलीमें १८%, और अण्डेमें १३% होता है। अतएव मांस यथा सम्भव कम और अन्यान्य पदार्थ थोड़ा अधिक खाकर हम लोग शरीर गठनके लिये पर्याप्त मसाला प्राप्त कर सकते हैं। हम लोगोंको रोज कमसे कम दो छटांक मांस जातिका पदार्थ खाना आवश्यक है।

शर्करा जातिके खाद्यका प्रधान उद्देश्य ताप (गर्मी) और शक्ति उत्पन्न

करना है। शर्करा जातिके उपादानोंसे चर्बी भी बनती है। इसी कारण अधिक मात्रामें शर्करा जातिका भोजन करनेसे आदमी मोटा होता है। जो स्वभावतः स्थूल शरीरके हों, उन्हें शर्करा जातिके पदार्थोंको कम खाकर यथासम्भव फल अधिक खाना चाहिये। चावल, आटा मैदा, चीनी, गुड़, जौ, बार्ली आदि शर्करा जातिके भोजनके अन्तर्गत हैं। रोज प्रत्येक आदमीको कमसे कम सात छटांक शर्करा पदार्थ ग्रहण करना उचित है।

तेल जातिके भोजनसे भी ताप और शक्ति उत्पन्न होती है और इससे शरीरमें चर्बी बनती है। घी, मक्खन, सरसों, नारियल, ओलिभ आदि विभिन्न प्रकारके तेल इसके अन्तर्गत हैं। जिन्हें कोष्टबद्धताका रोग हो या जिनका लिवर खराब हो, उन्हें यथासम्भव घीका परित्याग कर मक्खनका व्यवहार करना चाहिये। इसका सैकड़े ५० भाग तेल जातिका है। विभिन्न प्रकारसे नारियल भोजनके साथ ग्रहण करना चाहिये, एक तृतीयांश पका हुआ नारियल ही खाने योग्य होता है। यह जितना पुष्टिकर है उतना ही जल्दी पचता भी है। रोजाना जिस किसी भी प्रकारसे हो १½ छटांक तेल जातिका पदार्थ खाना आवश्यक होता है।

भोजनके साथ-साथ कैलशियम, फासफोरस, लौह, सोडियम, आयोडिन आदि विभिन्न प्रकारके नमक जातिके पदार्थोंका होना आवश्यक है। नमक जातिके पदार्थोंसे दांत, हड्डी और मस्तिष्कका गठन होता है और शरीरमें रक्तके कणिकाओंकी सृष्टि होती है। उचित मात्रामें नमक जातिके पदार्थोंके ग्रहण करनेसे हृदय और रक्तको लाभ पहुंचता है और खूनकी कमी, रिकेट और गलगण्ड आदि रोग दूर होते हैं। दूध, मक्खन, पालकी, लेटुस, बन्धी कोबी, रामतरोई, गाजर, शलगम, टमाटर, कमला नींबू, अखरोट, आटा, बिना छांटा चावल, पांठा आदिके यकृत और अण्डेसे उचित मात्रामें रसायनिक नमक पाया जा सकता है।

किन्तु केवल प्रोटीन, शर्करा, तेल और नमक जातिके पदार्थोंसे ही जीवन धारण नहीं किया जा सकता। इनके साथ-साथ यदि विटामिन मिला हो तभी ये शरीरके काम आते हैं अन्यथा नहीं। खाद्य पदार्थोंमें विटामिन उसी प्रकार है जिस प्रकार इञ्जनमें तेल। लाख रुपये खर्च कर हम लोग एक इञ्जन खरीद कर रख सकते हैं, किन्तु यदि उसमें तेल नहीं दिया जाय, तो वह नहीं चलेगी। खाद्य पदार्थोंमें विटामिन भी ठीक वैसे ही है। हो सकता है कि विटामिन मात्रामें खूब कम हो, किन्तु भोजनका प्राण वही है। इसी कारण हिन्दीमें विटामिनको खाद्यप्राण कहा जा सकता है। विटामिन रहित सभी खाद्य मृत है। बहुत तादादमें चूहोंको विटामिन रहित मांस आदि सभी प्रकारके भोजन खिला कर देखा गया है कि वे अच्छी तरह खानेपर भी क्रमशः सूखते जा रहे हैं और कुछ दिन बाद मर गये। शहरमें लोगोंका शरीर जो जल्दी अच्छा नहीं होता, इसका अन्यतम यही कारण है।

विटामिनके ए, बी, सी, डी, ई, एफ आदि नाना भेद हैं। ये विभिन्न प्रकारसे शरीरके लिये उपयोगी हैं। शरीरकी पुष्टिके लिये, हड्डियोंके निर्माण, बच्चोंके दाँत-गठन, भूख बढ़ाने, पाकस्थलीको सतेज बनाने तथा नीरोग दीर्घ जीवन प्राप्तिके लिये ये निहायत जरूरी हैं। रोग निवारण करनेकी क्षमतामें वृद्धि कर ये विभिन्न रोगोंके आक्रमणसे शरीर की रक्षा करते हैं।

जिस प्रकार भोजनके दोषसे विभिन्न रोग उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार आवश्यक विटामिनके अभावमें भी शरीरके विभिन्न यन्त्र कमजोर पड़ जाते हैं और उसके परिणाम स्वरूप नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होने लगते हैं।

शरीरमें उचित विटामिनकी कमीसे शरीरकी पुष्टि बन्द हो जाती है और इससे आंखका रोग (Xerophthalmia), स्वाँस नली और फुसफुसमें दर्द, वेरीवेरी, दूषित घाव (Scurvy), रिकेट (Ricket),

स्त्रियोंका वन्ध्यापन, भूख न लगना, अजीर्ण, मूत्राशयकी पीड़ा, रतौन्धी, खूनकी कमी, आँखका बैठ जाना आदि रोग उत्पन्न होते हैं।

अनेकों बार यह देखा गया है, कि जिन विटामिनोंके अभावमें ये सब रोग होते हैं, उन्हें खिलानेसे रोगसे छुटकारा मिल जाता है और जिन लोगोंको ये रोग होते हैं, वे इन रोगोंसे छुटकारा पाते हैं।

वेरीवेरीको पूरबी रोग भी कहते हैं। जिन देशोंके लोग कलका छांटा हुआ चावल खाते हैं, उन्हींको यह रोग होता है। सुदूरपूर्व जापानमें खूब वेरीबेरी होता था ; किन्तु कलके छांटे हुए चावलको छोड़ कर वे इस रोगसे छुट्टी पा गये हैं।

एक समय एक जापानका सरकारी जहाज पृथ्वीकी प्रदक्षिणाको निकला। इस जहाजमें ३७६ नाविक थे। पृथ्वी प्रदक्षिणा करके लौटते लौटते उनमेंसे १६९ आदमियोंको वेरीबेरी रोग हुआ और उनमें से २५ मर गये। यह सोच कर कि यदि नाविकोंकी इस प्रकार मृत्यु होती रहेगी, तो जापानकी सामरिक शक्ति कितनी क्षीण हो जायगी, जापान सरकार चिन्तित हो उठी और उसने अनेकों सुप्रसिद्ध डाक्टरों-को रोग निवारणके अनुसन्धानके लिये नियुक्त किया। इनमेंसे एक डाक्टरने देखा कि, उसकी नौसेनाके सभी सैनिकोंकी सारी व्यवस्था तो यूरोपकी नौसेना जैसी ही है, केवल अन्तर इतना ही है कि, वे कलका छांटा हुआ चावल खाते हैं। इस गवेषणाके बाद उन्होंने जिस मार्गसे पहला सरकारी जहाज गया था, उतने ही आदमियोंको भूसीके नीचेके लाल अंशवाले कण सहित चावल देकर पृथ्वीकी परिक्रमा करनेको भेजा। जब वे वापस लौटे, तो देखा गया कि, एक भी नाविक-की मृत्यु नहीं हुई और न वेरीवेरीकी बीमारी ही हुई।

इसके बाद जापानके जेलखानोंमें कलका छांटा चावल बन्द करके उन्होंने परीक्षा कर देखा कि, जहां पहले साल मृत्यु संख्या ७२ थी, वहां इस व्यवस्थाके बाद वह शून्य हो गयी।

अमेरिकाकी सरकारने फीलीपाइनमें इसी व्यवस्थाका अवलम्बन कर अपनी सेनासे बेरीबेरी रोगको मार भगाया है (Leslie J. Harris, D. Sc.—Vitamines, P. 49—51)।

विटामिनके अभावमें शरीरमें कोई रोग न होने पावे, इसलिये प्रत्येक आदमीको काफी मात्रामें आम, अनरस, पपीता, आड़ू, कागजी नींबू, कमला नींबू, सेव, दूध, मक्खन, अंडा, ढेकीका छांटा हुआ चावल, चोकरदार आटा, छिलकेवाली दाल, गाजर, सेम, उरीद, कोबी, टमाटर, हरी साग-सब्जी और पालकी आदि शाक खाने चाहिये।

किन्तु हम लोग जिस प्रकार भोजन पकाते हैं, उस मेंसे प्रायः अधिकांश समय विटामिन नष्ट हो जाता है। खूब तेज आंचमें पकानेसे कोई-कोई विटामिन प्रायः रहने नहीं पाता। इस लिये यदि रोज मूली, मटरका गादा, टमाटर, खीरा, पालकी, गोभी आदि थोड़ा-थोड़ा करके कच्चा ही चबाया जाय, तो शरीर काफी पुष्ट होता है। नमक आदि मिला कर हर रोज कच्ची तरकारियां काटकर एक व्यंजन बना लेना चाहिये। यूरोपमें प्रायः सभी लोग भोजनके समय इस प्रकार कटी हुई तरकारी (salad) काफी मात्रामें खाते हैं। कच्ची तरकारी स्वास्थ्यके लिये बहुत लाभदायक है।

थनतलेका ताजा दूहा हुआ दूध गरम रहते पीया जाय, तो उसका सारा विटामिन बचा रह जाता है। पंजाबमें ग्वाले गायके थन तले बैठकर मुंह नीचाकर चोका पीते हैं। इससे उनका शरीर दानवकी तरह बलिष्ठ होता है। दूध गरम करके खूब गाढ़ा कर लिया जाय, तो वह बहुत कठिनाईसे हजम होता है।

चोकरदार आटेमें तथा लाल कण सहित चावलमें काफी मात्रामें विटामिन रहता है। आटेके चोकरको निकाल कर हम लोग खाद्य पदार्थ ही को नष्ट कर डालते हैं। चोकरदार आटा खानेसे कोष्टशुद्धिके सम्बन्धमें निश्चिन्त हुआ जा सकता है। चोकरदार आटेका नाम

सुनते ही कितने लोग नाक भौं सिकोड़ेंगे। किन्तु उन लोगोंको जान लेना चाहिये कि, चोकर समेत आटा खाना ही सारे यूरोपमें प्रचलित प्रथा है। वे लोग इसे कहते हैं, all wheat bread—सम्पूर्ण चोकर समेत रोटी। हाथकी चक्कीसे पीसा हुआ आटा ही सर्वोत्तम है। कलमें पीसा हुआ जो मैदा होता है, उसमें तत्व पदार्थ खूब कम रहता है; उसे भी यदि घीमें छान लिया जाय, तो उसमें और कुछ भी विटामिन शेष नहीं रह जाता।

जिस ढंगसे हम लोग भात खाते हैं, उस मेंसे भी मांड़के साथ-साथ सारा विटामिन चला जाता है। बंगाल तथा अन्यान्य धान पैदा करनेवाले प्रदेशोंमें हजारों आदमी मलेरियासे मरते हैं। इसका सर्वप्रधान कारण यह पुष्टि रहित खाद्य ही है। इस प्रकार पुष्टिके अभावमें जब शरीर कमजोर हो जाता है, तभी मलेरिया और अन्यान्य रोगोंके जीवाणु आक्रमण करके शरीरको जर्जर बनाते हैं।

छिल्केदार भिगोये अंकुरित चना, मटर और मूंग आदिकी दालमें भी यथेष्ट विटामिन रहता है। इनको हर रोज थोड़ा-थोड़ा खानेसे काफी फायदा पहुंचता है। चना आदिको एक दिन पानीमें भिगो कर दूसरे दिन उसका पानी गिरा देनेसे एक दिनमें वह अंकुरित हो जायगा।

छिल्के सहित दालको धीमी आंचमें पकाना चाहिये। छिलका निकाल फेंकनेसे उसके साथ-साथ अधिकांश सार पदार्थ बाहर चला जाता है। छिलकेको खूब चबाकर निगल लिया जाय, तो यह काफी मात्रामें पखाना कराता है और पाखानेपर देर तक बैठनेकी आवश्यकता नहीं रहती।

हम लोग खाते समय तरकारीकी सीठी चबाकर फेंक देते हैं। उसे चबाते-चबाते घुला कर निगल जाना उचित है। इस प्रकार सीठीको काफी मात्रामें खानेसे काफी परिमाणमें पाखाना होता है और आसानीसे कोष्ठशुद्धि होती है।

जो अधिक मात्रामें सागसब्जी नहीं खाते, अथवा जो कलका छांटा हुआ चावल खाते हैं, उन्हें प्रायः असाध्य कोष्ठवद्धता होती है। इसी कारण ग्रामीणोंमें कोष्ठवद्धता खूब कम होती है और इसके प्रतिकूल शहरवालोंमें अधिक होती है। हमारे देशमें साग प्रायः भुन कर खाया जाता है। इससे कुछ लाभ नहीं होता। यदि पालकी वगैरहका साग रसदार पकाकर खाया जाये, तभी उससे पूरी मात्रामें फायदा पहुंचता है। हम लोग अधिकांश बार भुजियाके साथ भात खाते हैं। किसी प्रकारकी भुजिया शरीरके लिये हितकर नहीं।

कमला नींबू, बीजोरा, कागजी नींबू तथा अन्यान्य फल बहुत ही फायदेमन्द होते हैं। ऐसे फलको ही खाना आवश्यक है जो पेड़का पका और ताजा हो, पर अधिक पका न हो। सड़ा फल शरीरके लिये विषके समान है। सेव, आड़ू आदिका छिलका कभी भी नहीं फेंकना चाहिये, और चबाते-चबाते भीतरके सीधे गुदेके साथ मिला कर खा डालना चाहिये। जिस मौसममें जो फल होता हो, वही सर्वोत्तम फल है।

काडलिवर आयलमें भी काफी मात्रामें विटामिन होता है। ऐसे काडलिवर आयलको खाना चाहिये जिसके साथ और कोई दवा मिली न हो। यह इतना पुष्टिकर होता है कि, यक्ष्मा रोगकी पहली अवस्थामें रोगाणुओंको ध्वंस कर रोगीकी प्राणरक्षा करता है। यक्ष्मा रोगमें शरीर क्षय होता है और उस कमीको पूरा करनेमें काडलिवर आयल अपना सानी नहीं रखता। इसी कारण काडलिवर आयल एक श्रेष्ठ औषधि है। जो अत्यन्त रुग्ण और दुर्बल हों, जिनको धड़कन होती हो, उन्हें यक्ष्मा हो सकता है, उन्हें चाहिये कि समय नष्ट न कर यथा शीघ्र काडलिवर आयलका व्यवहार करें। किन्तु इसे बहुत ही थोड़ी मात्रामें शुरू करना चाहिये। तीन बूंदसे आरम्भ कर एक-एक बूंद बढ़ाते जाना चाहिये। वह भी चायके एक चम्मचसे अधिक नहीं

लेना चाहिये। जितना हजम हो, उतनी ही मात्रामें लेना आवश्यक है। हजम न होनेपर डाइरिया हो सकती है।

मांस वगैरह अधिक न खाना ही अच्छा है। पृथ्वीके प्रायः सभी प्राकृतिक चिकित्सक मांस खानेके विरोधी हैं। माँसमें सीठी जैसे किसी पदार्थके न होनेके कारण यह हमेशा कोष्ठोंको कठोर बनाता है। मांस खानेपर सदा उसके साथ कच्ची तथा पकाई हुई तरकारी खानी चाहिये। उससे इतनी अधिक कोष्ठ कठिनता नहीं होती।

स्वास्थ्य रक्षाके लिये भोजनका चुनाव नितांत आवश्यक है। जिस प्रकार लोग समझ-बूझ कर शतरंजकी गोटियां आगे पीछे देते हैं, उसी प्रकार शरीरकी आवश्यकताके अनुसार खास भोजन खाना होता है, और खास भोजनको बन्द करना होता है।

प्रधानतया केवल भोजनमें सावधानी रखने मात्रसे मनुष्य स्वस्थ रह सकता है तथा अनेकों रोगोंसे छुटकारा पा सकता है।

भोजनपर ध्यान रख कर जिस प्रकार स्वास्थ्य लाभ किया जाता है, खाद्य पदार्थकी अदला-बदलीसे भी उसी प्रकार रोगोंसे छुटकारा पाया जा सकता है।

हमारे अधिकांश रोग ही कोष्ठवद्धतासे उत्पन्न होते हैं। भोजनपर नियन्त्रण रखकर यदि कोष्ठ शुद्ध रखा जाय, तो बहुत रोगोंसे हम छुट्टी पा सकते हैं। हिप-बाथ और पेड़ूपर बैंडेज (लपेट) आदि कोष्ठ शुद्धिमें सहायता करते हैं सही, पर खाद्य द्वारा ही सदा पेट साफ रखना उचित है। शरीर स्वस्थ रखने और रोगसे छुटकारा पानेका यही सर्वश्रेष्ठ प्राकृतिक उपाय है।

कुछ प्रकारके फलोंका सेवन करनेसे दस्त साफ आती है। बेलके दिनोंमें पका बेल, आमके दिनोंमें पके आम, पका पपीता, पका केला, कमला नीम्बू, गूलर (डूमर), अमरूद, किसमिस, मुनक्का, खजूर, अखरोट, अंजीर, खुबानी, अनरस, सेव, कटहल, जामुन आदि मेंसे मौसमके

अनुसार जो पाये जायं, उन्हें रोज निश्चित परिमाणमें खानेसे कोष्ट शुद्धिके बारेमें विचार करनेकी भी आवश्यकता नहीं रहती।

आयुर्वेदमें लिखा है—

विनापि भेषजै व्याधिः पथ्यादेव निवर्तते।
न तु पथ्यविहीनानां भेषजानां शतैरपि॥

—बिना दवाके केवल पथ्य द्वारा ही रोगोंसे छुटकारा पाया जा सकता है, किन्तु बिना पथ्यके सैकड़ों दवाइयोंसे भी रोग अच्छा नहीं होता।

यह शरीर एक खाद्य-यन्त्र (food-engine) है। वेदान्तमें इसे 'अन्नमय कोष' कहा गया है। केवल अन्नपर नियन्त्रण रखकर ही कितने रोगोंसे छुटकाया पाया जा सकता है। इसीसे कहा जाता है—diet cures more than doctors—डाक्टरोंकी अपेक्षा पथ्यसे ही अधिक रोग आराम होते हैं।

[२]

किन्तु खाद्य और पथ्य उसी हालतमें लाभदायक होते हैं, जब प्रकृतिके दावेकी रक्षा करते हुए उन्हें ग्रहण किया जाय। जिस विधिसे भोजन ग्रहण करनेसे वह प्राकृतिक ढंगसे ग्रहण योग्य होगा, ठीक उसी प्रकार खाद्य ग्रहण करनेसे ही वह हमारे शरीरके काम आ सकता है।

भगवानने हमारे मुँहमें दांत इसी लिये बना रखे हैं, कि हम लोग चबाकर भोजन करें। बिना चबाये खानेसे कोई भी भोजन हमारे काम नहीं आता। हमारी सारी परिपाक-क्रिया मात्र ही इस चबानेपर निर्भर हैं।

अपने दांतोंको हम बाहरी यन्त्र कह सकते हैं, तौभी शरीरके भीतरकी पाकस्थली और यकृत आदि यन्त्रके साथ मशीनकी तरह उनका सम्बन्ध है।

जिस प्रकार विभिन्न वाद्य यन्त्र अलग अलग होनेपर भी तालमें मिलकर एक स्वरमें बजते हैं, हमारे शरीरके विभिन्न यन्त्र भी उसी प्रकार परस्पर अलग-अलग होकर भी आपसमें एक संगति रखकर जीवनका गान गाते हैं।

किसी खाद्यपदार्थके चबानेसे मुखकी लार-ग्रन्थियोंसे काफी मात्रामें लार आकर भोजनके साथ मिल जाती है। मुखमें लार निकलते ही पाकस्थलीसे एक प्रकारका पाचक रस निकलकर खाये हुए पदार्थके साथ मिल जाता है। वही बारम्बार यकृत, क्लोम और क्षुद्रान्तसे रस खींचकर लाता है, इसी कारण हमारे मुखसे ही परिपाक क्रिया आरम्भ हो जाती है।

इन्हीं पांच प्रकारके पाचक रसोंसे मिलकर खाद्य पदार्थ लेईकी तरह हो जाता है। इससे अन्त्रोंकी अंगुरिकायें (villi) बिना किसी कठिनाईके रस खींच लेती हैं। ये रस खाद्य पदार्थपर एक रसायनिक क्रिया उत्पन्न करते हैं। इसीसे यह शरीरके ग्रहण योग्य बनता है। इस रसायनिक क्रियाके न होनेसे भोजन कितना ही कीमती क्यों न हो वह शरीरके किसी काम नहीं आता।

एक सूखी रोटी या एक मुट्ठी भात चबानेसे कुछ समय बाद यह मीठा लगने लगता है। इसका कारण यही है कि लार खाद्य पदार्थके श्वेत-सार (starch) के साथ मिलकर रसायनिक क्रिया द्वारा शर्करामें बदल जाती है। श्वेतसार इस प्रकार परिवर्तित होनेपर ही शरीरमें ग्रहण योग्य होता है। किन्तु पाकस्थलीमें आनेके साथ ही खाये हुए पदार्थका इस प्रकार रूपान्तरित होना बन्द हो जाता है। इसी कारण अच्छी तरह चबाकर ही खाद्य पदार्थको वहाँ पहुंचाना चाहिये। भोजनके साथ लार न मिलनेसे वह पचता ही नहीं। इसी कारण जिन लोगोंके दांत नहीं होते, उन्हें प्रायः प्रबल अजीर्ण रोग उत्पन्न होता है और नकली दांत लगानेके साथ ही उनका यह रोग दूर हो जाता है (W. D. Halliburton, M. D.—Home-book of Physiology, P. 548)।

सुना जाता है कि, इङ्गलैण्डके सुविख्यात प्रधान मन्त्री ग्लैडस्टोन प्रति ग्रासको ३२ बार चबाकर खाते थे। इसी कारण वे ८० वर्षतक एक नवयुवककी तरह स्वस्थ रहे।

जो कुछ भी खाया जाय, उसे चबाकर खरल कर लेना चाहिये। चबानेसे लार निकलनेके बाद तरह-तरहके पाचक रस निकलते हैं और ये विभिन्न रस ही श्वेत-सार, स्नेह पदार्थ, प्रोटिन आदि खाद्यके अन्यान्य पदार्थोंको हजम करते हैं। इसी कारण शरीरको सबल, स्वस्थ और नीरोग रखनेके लिये अथवा रोगसे छुटकारा पानेके लिये चबाकर खाना स्वास्थ्य लाभका प्रथम सोपान है।

[३]

भोजनके सम्बन्धमें इसकी पहले ही से व्यवस्था रहनी चाहिये कि नियत समयपर भोजन किया जाय। प्रति दिन निदिष्ट समय पर भोजन करनेसे प्रचुर परिमाणमें पाचक रस निकलता है। क्योंकि पाकस्थलीमें भी इस विषयमें एक प्रकारका अभ्यास हो जाता है। समय बीत जानेपर भोजन करनेसे अन्दरके यन्त्रोंसे यथेष्ट परिमाणमें पाचक रस नहीं निकलता और खाया हुआ अन्न अधिक समय तक पेटको भारी किये रहता है, और नियमित समय पर भोजन नहीं करनेसे ठीक समय पर पाखानेका वेग भी नहीं होता। इसी लिये भोजनके समयके सम्बन्धमें अत्यन्त सावधान रहना चाहिये। यदि काफी कामके कारण अवकाश न हो, तौभी उसे छोड़ उचित समय पर भोजन कर लेना श्रेयस्कर है। क्योंकि यदि शरीर स्वस्थ नहीं रहेगा, तो रुपये-पैसेकी कुछ भी कीमत नहीं।

ठण्डा या बासी भोजन कभी नहीं करना चाहिये। यह प्रायः हजम नहीं होता और शरीरको लाभ पहुंचानेकी अपेक्षा हानि पहुंचाता

है। उसी भांति खूब गर्म भोजन भी नहीं करना चाहिये। जिसे खानेमें कष्ट होता है ऐसा भोजन करनेसे अत्यन्त कठिन रोग उत्पन्न होता है। इसी कारण सदा ताजा भोजन करना उचित है। किन्तु ताजा भोजन करते समय अधिक खानेके लालचको संवरण करना चाहिये। अधिक प्रकारके व्यंजन खानेसे अधिकांश ठण्डा खाना पड़ता है। इसी कारण दो तीन अच्छे व्यंजन मात्र गर्मागर्म खाना अच्छा है।

खाना हमेशा खुली जगहमें बैठकर खाना चाहिये। बन्द स्थानमें बैठ कर भोजन करनेसे खाया हुआ पदार्थ खुली जगहकी अपेक्षा काफी अधिक समयमें हजम होता है।

मांस, तेल, शर्करा आदि विभिन्न जातिके खाद्य यथेष्ट परिमाणमें खाने उचित होनेपर भी अनेक प्रकारके व्यंजन एक साथ कभी भी नहीं खाने चाहिये। इससे विरुद्ध भोजनके कारण स्वास्थ्यकी हानि होती है। रोज नये-नये खूब कम एक दो प्रकारके व्यंजन ही खाने चाहिये। किन्तु ये भी खूब तृप्तिकर होने चाहिये।

एक ही प्रकारका भोजन भी रोज काफी दिनों तक नहीं खाना चाहिये। इससे भोजनके प्रति अरुचि हो जाती है। दाल और तरकारी तो रोज बदलनी चाहिये। नित्य नये-नये व्यंजन खानेसे भोजनके प्रति नित नई रुचि उत्पन्न होती है। इससे काफी पाचक रस निकलता है जिसके फलस्वरूप खाया हुआ भोजन आसानीसे पच जाता है।

भोजनमें जितने कम मसालोंका व्यवहार हो, उतना ही अच्छा है। मसालोंमें शरीरकी पुष्टिकारक कुछ तत्व नहीं है। अनेकों समय अधिक मसाला डालकर हम लोग भोजनको मुश्किलसे पचनेवाला बना डालते हैं। इलायची, लौंग आदि गरम मसाले शरीरके लिये अत्यन्त हानिकर हैं। बिधवाओंके लिये जिस प्रकार मछली खाना अपराध है, उससे कहीं अधिक अपराध है इलायची आदि गरम मसालेदार भोजन।

मिर्चा आदि मसाले पाकस्थलीमें जलन उत्पन्न करते हैं और अधिक दिनों तक ज्यादा मसाला खानेसे यकृतमें जलन उत्पन्न हो सकती है।

पेट भर कर कभी भी नहीं खाना चाहिये। अधिक आहार करनेसे खाया हुआ पदार्थ पेटमें हिलडुल नहीं सकता और काफी देर तक पाकस्थलीमें रहनेपर यह गर्म हो उठता है। अधिक दिनों तक ज्यादा भोजन करनेसे, पाकस्थलीका संकुचित तथा प्रसारित होनेकी क्षमता जाती रहती है, पाकस्थलीसे काफी रस नहीं निकलता, मन्दाग्नि रोग उत्पन्न हो जाता है और पाकस्थली स्थायी रूपसे बढ़ जाती है। जो जितना पचा सके, उसकी अपेक्षा उसे कुछ कम खाना चाहिये। जितना हजम किया जा सके, उससे एक मुट्ठी भी अधिक भात खानेसे शरीरके लिये यह विष स्वरूप होता है और वह शरीरमें विजातीय द्रव्यकी सृष्टि करता है। इसी कारण कहा है, "अजीर्णे भोजनं विषं" या 'कम भातमें दूना बल, अधिक भात रसातल।'

किन्तु अधिक भोजन जिस प्रकार नुकसान करता है, आवश्यकतासे अधिक कम खाना भी उसी भाँति हानिकर है। इससे शरीर क्रमशः दुर्बल हो जाता है और उस समय तो जो कोई भी व्याधि आक्रमण कर सकती है।

दिनकी अपेक्षा रातमें हल्का भोजन करना चाहिये। शाम होते ही भोजन करनेसे खूब लाभ होता है। उस हालतमें सोने जानेके पहले ही भोजन पच जाता है। नींदके समय यथा सम्भव पाकस्थली खाली रहनी उचित है।

भोजनसे कुछ पूर्व और पीछे नींद या कठिन शारीरिक या मानसिक परिश्रम करना उचित नहीं, इससे परिपाक शक्ति अत्यन्त क्षुब्ध होती है।

भोजनके सम्बन्धमें सुश्रुतने कितनी ही बहुत महत्वपूर्ण बातें लिखी हैं। इतने वर्षों बाद वैज्ञानिकोंकी दृष्टिमें भी ये बातें सर्व सम्मानित

हैं। सुश्रुतने कहा है, सुखकर आसनपर बैठकर और शरीरको समान भावसे रखकर भोजन करना चाहिये। भूख न रहने पर कभी भी नहीं खाना चाहिये। जब भूख लगे तब नियमित समय पर हल्का, स्निग्ध और ताजा भोजन मात्रानुसार करना चाहिये। कभी भी बड़ी जल्दी-जल्दी भोजन नहीं करना चाहिये या घण्टों बैठकर भी खाना उचित नहीं। असमयमें वेला बिता कर और कम या अधिक मात्रामें भोजन करना ठीक नहीं। मौके वेमौके शरीर भारी रहनेपर भोजन करनेसे नाना प्रकारकी बीमारियां आक्रमण करती हैं, अथवा इससे मृत्यु तक हो सकती है। उच्छिष्ट, बासी, वेस्वाद, ठंडा या फिरसे गरम किया हुआ अन्न, खूब गर्म भोजन मत खाओ। 'भुक्त्वा राजवदासीत यावदन्न क्लमोगतः',—आहारके बाद जबतक भोजन जनित क्लान्ति दूर न हो, तबतक राजाकी तरह आसनपर बैठे रहो (सूत्र स्थानम्, ४६।५११—५२७)।

चरकने भी भोजनके सम्बन्धमें बहुत कामकी बातें बताई हैं। चरकमें है, 'मात्राशीस्यात',—परिमित भोजी बनो (सूत्रस्थानम् ५।१)। बिना नहाये, बिना कपड़ा निकाले, हाथ, पैर, मुख बिना धोये कभी भी भोजन मत करो, सूखा या बासी अन्न मत खाओ (ऐ, ८।१८)।

सुश्रुत और चरकके ये नियम भोजनके सम्बन्धमें पथप्रदर्शक स्वरूप माने जा सकते हैं।

त्रयोदश अध्याय

रोग-चिकित्सामें हवा

[१]

रक्तशुद्धिके लिये हम लोग बाजारसे औषधियां लाकर खाते हैं। उनसे जितना उपकार होता है अनेकों बार अपेक्षाकृत अधिक नुकसान ही होता है।

किन्तु रक्तशुद्धिके लिये औषधिका आश्रय ग्रहण करनेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं। भगवानने शरीरके भीतर ऐसी व्यवस्था कर रखी है, जिसके द्वारा हमारे शरीरमें रक्त लगातार शुद्ध होता रहता है। फुसफुस और हृदय, रक्त शुद्ध करनेके प्रधान यन्त्र हैं।

हमारा फुसफुस दोनों छातीके भीतर बिना द्वारके थलियाकी तरह स्थित है। इनका श्वासनली व गलेकी राह मुंह और नाकसे होकर बाहर पृथ्वीके साथ सम्बन्ध है। हमारी श्वासनली छातीके ठीक बीचोबीचसे दो भागोंमें विभक्त हो जाती है। इसकी एक शाखा दाहिने फुसफुसको और दूसरी बायें फुसफुसको जाती है। ये दोनों अलग-अलग फुसफुसोंमें जाकर फिर अत्यन्त छोटे-छोटे वायुकोषोंकी सृष्टि करती हैं। क्रमशः छोटी होते-होते ये इतने क्षुद्र वायु कोषोंके रूपमें परिणित हो जाती हैं कि, प्रत्येक पूर्ण वयस्क आदमीके फुसफुसमें प्रायः ६ करोड़ वायुकोष होते हैं।

फुसफुस जब भीतर हवा खींच लेता है, उस समय इसके करोड़ों वायुकोषोंकी एक ओर होती है हवा, और दूसरी ओर होता है रक्त। हवाके साथ फुसफुस जिस आक्सिजनको खींचता है, इन्हीं सूक्ष्म पर्दोंके भीतरसे खून उसे ग्रहण करता है और खून शरीरके विभिन्न यन्त्रोंसे जो विषाक्त कार्बोनिक एसिड लाया होता है, उसे निश्वासके साथ बाहर कर देता है। फुसफुसके इस कार्यको शरीरमें कार्बोनिक एसिड और आक्सिजनके विनिमयका केन्द्र कहा जा सकता है।

हवासे लिया हुआ आक्सिजन फुसफुससे होकर हृदयमें जाता है। हृदय उसे पम्प करके शरीरकी धमनियोंके भीतरसे शरीरके सारे भागमें पहुंचाता है। जिस प्रकार बड़े-बड़े शहरोंमें पम्पकी सहायतासे नल द्वारा पानी चारों तरफ पहुंचाया जाता है, हमारे शरीरमें हृदय भी ठीक पम्पकी ही तरह हृद्पिण्ड एक पेशीनुमा थलीकी तरह यन्त्र विशेष है। दो फुसफुसोंके बीचोंबीच वक्षास्थिरकी बायीं ओरको यह अवस्थित है। हृदयसे जिन नलों द्वारा रक्त शरीरमें सभी जगह आक्सिजन पहुंचाता है उसे धमनी (artery) कहते हैं और जिनके द्वारा शरीरका दूषित रक्त विशुद्ध होनेके लिये हृद्से होकर फुसफुसमें जाता है उन्हें शिरा (veins) कहते हैं। हमारी धमनियां क्रमशः सूक्ष्मसे सूक्ष्मतर बालकी तरह होती हुई सूक्ष्म कैशिक नली (capillary) में विभक्त हुई हैं और फिर सूक्ष्म नलियां क्रमशः बड़ी होती हुई शिराके रूपमें परिणत हो जाती हैं। ये ही दूषित रक्त चारों ओरसे लाती हैं। हृदयके पम्प कर देनेसे रक्त छोटीसे अधिक छोटी धमनियोंके भीतरसे चलकर इन कैशिक नलियोंके भीतर होकर फिर शिराओंके मार्गसे हृदयमें फिर आ जाता है। जब इन कैशिक नलियोंसे होकर धमनियोंका रक्त शिराओंमें जाता होता है तब शरीरके तन्तु खूनसे आक्सिजन ग्रहण करते हैं एवं आक्सिजन रहित रक्तके भीतर उत्पन्न कार्बोनिक ऐसिड गैस शिराओंमें छोड़ देता है। इसी कारण शिराओंका रंग नीला होता है और धमनियां विशुद्ध

रक्त वहन करनेके कारण लाल रंगकी होती हैं। शिराओंका दूषित रक्त हृदयसे होकर फुसफुसमें जाता है। वहाँ वह हवामें कार्बोनिक ऐसिड गैसको छोड़ कर विष रहित हो फिर आक्सिजन लेकर लौट पड़ता है। दिन रात हमारे शरीरके ये कभी न थकनेवाले नौकर कार्बोनिक तथा आक्सिजनके ग्रहण और परित्यागका काम करते रहते हैं। इसी लगातारके ग्रहण और त्यागपर हमारा जीवन निर्भर रहता है। इसी ग्रहण और परित्यागपर हमारा दूषित खून लगातार शुद्ध होता रहता है।

विशुद्ध हवासे लिये हुए आक्सिजन द्वारा ही हमारे शरीरमें ताप और शक्तिका संचय होता है। जिस प्रकार हवामें आक्सिजनके बिना ईंधन नहीं जल सकता, उसी प्रकार शरीरकी अग्निको भी प्रज्वलित रखनेके लिये हमेशा आक्सिजनकी आवश्यकता होती है। भोजन द्वारा लाये हुए कार्बनके साथ मिलकर आक्सिजन हमारे शरीरमें जीव ताप उत्पन्न करती है। काठ या कोयला यदि हवाकी सहायतासे जलाया जाता है, तो इसी प्रकार ताप उत्पन्न होता है। बिना इस तापके हम लोग जी नहीं सकते। जब आदमी मर जाता है, तब उसके शरीरमें यह ताप नहीं रहता। यह ताप ही शरीरमें सब प्रकारकी शक्ति उत्पन्न करता है। भोजनका तत्व जब शरीरके भीतर आक्सिजनकी आगसे जलता रहता है तभी शरीरमें शक्ति उत्पन्न होती है।

इसी कारण हमारे शरीरमें आक्सिजनकी उपयोगिता सबसे अधिक मूल्यवान है।

[२]

किन्तु यदि हवा निर्मल हो तभी फुसफुस बाहरसे ली हुई हवाको काममें ला सकता है। यदि हवा दूषित होगी, तो फुसफुसके रक्त कोष केवल आक्सिजन ही नहीं ग्रहण करते, बल्कि जिस पथसे रक्त आक्सिजन

ग्रहण करता है, हवाके दूषित होनेपर दूषित अंश भी उसी मार्गसे रक्तमें संक्रामित होते हैं। हम लोगोंको यह याद रखना चाहिये कि जितनी बार हम लोग साँस लेते हैं, उतनी ही बार बाहरी हवासे रक्तका सम्पर्क होता है। यदि हवा दूषित होगी, तो खून खराब होगा ही। कुछ दिनोंतक दूषित हवामें सांस लेनेसे पीलिया, क्लान्ति, अग्निमन्दता या कोई भी फुसफुस सम्बन्धी रोग हो सकता है (C.W. Kimmins—The Chemistry of Life and Death, P. 81)।

हमारे शरीर रूपी दुर्गमें प्रवेश करनेके लिये दो राजमार्ग हैं। एक मुँह और दूसरा नासिका। खराब भोजनसे जिस प्रकार शरीरमें रोग उत्पन्न होता है, खराब हवा लेनेसे भी उसी प्रकार रोग उत्पन्न हो सकता है। इसी कारण स्वास्थ्य रक्षाके लिये शुद्ध वायु ग्रहण करना तथा दूषित हवासे दूर रहना अत्यन्त आवश्यक है।

बाहर खुली हवामें रहना शरीरको स्वस्थ रखनेका एक प्रधान उपाय है। यदि सम्भव हो, तो रात्रिमें भी खुले बरामदेमें सोना चाहिये। गर्मीके दिनोंमें तो खुले आकाशके नीचे सोया जा सकता है। यू० पी०, पंजाब आदिमें लोग ऐसा करते भी हैं। यदि अभ्यास न हो तो पहले पहल खुली हवामें सोनेसे सर्दी हो सकती है, किन्तु क्रमशः बाहर सोनेके अभ्याससे सर्दी होना दुस्वार हो जायगा। अत्यन्त पुरानी और असाध्य सर्दी भी केवल मात्र बाहर सोनेके अभ्याससे अच्छी हो सकती है।

मैं एक व्यक्तिको जानता हूं, सर्दी ही उनका प्रधान रोग था। पहले उनके नाकसे टप-टप पानी गिरता, जब सर्दी थोड़ी घनी हो जाती, तब पक्के कटहलके कोयेकी तरह उनकी नाकसे पोंटा निकलता। अन्तमें उसके सूख जानेपर फिर नाकसे जल गिरना आरम्भ हो जाता। वे कभी भी स्वाभाविक भावसे सांस नहीं ले सकते थे और दिनमें बीससे पचीस तक छींक आतीं। इस प्रकार उनके वर्षपर वर्ष बीतते गये। अन्तमें

एक आदमीकी सलाहसे वे खुले बरामदेमें सोने लगे। इससे उनकी सर्दी काफूर हो गई और फुसफुस भी सूख कर स्वस्थ हो गया।

पर सभीको (खास कर शहरवालोंको) बाहर बरामदेमें सोनेकी सुविधा नहीं होती। उन्हें घरके जंगलोंको खोल कर तो अवश्य ही सोना चाहिये।

बहुत लोग जाड़ेकी रातोंमें रजाईसे मुँह ढक कर सोते हैं। यह शरीरके लिये बहुत ही हानिकर है। फी घण्टे हर एक आदमी प्रायः आठ गैलन विषैला कार्बोनिक ऐसिड निश्वासके द्वारा बाहर करता है। रजाईमें यह गैस रुक जाती है और बार-बार सांसके साथ वह फिर भीतर जाती है। कई बार तो एक ही रजाईमें एकसे अधिक व्यक्ति सोते हैं। उस हालतमें वे परस्पर आपसमें एक दूसरेका विष ग्रहण करते हैं। इससे रक्त दूषित हुए बिना नहीं रहता।

निश्वाससे जो यान्त्रिक विष (organic matter) निकलता है, वह इतना विषाक्त होता है कि, वह एक साथ ही काफी दूरी तकके स्थानको विषाक्त कर देता है। अनेकों बार तो इस विषाक्त हवाके ग्रहण करनेसे आदमीकी मृत्यु तक हो सकती है। फ्रांसके प्रसिद्ध चिकित्सक डा० ब्राउन सेकार्ड (Dr. Brown Sequard) ने परीक्षा करके देखा है कि, यह विष अत्यन्त सूक्ष्म मात्रामें छोटे-छोटे जन्तुओंके शरीरमें प्रवेश करा देनेसे उनकी मृत्यु उसी समय हो जाती है (J. H. Kellogg, M. D.—Second Book of Physiology & Hygiene, P. 136)।

किसी प्राणीको हवा रहित स्थानमें रख देनेसे शीघ्र मृत्यु हो जाती है। इसका प्रधान कारण यही है कि शरीरसे यह भीषण विष बाहर नहीं निकल पाता। जिस विषके शरीरसे न निकलनेसे प्राणीकी मृत्यु होती है, उसी विषके फिर शरीरमें प्रवेश करनेसे भी मृत्यु हो सकती है।

सोनेपर भी इस बातकी व्यवस्था होनी चाहिये कि प्रत्येक निश्वासके साथ विशुद्ध वायु ग्रहण की जा सके। इसी कारण घरके भीतर ऐसे स्थानपर बिस्तर लगाना चाहिये, जहां हवा सदा बहती हो। जिस स्थानपर जीवनका आधा भाग कटे, वह जगह यथा सम्भव खुली और स्वच्छ होनी चाहिये। किन्तु दुःखका विषय है कि, शयनागारको ही अधिकांश लोग मालगुदाम बनाये रखते हैं। कितने घरोंमें तो इतने साजसामान लाकर गाँज दिये जाते हैं कि, उनसे निकली गैस घरकी हवाको भारी कर देती है।

हमारे आर्य ऋषि लोग घरके भीतर अग्निकी रक्षा करते थे। अनेकों बार घरमें आग जलाकर यज्ञ भी किया जाता था। इससे उन्हें केवल धर्म लाभ होता हो यही नहीं—इससे उनकी स्वास्थ्य-रक्षा भी होती थी। घरमें आग जलनेसे उस स्थानकी हवा उस शून्य स्थानको पूरा करनेके लिये आगके भीतर से जानेके लिये दौड़ती है। इससे आग द्वारा शुद्ध होकर घरकी हवा सम्पूर्ण रूपसे दोष-रहित हो जाती है और बाहरकी नयी हवा भी घरमें प्रवेश करती है।

खाटके नीचे अथवा घरके कोनेमें, जहाँ हवा रुकी हो, वहाँ एक चूल्हे या हांड़ीमें आग जलाकर उन सब स्थानोंमें महीनेमें एक बार धीरे-धीरे अग्निपात्रको घुमा देनेसे वहाँकी हवा शुद्ध हो जाती है।

जिनका घर ऐसा हो जहाँ मुश्किलसे हवा चलती हो, उन्हें चाहिये कि घरमें सप्ताहमें एक बार आधे घण्टेके लिये यथा सम्भव काफी ज्यादा बिना धूएंकी आग जलावें। चूल्हेको बाहर जलाकर घरमें लाना चाहिये जिससे कि उस स्थानपर धुआं न होने पावे। घरमें आग जलने पर उसमें थोड़ा घी दे देनेसे हवा बिल्कुल विशुद्ध हो जाती है। यदि इसके साथ दो-एक स्तोत्रादिका पाठ भी किया जाय, तो धर्म, अर्थ काम मोक्षकी सिद्धि भी एक ही साथ होगी।

कोई-कोई सन्ध्या समय घरके भीतर धूप-धूना आदि देकर मनमें सोचते हैं कि, घरकी हवा शुद्ध कर रहे हैं। किन्तु यह भी एक प्रकारसे औषधि प्रयोग करनेके समान ही बुद्धि है। घरमें दूषित हवाके रहनेसे किसी प्रकार धूप-धूना आदिसे हवा शुद्ध नहीं होती। घरमें बीच-बीचमें आग जलाकर घरकी हवा शुद्ध करके धूप-धूना देना लाभदायक हो सकता है।

[३]

घरकी हवाको विशुद्ध रखना जितना आवश्यक है, रोज बाहरकी निर्मल हवा ग्रहण करना भी उतना ही जरूरी है। शीतल हवासे फुसफुस अत्यन्त बलवान होता है और प्रायः फुसफुसकी सभी प्रकारकी बीमारियां शान्त होती हैं। इसी कारण रोज सवेरे एक-आध घंटा टहलनेसे यथेष्ट लाभ होता है। सवेरे सूर्योदयके समय सूर्यकी कोमल किरणोंसे शरीर सेंकनेसे सबसे अधिक लाभ होता है।

स्वस्थ शरीरके लिये जितनी शुद्ध हवाकी आवश्यकता है, अस्वस्थ शरीरके लिये इसकी आवश्यकता और भी अधिक है। जिस प्रकार लोहा गलाते समय भट्टीमें अधिक हवा देनेकी आवश्यकता होती है, उसी प्रकार प्रकृति जिस समय शरीरके भीतरी मल जलानेमें व्यस्त हो, उस समय अन्दरकी आगको प्रज्वलित रखनेके लिये प्रकृतिको यथेष्ट परिमाणमें आक्सिजन पहुंचाना आवश्यक है। रोगीके घरके दरवाजे और जंगले आदि बन्द हों, तो प्रकृतिको दहन-कार्यके लिये यथेष्ट परिमाणमें आक्सिजन नहीं मिलता। इसीलिये रोग आरोग्य होनेमें अधिक समय लगता है। रोगीके कमरेके दरवाजे तथा जंगले इस प्रकार सदा खुले रहने चाहिये कि जिससे वहां हवाका यातायात लगातार बना रहे। किन्तु सावधान रहना चाहिये कि, दमकती हवा रोगीको

न लगने पावे। रोगीकी शय्याको इस प्रकार बिछाना चाहिये कि कमरेमें तो हवा लगातार बहती रहे, पर उसके शरीरपर सीधे न लगे।

जाड़ेके दिनोंमें यदि बाहरकी हवा अच्छी न हो तो रोगीको गले तक ढककर प्रति दिन कमसे कम कुछ क्षणके लिये ही सही, घरके सारे जंगले और बरामदे खोल देने चाहिये। ऐसा करनेसे रोगीको किसी प्रकार ठण्डक लगनेका भय नहीं रहता।

जिन लोगोंको खाँसीकी बीमारी हो, उनके लिये खुली शीतल हवा अत्यन्त लाभदायक है। नियमित रूपसे सवेरे टहलनेसे सर्दी, खाँसी, हांफनी, यक्ष्मा आदि रोग भी निर्दोष भावसे आरोग्य हो सकते हैं।

इङ्गलेंडमें जब किसी युवकको यक्ष्मा होता है, तो उसके प्रथम लक्षण दिखाई देते ही वह किसी कृषि क्षेत्रमें काम करने चला जाता है। यह उसके जीवनको परिश्रमके साथ मुक्त हवा पानेका सुयोग प्रदान करता है। कुछ वर्ष तक कृषि क्षेत्रमें काम करने मात्रसे ही अनेकों रोगी प्रायः स्वस्थ हो जाते हैं।

दुनियांमें प्रायः सर्वत्र ही यह देखा जाता है कि माली, कृषक, खेती-बारीके मजदूर और जेल आदिमें जो खुली हवामें काम करते हैं, वे अत्यन्त सबल और स्वस्थ होते हैं और अन्यान्य व्यवसाइयोंकी अपेक्षा वे फुसफुसके रोगसे कम आक्रान्त होते हैं।

सभी प्रकारके फुसफुसके रोगमें शीतल और निर्मल हवा विशेष लाभदायक है। खाँसीके शुरू होते ही यदि नंगे बदन खुली हवामें टहला जाय, तो तुरत छाती ठण्डी होकर रोग जाता रहता है। हांफनी की बीमारीमें जब दम बन्द हो जाती है, तो खुली हवामें खड़े होने मात्रसे रोगी बहुत कुछ चंगा हो जाता है। परन्तु सदा शीतल पर सूखी हवा लेनी चाहिये। गर्म हवा फुसफुसको अत्यन्त दुर्बल बना देती है और यक्ष्मा रोगके आक्रमण करने लायक परिस्थिति उत्पन्न कर देती है।

बहुत लोग ठण्डक लगनेके भयसे बुखारके मरीजको हमेशा ढककर रखते हैं। रोगी जिस समय गरमीसे छटपटा रहा हो, उस समय उसे ढककर रखना अत्यन्त अनिष्टकर है। इससे भीतरकी गर्मी बाहर नहीं निकलने पाती और बहुधा यह ताप रोगीके शरीरमें बद्ध होकर उसकी मृत्युका कारण बन जाता है।

रोगी प्रत्येक दिन कमरेके कुछ जंगलोंको खुला रख उसके भीतर या बाहरकी खुली शीतल हवामें यदि यथा सम्भव १५।२० मिनट खुले बदन टहल सके, तो रोगीको यथेष्ट लाभ होता है। पर ऐसा पहले २।४ मिनट से आरम्भ करना चाहिये। हवा जितनी शीतल होगी लाभ भी उतना ही अधिक होगा। किन्तु शरीरको इस प्रकार शीतल करनेके बाद तुरत ही उसे फिर गरम कर लेना आवश्यक है। उसे गरम न कर लेनेपर लाभके बदले हानि होनेकी अधिक सम्भावना है। जिस प्रकार कि हिपबाथ आदि स्नान करनेके, बाद फिरसे शरीरको गरम कर लेना होता है, यह चिकित्सा भी उसीका एक भेदमात्र है।

सभी प्रकारके रोगोंमें स्वच्छ हवाकी नितान्त आवश्यकता होती है। सर्दी, वात रोग, टाइफाइड, हैजा, कैंसर आदि जितने रोग हैं, उन सबोंमें शुद्ध हवा पर्याप्त लाभ पहुंचाती है (Adolph Just—Return to Nature, P. 67)।

स्वास्थ्य रक्षाके लिये भी हवा एकान्त आवश्यक है। यथा सम्भव मुक्त हवामें रहा जाय और भोजनपर दृष्टि रखी जाय, तो दीर्घजीवनके लिये और किसी चीजकी आवश्यकता नहीं रहती।

चतुर्दश अध्याय

धूप-चिकित्सा

[१]

एक विख्यात डाक्टर (Dr. Aufrecht) ने एक बार नाना प्रकारके जीव-जन्तुओंमें डिप्थीरिया और यक्ष्माके जीवाणुओंको इन्जैक्ट किया। इसके बाद उनमेंसे कुछ प्रकाशमें तथा कुछ अन्धकारमें रखे गये। जिन जन्तुओंको अन्धकारमें रखा गया था, वे करीब दो दिनमें मर गये। पर जिन्हें प्रकाशमें रखा गया था, उनमेंसे देखा गया कि प्रायः सभी अच्छे हो गये (Otto Juettner, M. D., Ph. D.—Physical Therapeutic Methods, P. 190)।

सूर्यकी किरणें इसी प्रकार सभी जीवाणुओंका नाश करती हैं। जीवाणुओंके ध्वंस करनेमें सूर्यकी किरणोंके समान स्वाभाविक और कुछ भी नहीं है। आजकल पृथ्वीमें सर्वत्र यक्ष्मा, काउर (Eczema) आदि चर्म रोग, सभी तरहकी फुसफुसकी बीमारियां तथा बच्चोंके रिकेट आदि रोग सूर्यकी किरणोंकी सहायतासे अच्छे किये जाते हैं। अन्यान्य रोगोंमें भी सूर्यकी किरणोंका आश्चर्यजनक गुण देखकर डाक्टरगण विस्मित हो रहे हैं।

सूर्यकी किरणोंके समान बलकारक तथा आरोग्यवर्धक संसारमें खूब कम पदार्थ हैं।

ऋग्वेदमें लिखा है, सूर्य ही स्थावर, जंगम सबका प्रकृत जीवन है (१।११५।१)।

चौथे वेदमें सूर्यकी किरणों द्वारा रोग अच्छा होनेका वर्णन है। सूर्य नमस्कार (Sun worship) पाखण्ड नहीं है। धूपमें खड़ा होकर सूर्यके स्तोत्रके पाठकी व्यवस्था कर हमारे पूर्व पुरुषोंने धर्मके साथ-साथ स्वास्थ्यको भी एक सूत्रमें विजड़ित किया है।

'बिना सूर्यके जीवनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। चेतन या जड़ जो कुछ भी पृथ्वीपर है, उन सबकी शक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे सूर्य द्वारा ही प्राप्त होती है। जल-स्रोत्र और हवाका वेग, जीवजन्तुकी वृद्धि, कोयले और काठके जलनेकी क्षमता आदि सभी पृथ्वीपर सूर्यकी शक्तिकी विभिन्न क्रियामात्र हैं।'

जिसपर सूर्यकी किरणें पड़ती हैं, उसपर वे हितकर प्रभाव पैदा करती हैं। देखा गया है कि, जो शाक-सब्जी धूपमें पैदा होती है, वह अन्धकार में पैदा होनेवाली सब्जीसे अधिक गुणकारी होती है।

जिन गायोंको बाहर घूमने नहीं जाने दिया जाता और सारे दिन घरमें ही रखकर जिन्हें खिलाया पिलाया जाता है, उनके दूधमें पर्याप्त विटामिन नहीं होता। इसी विटामिनके अभावसे बच्चोंकी वृद्धि रुकती है और रिकेट (मस्तक वृद्धि और मेरुदण्डकी वक्रता) आदि रोग होते हैं। गायके दूधमें काफी विटामिन पैदा करनेके लिये उसे धूप और मैदानमें छोड़कर घास चरानी उचित है।

सूर्यकी किरणोंमें सबसे अधिक जरूरी चीज है—अल्ट्रा वायलेट रेज़ (Ultra violet rays)। सूर्यकी किरणोंमें जो सात रंग है, उसे यदि विभक्त करके परदेपर फेंका जाय, तो पहला रंग होगा लाल और अन्तिम बैंगनी। ये सातों रंग तो आंखोंसे देखे जाते हैं। किन्तु इनके अलावे और भी दो रंग हैं जो आंखोंसे दिखाई नहीं पड़ते। इनमें से एक तो लालसे भी पहले पड़ता है और दूसरा बैंगनीके भी पीछे पड़ता

है। अल्ट्रा वायलेट यानी beyond violet अर्थात् बैंगनी रङ्गके भी पीछेका रङ्ग। इस प्रकाशमें जीवाणुओंको ध्वंस करनेकी विशेष क्षमता है। यही विटामिनका स्वाभाविक उत्स है। खुले बदन चमड़ेपर सूर्यकी किरणोंके लगनेसे खूनमें विटामिन 'डी' सोखा जाता है। फसलके भीतर भी सूर्यकी किरणोंके पड़नेसे यह उनमें खींचा जाता है और फसल उसे अपने अन्दर रख लेती है।

सूर्यकी किरणोंमें अल्ट्रा वायलेट रेज़ सबसे अधिक सवेरे रहती हैं। इसी कारण सवेरेकी सूर्यकी किरणें जीवन दान करती हैं। सूर्योदयके समय भ्रमण करनेसे चमड़ा परिष्कृत होता है, शरीरमें काफी मात्रामें लाल रक्त उत्पन्न होता है, सारा शरीर बलवान होता है, शरीरमें रोग भगानेकी शक्ति बढ़ती है, और सारे शरीरमें नवजीवनका आविर्भाव उत्पन्न होता है (Bhavanrao Srinivasrao, Raja of Oudh—Surya Namaskars, P. 75-79)।

इसी कारण स्वास्थ्य प्राप्तिके लिये यथा सम्भव सूर्य-किरणोंको ग्रहण करना उचित है। किन्तु दोपहरके सूर्यकी किरणें हानिकर हैं। सूर्यकी किरणोंमें सबसे अधिक क्षतिकर भाग इसी समय अधिक रहता है।

घर इस प्रकार बनाना चाहिये कि सूर्यकी किरणें सदा उसमें प्रवेश करती रहें। घरके पास वृक्षादि इस प्रकार रहें कि सूर्यकी किरणोंके आनेमें बाधा न पड़ने पावे। खूब कीमती वृक्षको भी घरके पूर्वमें नहीं उगने देना चाहिये। किन्तु घरके पच्छिम बट वृक्ष लगाकर दोपहरके बादकी किरणोंमें बाधा उत्पन्न करना उत्तम है। इसी कारण गृहनिर्माण के सम्बन्धमें कहा है—'पूर्व हंस, पच्छिम बाँस'। अर्थात् घरके पूर्व तालाब आदि खुदनाकर खुला रखना चाहिये और पच्छिममें बांस लगाकर धूप और छायामें साम्य स्थापित करना चाहिये।

सूर्यकी किरणोंसे बढ़कर गन्दगीको दूर करनेवाली कम चीजें हैं। बिना सूर्यके नदीके पानीके इस प्रकार स्वच्छ रहनेकी कल्पना भी नहीं

की जा सकती। जहाँ सूर्यकी किरणें पड़ती हैं, वहांसे दुर्गन्धिका नाश हो जाता है। इसी कारण घरमें जहां गन्दगीके जमा होनेकी अधिक सम्भावना हो, वहां इसकी व्यवस्था करनी चाहिये कि सूर्यकी किरणें सदा पड़ा करें।

[२]

धूप-स्नान करनेकी विधि

स्वास्थ्य लाभके लिये सूर्यकी किरणें जिस प्रकार आवश्यक हैं, रोग चंगा करनेमें वे और भी जरूरी हैं। विशेष पद्धतिसे यदि सूर्य स्नान रोज लिया जा सके, तो इससे कितने रोग अच्छे किये जा सकते हैं। किन्तु जैसे-तैसे धूपमें घूमने मात्रसे लाभ नहीं होता। सूर्य-स्नानकी एक विशेष पद्धति है। इसी विधिसे सूर्यकी किरणोंके ग्रहण करनेसे लाभ होता है।

रोगीको सूर्यकी किरणोंमें रखते समय पहले ही उसके सारे शरीरको धूपमें नहीं रखना चाहिये और पहले ही दिन रोगीको बहुत समय तक धूपमें रखना भी नहीं चाहिये। धीरे-धीरे उसे धूपका अभ्यास कराना चाहिये।

पहले दिन रोगीके दोनों पैरोंके फीली मात्रको (feet) धूपमें सेंकना चाहिये। दूसरे दिन सारे पैर (feet and legs) को धूपमें रखना चाहिये। तीसरे दिन जंघा (thigh) तक समूचे पैरको, चौथे दिन नाभि तक नीचेके सारे अंग (abdomen) तक और पांचवें दिनसे दशवें दिनके भीतर गले तक सारे शरीर (thorax) को धूपमें रखना चाहिये। दशवें दिन रोगीके सारे शरीरको धूपमें लाया जा सकता है (E. J. O' Meara, I. M. S.—The Medical Guide for India and Index of Treatment, P. 340)।

रोगीको धूपमें रखनेके समयको धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिये। पहले दिन रोगीको पांच-पांच मिनटके बाद तीन-तीन मिनटके हिसाबसे कुल ९ मिनट तक रखना चाहिये। दूसरे दिन इसी प्रकार पांच मिनटके बाद ६ मिनट, तीसरे दिन प्रति बार ९ मिनट, इसी प्रकार हर रोज हर बार तीन-तीन मिनट करके कुल ९ मिनट तक बढ़ाकर दसवें दिनसे तीन बार आध-आध घण्टा करके प्रयोग करना चाहिये। इसी प्रकार १५ दिन तक दिनमें तीन बार सूर्यकी किरणोंको ग्रहण किया जा सकता है। इसके बाद रोगीको बर्दास्त होनेपर तथा आराम मालूम होनेपर इसी प्रकार दिनमें ४ बार धूप स्नान किया जा सकता है।

प्रत्येक बार धूप लेनेके बाद रोगीको ५ मिनटके लिये छायामें रखना चाहिये। इसके बाद एक भींगी स्वच्छ तौलियेको धूपमें सेंके स्थान विशेषको या पसीना होनेपर सारे शरीरको, शीतल या सम शीतोष्ण जलमें भिगोकर अच्छी तरहसे पोंछकर साफ कर लेना चाहिये फिर धूप लेनी चाहिये। धूप लेते समय यह कोई जरूरी नहीं कि सभी अवस्थामें रोगीको पसीना आना ही चाहिये। रोगीके शरीरके गर्म होने ही से पर्याप्त लाभ होता है।

साधारणतया रोगी जमीनपर एक चटाई बिछाकर अथवा किसी खटियेपर सूर्य-स्नान ले सकता है। खूब कमजोर रोगीको कमरेमें बिस्तरेपर सुलाकर धूप-स्नानका प्रयोग करना चाहिये। यदि घरमें शीशेका बड़ा जंगला हो तो कांचके भीतरसे भी धूप आने पर कोई हानि नहीं।

धूप लेते समय यथा सम्भव रोगीको नंगा रखना चाहिये। जब सूर्यकी किरणें चमड़ेपर पड़ें, तभी उससे सबसे अधिक लाभ होता है। यदि रोगीके शरीरपर कपड़ा देना ही हो, तो उसे अत्यन्त हल्का और जलजला होना चाहिये।

धूप-स्नान ग्रहण करते समय हमेशा सिरको धूप लगनेसे बचाना

चाहिये। जब सारे शरीरको धूपमें रखना हो, तो धूपमें जानेके पहले सिर, मुंह, गर्दन अच्छी तरह धो लेनी चाहिये। एक भींगी तौलियेसे इन सभी स्थानोंको अच्छी तरह ढक लेना चाहिये। इस तौलियेको और एक काले रङ्गके कपड़ेसे यदि ढक लिया जाय, तो बहुत अच्छा हो। भींगी तौलिया यदि सूख जाय या गर्म हो जाय, तो उसे तुरत बदलते जाना चाहिये। इसके बाद यदि सिरकी ओर एक छाता लगाकर सिर, मुंह आदि ढक लिये जायं, तो अच्छा है। मतलब यह कि ऐसी व्यवस्था रहनी परमावश्यक है जिससे कि सिर ठण्डा रहे। क्योंकि सिरमें धूप लगनेसे धूप-स्नानके बाद अप्रिय परिणाम हो सकता है (Dr. Wilhelm Winternitz—A System of Physiologic Therapeutics, Vol. IX, P. 213-215)।

हर बार धूप-स्नान ग्रहण करनेके समय एवं उसके तुरत बाद रोगीको काफी आराम मालूम पड़ता है। यदि धूप-स्नानके बाद रोगीको आलस्य, अनिद्रा आवे, सिरमें चक्कर आवे या शरीरमें उत्तेजना उत्पन्न हो, तो समझना चाहिये कि, रोगीको अधिक समय तक धूप दी गयी है अथवा नियमानुसार धूप-स्नानके नियमका पूर्णतया पालन नहीं हुआ है (A. Rollier, M. D.—Heliotherapy. P. 6-21)। ऐसा होनेसे कुछ भी लाभ नहीं होता। कारण, जबकि सूर्यकी किरणोंका यदि ठीक तौरसे प्रयोग किया जाय, तभी उचित लाभ हो सकता है। इसी कारण आरम्भमें थोड़े-थोड़े समयके लिये धूप लेनी शुरू करनी चाहिये और क्रमशः इसका समय बढ़ाते जाना चाहिये।

निर्दिष्ट समय तक धूप-स्नानके बाद रोगीके सारे शरीरको भींगी तौलियेसे पोंछकर शीतल कर लेना चाहिये और एक हिप-बाथका प्रयोग करना चाहिये। रोगी यदि कमजोर हो, तो हिपबाथके स्थानपर उसे सिज-बाथ देना उचित है। इसके बाद रोगीको नहला देना चाहिये। खूब कमजोर रोगीको स्नानके बदले शीतल घर्षण (भींगी

तौलियेसे पोंछना) करना चाहिये। धूप-स्नानके बाद यदि इस प्रकार शरीर शीतल न कर लिया जाय, तो अनिष्ट होनेकी सम्भावना रहती है। स्नानके बाद रोगीको कपड़ा पहनाकर फिर चमड़ेकी गर्मी वापस ला देनी चाहिये (Louis Kuhne—The New Science of Healing, P. 106)।

दूसरी विधिसे भी धूप-स्नान किया जा सकता है। दस दिन बाद रोगीके धूप-स्नान करनेकी आदत पड़ जानेपर एक सूखे कपड़े या अलवानसे गले तक रोगीके सारे शरीरको ढक देना होता है। इसके बाद शरीरको गरम हो जानेपर सूखे कपड़ेको हटा कर एक कपड़ेको शीतल जलमें डुबोकर और कुछ निचोड़कर कंधेसे लेकर जंघेतक ढक देना चाहिये। सिर हमेशा भींगी तौलियेसे ढका रहे और सिर तथा मुँह सदा छायामें रहने चाहिये। यदि मुँह बाहर रहे, तो नाकको बाहर रख, पर्याप्त भींगे कपड़ेसे सारे मुखको ढक लेना चाहिये। यदि धूप कड़ी हो, और रोगीको गर्मी मालूम पड़े, तो पहलेके भींगे कपड़ेके ऊपर एक और भींगा कपड़ा डाल देना चाहिये। जभी यह कपड़ा कुछ-कुछ सूखने लगे, तभी शीतल जलके छींटेसे उसे बार-बार भिंगोते रहना चाहिये। रोगी यदि चाहे, तो भींगे कपड़ेके स्थानपर भींगी मिट्टीको भी सारे अंगमें लपेटा जा सकता है। सूर्य-स्नानके बाद इस मिट्टीको साधारण गर्म जलसे (tepid water) धो डालना चाहिये (K. L. Sarma,—Practical Nature Cure, Part II, P. 40-41)।

शरीरके विभिन्न आंशिक रोगोंमें भी सूर्यकी किरणोंका निर्दिष्ट अंगमात्रमें प्रयोग न करके सारे शरीरमें प्रयोग करनेसे अधिक लाभ होता है। सूर्यकी किरणोंके सारे शरीरपर पड़नेसे शरीरके सारे यन्त्रोंकी क्षमता बढ़ती है। इससे आंशिक रोग भी अच्छा हो जाता है। तौभी असाध्य क्षत रोग आदि रोगोंसे जब शरीरका कोई एक भाग आक्रान्त

हो तो सारे शरीरमें धूप-स्नान लेनेके साथ-साथ बीच-बीचमें निर्दिष्ट अंगपर केवल सूर्य तापको ग्रहण करना चाहिये।

कमजोर रोगी हमेशा लेटकर सूर्यकी किरणोंको ग्रहण करें। सबल रोगी सिरको शीतल और भींगी तौलियेसे ढककर धूपमें घूम-टहल सकता है। चर्बीकी वृद्धिमें (Obesity) या बहुमूत्र रोगमें इस प्रकारका खेल विशेष लाभदायक होता है (Physiologic Therapeutics, Vol. IX, P. 215-216)।

जो रोगी घूम-फिर सकता हो, वह एक भींगे कपड़ेसे शरीरको ढक कर तथा सिर और मुंह विशेष प्रकारसे ढककर धूपमें टहले तो आसानीसे धूप-स्नान हो जायगा।

छोटे-छोटे लड़के-लड़कियोंको भी सिरपर भींगी तौलिया तथा शरीरमें भींगा कपड़ा पहना कर धूपमें बैठा दिया जा सकता है। जितनी बार कपड़ा सूखे उतनी बार पानीका छींटा देकर कपड़ा शीतल कर लेना चाहिये। इसके बाद उन्हें छायामें लाकर भींगी तौलियेसे शरीरको अच्छी तरहसे रगड़कर साफ कर लेना चाहिये (Practical Nature Cure, Part II, P. 42)।

[३]

विभिन्न रोगोंमें धूप-स्नानकी व्यवस्था

जिन अवस्थाओंमें वाष्प-स्नानसे लाभ होता है, उन्हीं परिस्थितियोंमें धूप-स्नान भी फायदा करता है। धूप-स्नानसे रोमकूप खुल जाते हैं और शरीरसे काफी पसीना निकलता है। सूर्यकी गर्मीसे शरीरके विजातीय दूषित पदार्थके गलकर बाहर हो जानेके कारण स्वास्थ्य अपने आप सुधर जाता है और रोग छूमन्तर हो जाता है।

जितने प्रकारकी प्रकाश-चिकित्सा हैं, उन सबोंमें सूर्यकी किरणें विशेष लाभदायक हैं। सूर्यकी किरणें केवल चमड़ेपर प्रभाव डालती हैं यह बात नहीं। ये चमड़ेके भीतर काफी अन्दर तक घुसकर अपना प्रभाव फैलाती हैं और सारे जीवकोष, आंतें, हृदय आदि सभी यन्त्रोंको उद्दीप्त करती हैं। इनके प्रभावसे शरीरके प्रत्येक यन्त्रकी काम करनेकी क्षमता बढ़ जाती है। इसी कारण नियमानुसार हर रोज सूर्यताप ग्रहण करनेसे अनेक रोग दूर हो जाते हैं।

पुराने रोगोंमें शरीरमें जीवताप आवश्यकतासे बहुत कम होता है। इसी कारण सारे तापोंके मूल कारण सूर्यसे ताप ग्रहण कर शरीरके उत्तापको बढ़ाना चाहिये।

कमजोर रोगी, अथवा जिन बच्चोंका शरीर यथेष्ट परिमाणमें वृद्धि नहीं पा रहा हो या जिन लोगोंने अपने मां बापसे ही दुर्बल शरीर पाया हो, उन लोगोंके लिये यह स्नान विशेष लाभप्रद है।

जिन रोगोंमें शरीरके विभिन्न यन्त्रोंके खूनसे पुष्टि ग्रहण करनेकी ताकत कम पड़ जाती है, उनमें धूप-स्नान विशेष फायदा पहुंचाता है। इसी कारण मेह-रोग और बहुमूत्र-रोगमें धूप-स्नान ग्रहण करना नितान्त आवश्यक है। इससे जीवकोष गठनकी क्षमता बढ़ती है। बहुत दिनोंसे अजीर्ण रोगसे आक्रान्त होनेके कारण जिनका चमड़ा शुष्क, सख्त और मुर्दा हो गया हो, यदि वे नियमानुसार रोज धूप-स्नान ग्रहण करें, तो उनके शरीरका चमड़ा फिर सिक्त, कोमल और सतेज हो जायगा। सभी प्रकारके स्नायविक कमजोरियोंमें इसके द्वारा बहुत थोड़े समयमें आराम हो जाता है। जिनका खून साफ न हो, धूप-स्नान करनेसे उनका रक्त विशुद्ध हो जायगा और उसके गुणमें वृद्धि हो जायगी (quality is improved)। रक्त शून्यतामें इसके द्वारा शरीरमें नया खून पैदा करनेवाले यन्त्र उन्नत हो जाते हैं और शरीरका विष बाहर निकल जाता है।

जिन रोगियोंका यकृत् कड़ा हो गया हो अथवा जिनके शरीरका कोई प्रधान अंग कमजोर हो गया हो, धूप-स्नानसे उन्हें आश्चर्यजनक लाभ होता है। पुराने वात रोग, ग्रन्थि प्रदह और सन्धियोंके यक्ष्मा रोग (tuberculous joint disease) भी इससे अच्छे हो जाते हैं।

किन्तु सभी रोगोंमें धूप-स्नान नहीं ग्रहण करना होता। सभी प्रकारके बुखारमें धूप-स्नान कतई मना है। किन्तु यदि थोड़ी मात्रामें ज्वर रहता हो, तो फुसफुसके रोगमें धूप-स्नान किया जा सकता है। तौभी ज्वर बने रहनेकी हालतमें यह स्नान नहीं करना चाहिये, यही इसका साधारण नियम है। जो रोगी वात व्याधि और ग्रन्थि-प्रदाह रोगसे भुगत रहे हों, उन्हें धूप-स्नानके बाद खूब अधिक ठण्डे पानी अथवा काफी देरी तक स्नान नहीं कराना चाहिये। शरीरमें घाव रहनेपर भी खूब शीतल जलमें स्नान और रगड़ कर धोना मना है। शीतल जलमें स्नान करनेके बाद देहमें मालिश करके उत्तप्त कर लेना आवश्यक है। किन्तु ये रोगी रगड़कर गर्मी लानेके बजाय किसी प्रकारके व्यायाम द्वारा शरीर गरम कर सकते हैं।

पंचदश अध्याय

—o::o—

गर्म और शीतल जलकी समस्या

प्राकृतिक चिकित्सामें कभी शरीरको गरम करना होता है और कभी शीतल ; कभी शरीरपर गरम जलका प्रयोग करना आवश्यक होता है, तो कभी शीतल जलकी आवश्यकता पड़ती है ; कभी ठण्डी मिट्टीकी पुल्टिश दी जाती है, तो कभी गरम जलमें फ्लालेन भिंगा कर सेंक देते हैं। अतएव कब गरम और कब ठण्डा प्रयोग करना होगा, यही प्राकृतिक चिकित्साकी एक श्रेष्ट समस्या है।

किन्तु आश्चर्यका विषय यही है कि, गरम जल अथवा उष्ण प्रयोगसे जो काम होता है, शीतल जलसे भी वही लाभ होता है।

गरम जलके प्रयोगसे रक्त चमड़े तक प्रसारित होता है। इससे फैले हुए रोमकूपोंके भीतरसे शरीरका विजातीय पदार्थ बाहर हो जाता है। शीतल जलके प्रयोगसे पहले खूनके भीतर चले जानेपर भी कुछ क्षण बाद रक्त उसी शीतल स्थानको गरम करनेके लिये दौड़ पड़ता है। तब संकुचित शिरायें प्रसारित हो जाती हैं और शरीरका विष दृश्य और अदृश्य रूपमें पसीना या गैसके आकारमें शरीरसे बाहर निकल जाता है। इसी कारण गरम पानीसे जो काम होता है, ठण्डे पानीसे भी ठीक वही काम होता है।

किन्तु यद्यपि शीतल जलके इस्तेमालसे गरम पानीके व्यवहारका

सारा लाभ होता है, पर गरम जलका दोष इसमें नाममात्र भी नहीं आता। ठण्डे जलके व्यवहारका फल कुछ क्षणके लिये कुछ खराब मालूम होनेपर भी, इसका परिणाम आगे सदा ही अत्यन्त लाभदायक होता है, इसके प्रतिकूल गरम पानीके प्रयोग करनेसे यद्यपि तुरत लाभ होता है, पर उसका अन्तिम परिणाम कभी-कभी अत्यन्त हानिकर होता है।

ठण्डे पानीके प्रयोग करनेसे शिरायें पहले संकुचित होती हैं और थोड़े समयके लिये खून नीचे चला जाता है। किन्तु ज्योंही शीतल जल चमड़ेपर पड़ता है, तुरत स्नायुपेशियां मस्तिष्कको टेलीफोन करती हैं,—शरीरपर शीतल वार हुआ है। मस्तिष्क तुरत उस स्थानपर खूनकी धारा भेजता है। सम्भव है, संकुचित शिराओंको ठेलकर रक्त शीघ्रतासे वहां प्रवेश नहीं कर पाता। किन्तु धीरे-धीरे रक्त फैल कर सारे चमड़ोंको खूनसे भर देता है। उस समय संकुचित शिरायें पहलेकी अपेक्षा अधिक फैल जाती हैं। नीले, रक्तहीन चमड़ेपर गुलाबी आभा झलकने लगती है, ठण्डा चमड़ा उत्तप्त हो जाता है और रोमकूप खुल जाते हैं। यह परिणाम काफी समय तक रहता है।

और गर्म जल बहुत ही कम समयमें रक्तको खींचकर ऊपर चमड़ेके पास ला देता है। किन्तु खून जितनी जल्दी आता है, उसी शीघ्रतासे वह भीतर चला भी जाता है। तब बाहरकी रक्त ले जानेवाली शिरायें पहलेकी अपेक्षा अधिक संकुचित हो जाती हैं, रोमकूप भी बन्द हो जाते हैं, चमड़ा शीतल, खून रहित और नीले रङ्गका हो जाता है तथा बाहरके चमड़ेकी हालत ऐसी हो जाती है कि, किसी भी समय ठण्डकके लगनेसे बीमारी हो जा सकती है।

इसी लिये शीतल जल स्वाभाविक रूपसे शरीरको गरम करता है, और गरम जल शरीरको ठण्डा करता है।

गरम पानीकी तरह कमजोर बनानेवाला और कुछ भी नहीं है। इससे क्षणिक लाभ तुरत होता है, पर इसका अन्तिम परिणाम प्रायः हानिकारक होता है। गर्म जलका बाहरी प्रयोग जिस प्रकार ऊपरी भागको कमजोर करता है, इसका भीतरी परिणाम भी उसी प्रकार पाकस्थली आदिको कमजोर करता है। शीतल जल जिस प्रकार बाहरी प्रयोगमें है, ठीक उसी प्रकार भीतर पीनेके लिये भी यह पृथ्वीपर सबसे अधिक बलकारक औषधि है।

शरीरमें किसी स्थानपर सूजन उत्पन्न होनेपर कोई-कोई उसे गर्म पानीसे सेंकनेकी व्यवस्था करते हैं। इससे बहुत हानि होनेकी सम्भावना रहती है। सूजनवाला स्थान अधिक समय तक सेंक देनेसे प्रायः पक जाता है। अनेकों बार डाक्टर गण आन्तों, डिम्बकोष और मोच तथा चोट लगे स्थानपर गरम सेंक देकर उस स्थानको पका देते हैं। इसके बदले यदि उन स्थानोंपर गर्म पट्टी (heating compress) का प्रयोग किया जाय, तो दर्द और सूजन दोनों मिट जायँगे। पट्टीके नीचे जो हल्की गर्मी उत्पन्न होती है वह दर्द कम करती है और पट्टीकी शीतलता सूजन कम करती है।

जल-चिकित्सामें स्टीम-बाथकी व्यवस्था है, किन्तु स्टीम-बाथके बाद ठण्डे पानीसे हिपबाथ लेने तथा स्नान करनेसे कोई भी कुपरिणाम नहीं हो सकता। गरम जलसे सेंक देनेके बाद भी सेंक किये हुए स्थानको सदा ठण्डे पानीसे धो डालना चाहिये। यदि कोई स्टीम-बाथ आदि ले और ठण्डकके भयसे स्नान आदि न करे, तो चमड़ेके छिद्र उत्तापकी प्रतिक्रियासे इस प्रकार जकड़ जाते हैं कि, रोगीकी हालत पहलेकी अपेक्षा भी खराब हो जाती है।

किन्तु शीतल जलके प्रयोग करनेकी भी एक मात्रा होती है। साधारणतया शीतल जल थोड़ी देरके लिये ही व्यवहार करना चाहिये। थोड़ी देरके लिये शीतल जलसे स्नान करनेसे अथवा अन्य किसी दूसरी

१४

विधिसे ठण्डे पानीका शरीरपर प्रयोग करनेसे, शीतकी प्रतिक्रियासे शरीरमें एक प्रकारके उद्दीपनका (stimulative effect) संचार होता है। किन्तु प्रदाह और दर्द आदिमें काफी देर तकके लिये शीतल जलका व्यवहार करना जरूरी होता है। क्योंकि उस हालतमें एक प्रकारका शान्तिकारक (sedative effect) प्रभाव उत्पन्न करना आवश्यक होता है। किन्तु काफी लम्बे समयके लिये शीतल पट्टीके व्यवहारसे भी शरीरका वह अंश सुन्न हो सकता है। इसी कारण ताजे सूजन आदिमें दो-एक घण्टे शीतल पट्टी चलानेके बाद बीच-बीचमें जरा-जरा सी देरके लिये सेंक देना आवश्यक है।

किन्तु रोगमें और स्वास्थ्यके लिये शीतल जल अत्यन्त फलप्रद होते हुए भी रोगकी किसी-किसी अवस्थामें गरम जलका व्यवहार करना आवश्यक होता है। रोगीके शरीरमें जब शीत तथा कम्प हो, उस हालतमें रोगीको कभी भी शीतल जल पीनेके लिये नहीं देना चाहिये और न उसे शीतल जलसे नहलाना ही चाहिये। उस हालतमें उसे सदा ही गरम पानी पिलाना जरूरी है और स्टीम-बाथ आदिका भी यही सर्वश्रेष्ट समय है। ठण्डके बाद जब बेचैनीके साथ 'गरम अवस्था' आती है, तब जलके उत्तापको क्रमशः कम करके रोगीको शीतल जल पिलाना चाहिये तथा दूसरे प्रकारसे व्यवहार करनेको देना चाहिये।

यद्यपि रोगकी हालतमें कभी-कभी गरम जल काममें लाया जाता है, तौभी इसका सदा ध्यान रहना चाहिये कि, रोगी यथाशीघ्र ठण्डे पानीका अभ्यस्त बन जाय; क्योंकि शीतल जलके समान जीवनी शक्तिको बढ़ानेवाला और कुछ नहीं है।

षोड़श अध्याय

उपवाससे आरोग्य

आयुर्वेदमें लिखा है, 'ज्वरादौ लंघयेत पथ्यं ज्वरान्ते लघु भोजनम्'— ज्वरके शुरूमें न खाकर तथा छूटनेपर खूब थोड़ा भोजन करना चाहिये।

आयुर्वेदमें ज्वरके सम्बन्धमें जो व्यवस्था दी गयी है, सभी प्रकारके कठिन रोगोंमें विशेष करके सभी तरुण रोगोंके सम्बन्धमें इसका विधान उचित है।

बीमार होते ही स्वाभाविक भोजनकी हमारी इच्छा जाती रहती है, क्योंकि उस समय शरीरके सभी यन्त्र शरीरके विजातीय पदार्थको दूर करनेमें व्यस्त रहते हैं। कै की हाजत, दुर्गन्धियुक्त स्वांस-प्रस्वास, गदली पेशाबका होना आदि इस बातको प्रमाणित करते हैं कि प्रकृति उस समय घरकी सफाईमें लगी है—ग्रहण करने तथा हजम करने लायक उसकी अवस्था नहीं है।

पाकस्थली तथा दोनों प्रकारकी आंतोंका भीतरी भाग स्वाभाविक अवस्थामें खाये हुए पदार्थसे रस शोषण करते हैं। किन्तु जोरदार रोगोंमें इनके इस स्वभावमें परिवर्तन हो जाता है। तब स्पंजकी तरह वह स्थान संकुचित हो जाता है और जो स्थान रस खींचता है, वह रस छोड़ने लगता हैं। उस समय वे शरीरके विकारको शरीरके नर्मदानमें डाल देते हैं। ग्रहण तथा हजम करनेका काम अधिकांशतः बन्द रहता है। इसी कारण स्वभावतः बीमारीकी हालतमें

भूखकी इच्छा नहीं होती यानी प्रकृति उस समय कुछ भोजन नहीं चाहती।

किन्तु मूर्ख प्रिय पात्रोंका दल, रोगीकी शय्याके पास आकर करुण स्वरमें कहना आरम्भ करता है,—"ओह, कुछ खाया नहीं, शरीर कैसे बचेगा!" वे लोग जोर देकर रोगीके मुंहमें पथ्य डाल देते हैं। उस हालतमें जो प्रकृति रोग निवारणमें लगी रहती है, उसे वाध्य होकर भोजन हजम करनेके लिये वापिस आना पड़ता है। पर उस समय वह अच्छी तरह पचा नहीं पाती। फलस्वरूप उस समय जो भोजन रोगीको दिया जाता है, वह उसके काम तो आता नहीं, बल्कि उसकी आंतोंमें विजातीय पदार्थकी वृद्धि करता है। इसी कारण रोगीको अधिक खिलानेसे रोगमें वृद्धि होती है और रोग अच्छा होनेके थोड़े समय बाद भी अधिक खानेको देनेसे प्रायः रोग लौट आता है।

देहातोंमें प्रायः देखा जाता है, ग्रामीण उपवास करके ही बुखार छुड़ाते हैं। रोगके आरम्भमें लम्बे उपवाससे इसी कारण रोग शीघ्र आराम होता है कि, उपवासके कारण नये विजातीय पदार्थकी वृद्धि नहीं होती और प्रकृति इस समय शरीरमें इकट्ठे दूषित पदार्थको जलाकर भस्म कर डालने तथा रोग निवारणमें सारी शक्ति लगानेका अवसर पाती है। हम लोग जो कुछ खाते हैं, स्वांसकी हवासे लिये हुए आक्सिजनके संयोगसे वह धीरे-धीरे जलकर हमारे शरीरके काम आता है। जिस समय हम लोग उपवास करते हैं, उस समय शरीरमें जो आक्सिजन लिया जाता है, वह नये खाद्य-पदार्थके अभावमें पहलेके बचे हुए खाद्य तथा शरीरके दूषित पदार्थको धीरे-धीरे भस्म कर डालता है। इसी कारण उपवासमें रोग अपने आप आराम होता है।

रोगमें लम्बे उपवाससे, यह सम्भव है कि शरीर अत्यन्त कमजोर हो जाय। किन्तु रोगसे छुटकारा पानेके बाद इससे शरीर फिर बड़ी शीघ्रतासे अच्छा होने लगता है और कभी-कभी तो ऐसा होता है कि

रोगके पहलेकी अवस्थासे भी अधिक अच्छा हो जाता है। क्योंकि बीमारी शरीरके विजातीय पदार्थको झाड़-बुहार ले जाती है।

टाइफाइड, हैजा, आमाशय और तरल भेदकी पहली अवस्थामें भोजन करनेसे भारी विपत्तिका सामना करना पड़ता है। हमारे हाथ या पैर अथवा शरीरका अन्यान्य किसी भी अंगके अस्वस्थ होनेपर हम लोग उसे विश्राम देते हैं किन्तु पेटकी कोई बीमारी होनेपर भी हम उसे विश्राम नहीं देते। इसी कारण बीमारी लम्बी हो जाती है।

ज्वर आदि रोगोंमें सचमुचकी भूख न लगनेपर रोगीको कुछ भी खानेको नहीं देना चाहिये। बिल्कुल चंगा हो जानेके बाद ही भूख फिर वापिस आती है। जो व्यक्ति उपवास करनेके बिल्कुल अनिच्छुक हों, उन्हें भी चाहिये कि साधारण रोगमें भी कमसे कम एक दिन वे कुछ न खायें।

रोगीको जब स्वाभाविक भूख लगे, उसी हालतमें उसे पथ्य ग्रहण करना चाहिये। किन्तु दिखावटी भूखको ही असली भूख समझ बैठनेकी गलती नहीं करनी चाहिये। स्वाभाविक भूख भगवानके आशीर्वाद स्वरूप उत्पन्न होती है। इसके मृदु कष्टकारक अनुभूतिसे सारा मन आनन्दसे भर जाता है। उस समय पथ्य ग्रहण करनेसे वह शरीरके बड़े ही काम आता है।

रोग दूर हो जानेपर भी बड़ी सावधानीके साथ भोजन करना चाहिये। इसके लिये सावधान रहना चाहिये कि, हठात् अधिक खानेके कारण कहीं रोग फिर वापस न लौट आवे। बड़े रोग एवं लम्बे उपवासके बाद रोगीको धीरे-धीरे भोजनका अभ्यास करना चाहिये तथा आहिस्ते-आहिस्ते पथ्य बढ़ाते हुए स्वाभाविक खाना आरम्भ करना चाहिये।

स्वस्थ व्यक्तिको भी बीच-बीचमें उपवास करना अति आवश्यक है। सात दिन परिश्रमके बाद हम लोग एक दिन छुट्टी मनाते हैं।

इससे थका शरीर तथा परिश्रान्त मन शक्ति प्राप्त करता है। कलवाले कल चलाते हैं, निर्दिष्ट समय तक मशीन चलानेके बाद वे उसे बन्द कर देते हैं। हमारी पाकस्थली भी एक प्रकारका यन्त्र है। उसे भी बीच-बीचमें आराम देना चाहिये। बीच-बीचमें आराम पानेसे पाकस्थलीकी हाजमा शक्ति बढ़ती है और इससे स्वास्थ्य अच्छा होता है।

इसी कारण हमारे महाज्ञानी पूर्व पुरुषोंने एकादशी और पूर्णिमा आदि तिथियोंको उपवासकी व्यवस्था की है। अमावस्या और पूर्णिमाको केवल एक समय उपवासकी व्यवस्था है। एकादशीको यदि कोई दोनो वक्त उपवास न कर सके, तो कमसे कम एक वक्त उपवास जरूर करना चाहिये। किन्तु रोगमें तथा यों स्वास्थ्यके लिये कभी भी निर्जला उपवास नहीं करना चाहिये। उपवासके समय हमेशा नींबूके रसके साथ काफी मात्रामें पानी पीना चाहिये। रोग या उपवासके समय प्रकृति जिस दूषित पदार्थको शरीरसे बाहर निकालना चाहती है, पानी उसे धो बहानेमें सहायता करता है।

सप्तदश अध्याय
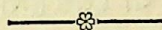
व्यायाम और मर्दन

शरीर गठनके लिये जिस प्रकार भोजन जरूरी है, व्यायाम करना भी उतना ही आवश्यक है। यह केवल मनुष्यके शरीरके लिये लाभदायक है, ऐसी बात नहीं ; सारे प्राणी मात्र यहाँ तक कि लता-वृक्ष आदिके लिये भी समान रूपसे आवश्यक है।

जीव-जन्तुको भोजनकी तलाश, क्रीड़ा, आक्रमण और आत्मरक्षाके लिये दैनिक परिश्रम करना पड़ता है। वही मिहनत उनके लिये व्यायामका काम करती है। हवा तथा वर्षामें लता-वृक्षोंका हिलना-डोलना उनके लिये एक प्रकारका व्यायाम है।

व्यायाम एक प्रकारका नाशकारी कार्य है। हम लोग जब किसी मांसपेशीको सिकोड़ते हैं, उस समय रक्तके साथ-साथ विनष्ट जीवकोष और विजातीय पदार्थ बाहर हो जाते हैं और फिर जब माँस-पेशीको फैलाते हैं, उस समय रक्त उसके भीतर शरीर गठनका नया मशाला लेकर आता है। हमारा शरीर प्रति क्षण इसी बनने बिगड़नेपर चल रहा है। मृतकोषके बाहर निकल जानेके बाद ही नये जीवकोष उस स्थानपर पनप सकते हैं। इसी कारण हम लोग देखते हैं कि काम करने वालोंकी भुजा, साइकिल चलानेवालोंके पैर और जंघे विशेष पुष्ट होते हैं। सारे शरीरके व्यायामसे सारा शरीर भी इसी भांति पुष्ट हो सकता है।

व्यायामके समय शरीरके सारे स्थानमें—भीतर और बाहर, अणु परिमाणु पर्यन्त—रक्त संचारित हो उठता है। जहां ही रक्त जाता है, वहीं नव-जीवनका संचार हो उठता है। इसी कारण व्यायामसे मुर्दा चमड़ा भी जी उठता है और शिथिल मांसपेशियां बलवान और पुष्ट हो जाती हैं। भीतरी यन्त्रादि भी इसके द्वारा समान रूपसे पुष्टि और शक्ति लाभ करते हैं। व्यायामके समय रक्त पाकस्थली, यकृत, छोटी आँतें, हृद्‌पिण्ड आदि यन्त्रोंके भीतर तेजीसे प्रवेश करता है और इन सभी अंगोंको शक्ति सम्पन्न करता है। इसी कारण नियमित व्यायामसे दुर्बल पाकस्थली बलवान होती है, दुर्बल यकृत काम करने लायक हो जाता है, हृद्‌पिण्ड मजबूत होता तथा छोटी आंतोंकी पुष्टि ग्रहण करनेकी क्षमता बढ़ती है।

व्यायामके सम्बन्धमें सुश्रुत-संहितामें लिखा है,—'व्यायामसे पूर्ण आरोग्य लाभ होता है। व्यायाम करनेसे विरुद्ध भोजन भी सह्य होता है'।

कितना व्यायाम करना होगा तथा अधिक कसरतसे क्या हानि होती है—इस सम्बन्धमें भी सुश्रुतने कहा है,—'आत्महितैषी लोग सभी ऋतुओंमें हर रोज यथाशक्ति कसरत किया करें, किन्तु अधिक परिश्रम करनेसे बलकी हानि होती है' (चिकित्सित् स्थानम् २४।२३।२७)।

पहले खूब हल्का व्यायाम करके धीरे-धीरे इसकी मात्रा बढ़ानी चाहिये। कमजोर आदमी पहले दो-तीन दण्ड करके पांच-छः बैठक लगावें। इसके बाद क्रमशः अभ्यास होनेपर धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाते जाना चाहिये। कहावत है,—'यदि शुरूसे रोज बछड़ेको उठानेका अभ्यास किया जाय, तो अन्तमें आदमी बैलको उठा सकता है।' व्यायाम करते-करते शरीर अधिक शक्ति सम्पन्न होता है। इस प्रकार तीन-चार महीनेके बाद काफी देर तक तथा कठिन परिश्रम करना सम्भव हो जाता है। पहले ही काफी दण्ड करने या पहले

ही अत्यन्त भारी बोझ उठानेकी चेष्टा करनेसे यक्ष्मा रोग तक हो सकता है।

बलवान पुरुष भी प्रति दिनकी कसरत खूब कमती दण्डोंसे आरम्भ करें और कठिन व्यायामके बाद फिर हलका व्यायाम करके व्यायामको समाप्त करें। व्यायाम खूब जल्दी-जल्दी तथा खूब धीरे-धीरे नहीं करना चाहिये।

थक जानेपर कसरत बन्द कर देनी चाहिये। अधिक कसरत तो कभी करनी ही नहीं चाहिये। कसरत इस प्रकारसे करनी चाहिये कि व्यायामके बाद शरीरमें नया बल आवे। कभी ऐसा न होने पावे कि कसरतके बाद दुर्बलता या थकान मालूम हो। अधिक व्यायाम करनेसे क्षय, तृष्णा, अरुचि, कै, खांसी श्वाँस रोग तथा ज्वर हो सकता है (सुश्रुत)।'

भोजनके बाद डेढ़-दो घण्टे तक किसी प्रकारका कड़ा परिश्रम नहीं करना चाहिये। व्यायाम करके तुरत भोजन करने बैठना भी ठीक नहीं। शरीरके शान्त होनेपर, कमसे कम १५ मिनट विश्राम करनेके बाद जब शरीर ठण्डा हो, तब खाना चाहिये।

कसरत यथासम्भव खुली हवामें होनी चाहिये। जितनी खुली जगह होगी उतनी ही अधिक आक्सिजन शरीरमें प्रवेश करेगी। बाहर कसरत करनेकी सुविधा न रहनेपर घरके सारे जंगलों तथा दरवाजेको खोलकर कसरत करनी चाहिये। कसरत करते समय इस बातका ख्याल रखना चाहिये जिससे कि, सारे शरीर खासकर तलपेट (पेड़ू) की मांसपेशियोंको मिहनत पड़े।

किन्तु कैंसर, यक्ष्मा, हृद्रोग, हँफनी, मृगी आदि कठिन रोगोंसे भुगतने वालोंको कभी भी परिश्रमसाध्य कसरत नहीं करनी चाहिये। रोगीको सभी प्रकारकी कसरतका परित्याग करना चाहिये। विश्राम करना ही रोगकी प्रधान चिकित्सा है। वे लोग केवल सुबह शाम खुली हवामें टहल सकते हैं। यही उनके लिये सर्वश्रेष्ठ व्यायाम है।

जिनके लिये व्यायाम करना सम्भव नहीं, वे मालिश कराके कसरत करनेके अधिकांश लाभको प्राप्त कर सकते हैं।

शरीरके किसी भी भागकी मालिश करनेसे वह स्थान लाल तथा गरम हो जाता है। इसका यही अर्थ है कि उस स्थानपर खून जमा हो रहा है। जब वहां रक्त जायगा, तो वह उस स्थानपर अपने साथ नवजीवन लिये जाता है, तथा वापिस आते समय रास्तेमें विनष्ट जीवकोषको लेते जाता है। इसी कारण इससे कसरतका अधिकांश लाभ हो जाता है।

यदि स्नानके पहले तेलकी मालिश की जाय, तो इससे लाभका ठिकाना नहीं। यदि रोज विशुद्ध सरसोंके तेलसे मालिश की जाय, तो शरीर बहुत शीघ्र पुष्टि प्राप्त करता है। जिस प्रकार खाया हुआ भोजन शरीरके काम आता है, ठीक उसी प्रकार चमड़ेकी मालिश भी शरीरके काम आती है। जिन कमजोर आदमियोंको अजीर्ण रोग हो, उनको काडलिवर आयल खानेसे लाभ नहीं हो सकता। किन्तु शरीरकी मालिश करनेसे प्रायः उतना ही फायदा होता है; कभी-कभी तो अधिक लाभ होता है। इसी कारण आयुर्वेदमें लिखा है,—'घृतात् अष्ट गुणं तैलं, मर्दनात् नतु भोजनात्'—तेल घीसे आठ गुणा अधिक फायदेमन्द है, पर खानेसे यह लाभ नहीं होगा; बल्कि मालिश करनेसे होगा।

छोटे-छोटे बच्चोंका शरीर तेलसे अच्छी तरह मालिश कर सूखी मिट्टीपर यदि उन्हें धूपमें लिटा दिया जाय तो, उनका शरीर आश्चर्यजनक रीतिसे उन्नति लाभ करता है। एक समय मेरी बहनके दो जुड़वे सन्तान हुई। पैदा होते समय वे दोनों इतने कमजोर और छोटे थे कि, ऐसे छोटे बच्चोंको देखकर लोगोंको आश्चर्य होता। किसीको भी यह उम्मीद न थी कि वे बचेंगे। तब किसी भद्र महिलासे सुनकर मेरी बहन बच्चोंको काफी मात्रामें तेलकी मालिश करने लगी। तेल मालिशके

बाद वे उन्हें धूपमें डाल देतीं। इस प्रकार तीन महीने तक तेलकी मालिशके बाद वे स्वस्थ बच्चोंकी तरह सबल और मोटे हो गये।

तेल मालिश करनेका सर्वश्रेष्ठ समय है जाड़ेका दिन। गर्मीमें भी सवेरे तेल मालिश किया जा सकता है। सरसोंके तेलसे भी अधिक फायदा काडलिवर आयलसे होता है। कमजोर व्यक्ति तथा दुर्बल बच्चोंको काडलिवर आयलकी मालिश करनेसे आश्चर्यजनक फायदा होता है।

मर्दनके सम्बन्धमें सुश्रुतमें लिखा है,—कसरतके बाद सारे शरीरकी मालिश करनी चाहिये। इससे शरीरकी कांति बढ़ती है, शरीरमें मजबूती तथा रौनक आती है, मिहनत, प्यास तथा जाड़ा-गर्मी सहनेकी क्षमता बढ़ती है और जठराग्निकी तेजी बढ़ती है (चिकित्सित् स्थानम् २४।२३—२७)।'

मालिश हमेशा धीरे-धीरे काफी देर तक करनी चाहिये। इससे चमड़ोंमें खून आता है, नाड़ी शक्ति सम्पन्न होती है तथा उसकी रफ्तार बढ़ती है और स्वांस-प्रस्वांस गम्भीर तथा अपेक्षाकृत कम होता है। मालिशसे चमड़ोंकी काम करनेकी ताकत बढ़ती है तथा सूखा चमड़ा कोमल और चिकना होता है। पर यदि जोरसे मालिश की जायगी, तो इससे हृद्पिण्ड कमजोर होगा, स्वांसका कष्ट बढ़ेगा तथा पेशाबसे ऐलबूमिन (albumin) निकलेगा।

अष्टादश अध्याय

——०::०——

स्वास्थ्य किस ओर ?

सुश्रुतने कहा है,—'आयुर्वेदके प्रयोजन हैं दो—रोगीको रोगसे छुटकारा दिलाना और स्वस्थ पुरुषकी स्वास्थ्य रक्षा (सूत्र स्थानम् १।१२)। अंग्रेजीमें कहावत है,—'बीमारीसे चंगा करनेकी अपेक्षा ऐसा उपाय करना बेहतर है जिससे कि रोग ही न हो। असुख (बीमारी) का माने है—न सुख, जिस प्रकार disease = dis-ease—want of ease। इसी कारण अस्वस्थ न रहनेका ही अर्थ स्वस्थ रहना है। किन्तु पृथ्वीपर जिस प्रकार सभी चीजोंको अर्जन करना होता है, स्वास्थ्य भी उसी प्रकार अर्जन करना पड़ता है—औषधिके बोतलसे यह प्राप्त नहीं किया जा सकता।

स्वास्थ्य-रक्षाके लिये अत्यन्त नियमित जीवन बिताना आवश्यक होता है। खूब तड़के सवेरे बिस्तरसे उठ जाना स्वास्थ्य रक्षाके लिये अत्यन्त आवश्यक है। खूब तड़के उठनेसे दिन किस प्रकार बीतता है, इसकी परीक्षा स्वयं कुछ दिन सवेरे उठ कर देखें। सूर्योदयसे १ घण्टेसे लेकर १ घण्टा ४५ मिनटके भीतर भगवानका नाम लेकर बिस्तरसे उठ खड़ा होना चाहिये।

बिस्तरसे उठते ही शीतल जलसे आंख धोकर पाखाना जाना चाहिये। वेग न होनेपर भी नियमित समयपर पाखाना अवश्य जाना उचित है। प्रति दिन यदि नियमित समयपर पाखाना जानेका अभ्यास

किया जाय, तो निर्दिष्ट समयपर उसका वेग अपने आप आयेगा। जिन लोगोंका कोष्ट किसी भी प्रकार साफ न रहता हो, उन्हें चाहिये कि बन्द पाखानेमें न जाकर पेड़ के नीचे एक गमछा पहनकर खुले बदन जंगलमें पाखाना फिरने बैठें। ग्रामीण लोग तो इसे आसानीसे कर सकते हैं। ऐसा करनेसे कठिनसे कठिन कोष्टबद्धताके रोगीको भी आश्चर्यजनक लाभ होगा।

पेट साफ रखने तथा मुखकी दुर्गन्धिको दूर करनेके लिये नियमित रूपसे दांत धोना आवश्यक है। मिट्टी रहते दांत धोते समय और किसी चीजके व्यवहार करनेकी आवश्यकता नहीं। बाजारके पाउडर तथा पेष्टोंमें इस प्रकारकी दवाइयां रहती हैं, कि वे दांतके सूक्ष्म अंशको रसायनिक क्रिया द्वारा जबर्दस्ती मैलके साथ खींच लाती हैं। इससे दांत साफ होनेपर भी दांत क्रमशः कमजोर होते जाते हैं तथा बुढ़ापेके पहले ही दांत गिर पड़ते हैं। निखालिस धूसरी मिट्टीके व्यवहार करनेसे दांतोंपर किसी प्रकारकी भी रसायनिक क्रिया नहीं होने पाती। बालूके सूक्ष्म कण दांतके भीतर प्रवेश कर उनकी सारी गन्दगीको बाहर निकाल लाते हैं। इस गन्दगीके अभावमें दांतके कीड़े वहां अपना अड्डा नहीं बना सकते। इसी कारण बालू मिली मिट्टीके व्यवहार करनेसे दांत बहुत दिनों तक ठीक बने रहते हैं।

यदि कोई चाहे तो, मिट्टीसे दाँत मलते समय अच्छे कड़े ब्रशका व्यवहार कर सकता है; पर इसे सदा याद रखना चाहिये कि गन्दा ब्रश और मेहतरके झाड़ूमें कोई अन्तर नहीं है। अतएव सप्ताहमें कमसे कम दो बार अच्छी तरहसे ब्रशको साफ कर लेना आवश्यक है। कोई-कोई ब्रशको गरम पानीसे धो डालते हैं; परन्तु पूरे १०।१५ मि० तक खौलते पानीमें ब्रश नहीं रखनेसे वह शुद्ध (sterilised) नहीं होता। इन सब बखेड़ोंको न कर यदि तीन-तीन चार-चार दिन बाद थोड़ासा नमक ब्रशके ऊपर सारी रात रहने दिया जाय तो ब्रश निर्दोष हो जाता है।

ब्रशका इस्तेमाल करनेके बाद उसके जलको झाड़ कर गिरा देना चाहिये फिर उसे खुली जगहमें रख देना उचित है। जो दिन रातमें केवल एक बार ब्रशका व्यवहार करते हों, उन्हें चाहिये कि रातमें खाना खानेके बाद ब्रशका इस्तेमाल करें। ऐसा करनेसे किसी प्रकारकी गन्दगी दांतोंमें नहीं रहने पाती।

दांत साफ करनेके बाद ही कसरत और मालिश करना उचित है और उसके बाद स्नान कर लेना चाहिये। मर्दन करनेसे शरीरमें जो गर्मी आती है, उस गर्मीके रहते-रहते सवेरे स्नान करनेसे बड़ा लाभ होता है। स्नान करके आनेके बाद ही शरीरको गरम कपड़े आदिसे पोंछकर फिर गरम कर लेना चाहिये। इसके बाद अपने विश्वासके अनुसार कुछ समय तक ईश्वरोपासनादिमें व्यतीत करना चाहिये।

शरीरके लिये जिस प्रकार कसरत जरूरी है, उसी प्रकार मनके लिये भी इसकी आवश्यकता पड़ती है। मनको भगवानके चरणोंमें केन्द्रित करनेकी चेष्टा करना ही मानसिक व्यायाम है। लगातारके इस प्रकारके प्रयत्नसे ही मन निश्चल होता है। इसी चेष्टाका नाम साधना है।

मन जितना ही संयत रहता है, उसकी शक्ति उतनी ही बढ़ती है और आत्मानन्दसे जीवन उतना ही मधुर हो उठता है। शरीरके साथ मनका अविच्छिन्न सम्बन्ध होनेके कारण चित्तके संयमित रहनेपर कमजोर शरीरमें भी मस्त हाथी-सा बल हो सकता है।

आन्हिक समाप्त कर हरेक आदमीको चाहिये कि खुली हवामें यथा सम्भव भ्रमण करें। टहल कर लौटते समय सूर्योदय हो, तभी टहलना सार्थक होता है।

घर आकर एक ग्लास शीतल जल पीना चाहिये। यह जल जब शरीरसे बाहर निकल जाय, तब बहुत थोड़ी मात्रामें कुछ खाया जा सकता है। जिन्हें कोष्टवद्धता रोग हो, उन्हें फल वगैरह कुछ ऐसी चीजें खानी चाहिये, जिससे कोष्ट शुद्धिमें सहायता मिले। सवेरे अधिक कुछ खा लेनेसे दस-ग्यारह बजे तक वह हजम नहीं हो सकता और एक भोजनके पचनेके पहले ही दूसरा भोजन पाकस्थलीमें आकर अनेक गड़बड़ी मचा देता है। जो रोगी हों या अस्वस्थ रहते हों, उन्हें तो भोरमें भोजन ही नहीं करना चाहिये। इसीसे वे रोग चंगा कर सकते हैं।

सवेरे तथा तीसरे पहरके जलपानके समय और चाहे जो भी खाया जाय, चाय और बिस्कुट न खाना ही अच्छा है। इनसे बढ़कर पेटकी बीमारी उत्पन्न करनेवाला और कुछ नहीं। चायके भीतर 'टानिक एसिड', 'कालफिन' आदि विष होते हैं। इनसे कोष्टवद्धता होती है। गरम पानी क्षण भरके लिये जीवनी शक्तिको उद्दीप्त करता है सही, पर इसकी प्रतिक्रियासे परिपाक यन्त्र अत्यन्त कमजोर हो जाते हैं। चायके दोषोंका वर्णन करनेसे एक लम्बी तालिका हो जायगी ; किन्तु एक बार किसी समाचार पत्रमें इसकी उपकारिताके सम्बन्धमें पढ़ा था। अखबार खोलकर देखा, एक स्थानपर लिखा था,—चाय पीनेसे लाभ। आश्चर्यित होकर मैंने समाचार पढ़ा,—एक भद्र पुरुषके घरमें चोर घुसे। उस समय रातके दो बजे थे। किन्तु गृहस्वामी पुराने चाय पीनेवाले थे, इस कारण जगे थे। ज्योंही चोरने घरमें घुसकर सन्दूकपर हाथ लगाया, कि उन्होंने चोरको पकड़ते हुए कहा—'जानते नहीं बच्चू कि मैं चाय पीता हूं।'

सवेरे स्नान करनेसे दोपहरको स्नान करनेकी कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। परन्तु रोज निश्चित समयपर भोजन करना आवश्यक है। भोजन यथासम्भव पुष्टिकर तो होना ही चाहिये, पर ऐसा न हो,

जो जल्दी न पचे। शहरके लोग भोजन करते ही आफिसको दौड़ पड़ते हैं। यह बहुत हानिकर है। भोजन करनेके बाद कमसे कम आधे घण्टे आराम किये बिना कहीं नहीं जाना चाहिये।

'खाकर उठके दौड़ा जाये, उसके पीछे मृत्यु धाये'। जिन्हें सवेरे आफिस जाना हो, उन्हें चाहिये कि वे उससे भी आध घण्टा पहले भोजन करें जिससे कि खाकर ही उन्हें दौड़े आफिस न जाना पड़े।

दिनमें सोना साधारणतया अच्छा नहीं है। गर्मीके दिनोंको छोड़कर और मौसमोंमें दिनमें सोनेसे काफी कष्ट हो सकता है। किन्तु गर्मीके दिनोंमें दोपहरको थोड़ी देरके लिये सोना बुरा नहीं। कभी-कभी तो केवल पन्द्रह मिनट आराम कर लेने मात्रसे काम करनेकी क्षमता बढ़ जाती है और शरीरमें बल लौट आता है।

दिनके प्रधान भोजनके बाद तथा रातके खानेके पहले यदि कुछ खाना हो तो इस बातका ध्यान रहना चाहिये कि दिनके भोजनके बाद कमसे कम उसमें चार-पांच घण्टेका अन्तर हो। दोपहरके बादका भोजन यथा सम्भव हल्का होना चाहिये। नियमित दोनों वक्तके भोजनके बीचमें किसीके भी अनुरोधपर मुंहमें कुछ नहीं डालना चाहिये।

दोपहरके कामके बाद किसीको घरमें नहीं बैठना चाहिये। उस समय खुली हवामें टहलना या किसी प्रकारका खेल खेलना उत्तम है। सुविधानुसार भ्रमणके पहले या पीछे अवश्य सन्ध्याको स्नान कर लेना चाहिये।

रातमें खूब जल्दी भोजन समाप्त कर लेना चाहिये। क्योंकि खाये हुए अन्नके पचनेके पहले सो जानेसे वह ठीक तरहसे हजम नहीं हो पाता।

भोजन ही की तरह सोनेका भी निश्चित समय होना चाहिये। एक महीनेके बच्चेको रोज १८ से २० घण्टे तक सोना चाहिये। एक वर्ष तकके बच्चेको कमसे १६ घण्टा सोना आवश्यक है। दो वर्ष तककी उम्र तक १२ घण्टा सोना जरूरी है। बच्चोंको ६ से १० घण्टे तक सोना उचित है तथा वयस्क लोगोंको रोज ८ घण्टे सोना चाहिये।

सोते समय खूब शान्त मनसे सोना चाहिये। गम्भीर नींदके समान शरीरका गठन करनेवाला तथा जीवनी शक्तिकी वृद्धि करनेवाला और कुछ भी नहीं है। रोजाना काम करनेके कारण जो हमारी जीवनी शक्तिका ह्रास होता है वह केवल मात्र गहरी नींदसे ही पूरा हो सकता है। नींदके समय हमारे शरीरके रक्त-कण गठित होते हैं। इसी कारण रात भर जगनेके बाद वह व्यक्ति मुर्भाया हुआ दिखाई पड़ता है। इन्हीं कारणोंसे एक रात न सोनेसे शरीरकी जो क्षति होती है वह किसी प्रकारके भोजन या पेयसे पूर्ण नहीं हो सकती। इसलिये सोये हुए आदमीको जगाना हमारे देशमें पाप गिना जाता है। घरमें आग लगने जैसी विपद् आनेपर ही सोये व्यक्तिको जगाया जा सकता है, अन्यथा नहीं।

स्वास्थ्य रक्षाके सम्बन्धमें चरकने कुछ आवश्यक बातें बताई हैं। बात है तो साधारण-सी, पर उससे लाभ बहुत ही अधिक है। चरकने कहा है,—'सदा प्रसन्न चित्त रहो। थकावट आनेके पहले ही काम छोड़ दो। बहुनिद्रा, अधिक जागरण, बहुत स्नान, ज्यादा खाना-पीना मत करो। नहाकर भींगे वस्त्र मत पहनो। मल आदिका वेग होनेपर उसे त्याग किये बिना कोई भी काम मत करो तथा, प्रकृतिमभिद्यंस्मरेत—सदा प्रकृतिका अनुसरण करो। जो लोग स्वास्थ्य-रक्षाके इन नियमोंको यथासम्भव पालन करेंगे, वे निरोग रहते हुए सौ वर्ष तक जीवित रहेंगे (सूत्रस्थानम् ८।१०-२५)।

स्वास्थ्य-रक्षाका प्रधान उपाय प्रकृतिका अनुसरण करना है। प्रकृतिने जिस अंगको जिस कामके लिये बनाया है उसे उसी कार्यमें लगाना चाहिये। दांतके कामको पाकस्थलीसे कराना तथा नाकके कामको मुँहसे लेना, ये दोनों काम प्रकृतिके विरुद्ध अपराध हैं। जो लोग मुँहसे श्वास लेते हैं साधारणतया वे लोग अल्पायु होते हैं। मुंहसे कभी भी सांस न लेकर नाकसे लेनी चाहिये।

सदा साफ सुथरा रहना चाहिये। Cleanliness is next to godliness। पवित्रता आर्यत्वका प्रधान लक्षण है। पर जो चीज जितनी ही अच्छी होती है, उसकी विकृति उतनी ही खराब होती है। आज यही पवित्रता विकृत होकर भारतके नाभिश्वासकी सृष्टि करनेका उपक्रम कर रहा है।

छाड़ी, गन्दा, दुर्गन्धियुक्त कपड़ा कभी नहीं पहनना चाहिये। स्वच्छ कपड़ा पहनना विलासिता नहीं है। जाड़ेके दिनोंको छोड़कर और दिनोंमें सदा खूब हल्का वस्त्र पहनना चाहिये। ऐसा करनेसे चमड़ा अपना कार्य सुचारु रूपसे सम्पादित करता है। इसका सदा ध्यान रहना चाहिये कि यथा सम्भव शरीरको धूप तथा हवा लगनेका मौका मिलता रहे।

परिश्रम करनेके बाद ही विश्राम करना आवश्यक है। परिश्रमके बाद आराम करनेसे खोई हुई शक्ति फिर वापस चली आती है। तब फिर परिश्रम किया जा सकता है। मिहनतके बाद फिर परिश्रम करनेसे शरीर अत्यन्त क्षीण होता जाता है।

खूब उत्तेजित होकर भी कभी कोई काम नहीं करना चाहिये। उद्वेग हमेशा मना है। जीवनमें रंचमात्र भी उत्तेजना नहीं रहने पावे। जीवनस्रोत्रकी गति मन्दाक्रान्त भावसे प्रवाहित होनी चाहिये। पर उसमें आलस्यको भी स्थान नहीं मिलना चाहिये। लोहेकी मशीनके लिये जिस प्रकार जंक लगना घातक है, ठीक उसी प्रकार हमारे शरीरके

यन्त्रोंके लिये आलस्य भी नाशकारी है। काम सदा करना होगा, पर किसी प्रकारकी उत्तेजना या उद्वेग रहित होकर। यही कर्मका कौशल है।

इस बातको भी याद रखना चाहिये कि, दिन काम करनेके लिये तथा रात्रि विश्रामके लिये है। विद्यार्थीको छोड़कर और किसीके लिये भी रात्रिमें काम करना उचित नहीं। अधिक रात तक जगकर काम करना सभीके लिये सख्त मना है।

सदा प्रफुल्लित तथा आशावादी बने रहना चाहिये। मानसिक प्रसन्नता स्वास्थ्यको बनाती है। हँसनेके मौकेको कभी भी नहीं छोड़ना चाहिये। इस उल्लासके साथ हंसना चाहिये कि उससे जूतेका सुखतल्ला तक स्पन्दित हो उठे। हँसनेकी क्षमता एक महान गुण है। जो लोग खूब खिलखिलाकर हँस सकते हैं, उनके अन्दर विस्तृत मैदानकी तरह सुविस्तृत एवं उदार होगा।

फ्रांसके एक डाक्टर (Dr. Pierre Vachet) ने एक नये ढंगका चिकित्सालय (The Institute of Psychology) खोला है। उसमें निश्चित समयपर अस्पतालके सभी रोगियोंको एक बड़े हालमें इकट्ठा होना होता है। सभीके आ जानेपर एक साथ एक स्वरमें सब यही कहकर चिल्ला उठते हैं—'मेरा रोग छूट गया, मैं चंगा हो गया, मेरे शरीरमें शक्ति आ गयी।' इसके बाद उन्हें हँसनेको कहा जाता है। सभी उसी समय खिलखिला कर हँस पड़ते हैं। इससे उनके रक्तके भीतर एक प्रकारकी जीवनी शक्तिका स्रोत्र खुल उठता है और इसके बाद वे अपनेको बहुत कुछ चंगा अनुभव करने लगते हैं। इस अस्पतालमें रोगियोंको प्रसन्न चित्त रखना ही प्रधान चिकित्सा है (The Indian Naturopathy, Jan., 1936, P. 9)।

एक दिन मैं अपने एक मित्रके घर गया था। शामको बैठकर हम लोगोंके साथ वे बातें कर रहे थे। हठात् वे कह उठे,—'अरे आज तो

बच्चेको हंसाया ही नहीं' और तुरत उठकर बच्चेको उठा लाये। नाना प्रकारकी भावभंगीसे उसको कुछ समय तक हंसाकर उसे फिर रख आये। मैं यह देखकर मुग्ध हो गया।

सभी प्रकारसे भयको भी दूर रखना चाहिये। भयके कारण क्षण भरमें कोई भी कठिन बीमारी उत्पन्न हो सकती है। बिमारी फारसी भाषाका शब्द है। बिम माने डर तथा अरि माने लाया हुआ यानी जो भयसे पैदा हो उसीको बीमारी कहते हैं।

भयके कारण ही बहुधा शरीरमें रोगके फैलनेकी अनुकूल स्थिति पैदा हो जाती है। इसी कारण हमारे देशमें हैजा आदिके फैलते ही हरिकीर्तन आदिकी व्यवस्था की जाती है।

बीमार पड़नेपर कभी भी डरना या घबड़ाना नहीं चाहिये। विश्वास रखना चाहिये कि रोग शीघ्र अच्छा हो जायेगा। विश्वाससे जीवनी शक्तिकी वृद्धि होती है तथा डर आरोग्यताकी गतिरोध करता है।

आनन्दके साथ रहना चाहिये, किन्तु उच्छृङ्खलताको पास फटकने नहीं देना चाहिये। क्षणिक सुखकी आशामें शरीरकी सर्वश्रेष्ट सम्पदाको नष्ट नहीं करना चाहिये। वीर्य ही शरीरमें अधिकांश जीवनी शक्ति है। इसी वीर्यकी रक्षा करनेसे असाध्य साधन हो सकता है। पर जोर लगाकर कोई भी इसकी रक्षा नहीं कर सकता। ईश्वरकी उपासना करना तथा निस्वार्थ भावसे परोपकार करना वीर्य रक्षाके सर्वश्रेष्ट उपाय है। मनको किसी महान कार्य एवं उद्देश्यमें इस प्रकार लगाना चाहिये कि, उसी कामके आनन्दमें मन अपने आप भोग विलासकी भावनासे ऊंचा उठे। मनपर विजय पानेका यही प्रधान मार्ग है।

विवाहके पहले वीर्यकी रक्षा करना परमावश्यक है। विवाहके बाद भी यथेच्छाचार नहीं करना चाहिये। जो स्वेच्छासे जितना

संयमका पालन कर सके, उसकी आयु उतनी ही लम्बी होगी। रोगमें या रोगके अच्छा होते समय कठिन इन्द्रियनिग्रह रखना चाहिये। रोगकी हालतमें इन्द्रिय सुख अन्वेषण करनेसे शरीरके सारे यन्त्र इस प्रकार कमजोर हो जाते हैं कि, रोग छूटने तथा स्वास्थ्य प्राप्त करनेमें बहुत बिलम्ब होता है—अनेकों बार तो स्वास्थ्य फिर वापिस आता ही नहीं।

बुरे विचार तो किसी भी प्रकार नहीं लाना चाहिये। कुविचार और बुरे काममें बहुत थोड़ा अन्तर है। कुचिन्ता मनके अणु परमाणुको विषाक्त कर डालती है। कुविचारका त्याग करके ही मनुष्य बुरे कामोंके करनेसे वंचित रह सकता है।

चरक और सुश्रुत पढ़नेपर यह देखकर आश्चर्य होता है कि उनमें कितना नीति धर्म है।

चरकने कहा है, बुद्धिमान आदमीको लोभ, शोक, भय, क्रोध, अभिमान, निर्लज्जता, ईर्ष्या, परधन-लोलुपता, कर्कश मिथ्या और असमयोपयोगी बातें और चोर प्रवृत्तिको रोकना चाहिये (सूत्रस्थानम् ६।२३)। हमेशा प्रसन्न चित्त रहो, जिस कारणसे किसीकी उन्नति हुई हो, उस कारणके प्रति तो स्पर्धा हो, पर उस कारणके फलके प्रति ईर्ष्या नहीं होनी चाहिये ; निश्चिन्त, निर्भीक, उत्साही, क्षमाशील, धार्मिक तथा आस्तिक बनो ; सभी प्राणीके प्रति बन्धुभाव स्थापित करो ; पराई स्त्रीकी कामना मत करो और न परस्त्रीगामी बनो ; स्वजनोंके साथ निवास करो और अकेले सुखभोग मत करो (सूत्रस्थानम् ८।१०-१२)। जीवनका मूल हितोपचार है एवं उसके विपरीत है मृत्युका कारण (विमान स्थानम्, ३।४१)।

शरीर और मनका परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है। शरीरको चंगा रखनेके लिये मनको भी स्वस्थ रखना चाहिये तथा मनको स्वस्थ रखनेके

लिये शरीरको भी स्वस्थ रखना आवश्यक है। जिस मार्गके अनुसरणसे मन स्वस्थ रहेगा, वही मार्ग शरीरके लिये भी लाभप्रद है। इसी प्रकार शरीरको स्वस्थ रखनेकी चेष्टा भी एक प्रकारकी साधना है अथवा वही है साधनाकी भीत्ति। शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्।

यों प्राकृतिक चिकित्साका पहला अध्याय स्वास्थ्य-नीति है, उसीका अन्तिम अध्याय आध्यात्मिकता है।

समाप्त

विस्तृत विषय सूची

—oo—

विषय		पृष्ठ संख्या

चिकित्साके सम्बन्धमें उपदेश लेनेके नियम

नीचे लिखे पतेपर कोई भी व्यक्ति चिट्ठी-पत्री द्वारा या मुझसे मुलाकात करके चिकित्साके सम्बन्धमें सलाह ले सकता है। चिट्ठी भेजने वालोंको चाहिये कि रोगका पूरा व्योरेवार विवरण अंग्रेजीमें लिखें। रोगका नाम, कितने दिनोंसे रोग हुआ है, रोगी कमजोर है या सबल, उसका कोष्ट परिष्कार होता है या नहीं, पसीना और पेशाब कैसा होता है, हाजमा कैसा है, रोगीकी उम्र कितनी है—आदि साफ-साफ लिखना चाहिये। इस स्थानपर रोगियोंकी चिकित्सा करनेकी भी व्यवस्था है। बाहरके रोगियोंको आनेके पहले पत्र-व्यवहार कर लेना चाहिये। मुफसिलमें इलाजके लिये हमारी जरूरत हो तो, पत्र लिखकर हमें बुला सकते हैं।

श्रीकुलरंजन मुखोपाध्याय,

वैज्ञानिक जल-चिकित्सालय,

११४।२ बो, हाजरा रोड, कालीघाट, कलकत्ता

[हरिस मुखर्जी रोडका संगम]